वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 27
ISBN 978-81-906607-9-2

इंद्रध्वज विधान

–रचयित्री–
जम्बूद्वीप रचना की पावन प्रेरिका, इंद्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र,
तीनलोक, विश्वशांति महावीर आदि विधानों की रचयित्री
चारित्रचंद्रिका, गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

शरदपूर्णिमा महोत्सव, 11 अक्टूबर 2011 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में
पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा घोषित
''प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर वर्ष'' के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-
दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com

अट्ठारहवाँ संस्करण	वीर नि. सं. 2538	मूल्य
1100 प्रतियाँ	द्वि. भाद्रपद शुक्ला 4	100/-रु.

दशलक्षण महापर्व-19 सितम्बर 2012

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

–: मार्गदर्शन :–
प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

–: निर्देशक एवं सम्पादक :–
कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

–: प्रबंध सम्पादक :–
बाल ब्र. जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण से बारहवाँ संस्करण (सन् 2004) तक 17200 प्रतियाँ
तेरहवाँ संस्करण (सन् 2006)-2200 प्रतियाँ, चौदहवाँ संस्करण (सन् 2009)-1100 प्रतियाँ
पन्द्रहवाँ संस्करण (सन् 2010)-1100 प्रतियाँ, सोलहवाँ संस्करण (सन् 2011)-1100 प्रतियाँ
सत्रहवाँ संस्करण (सन् 2012)-1100 प्रतियाँ

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–स्वस्तिश्री कर्मयोगी पीठाधीश
रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

परमआराध्य, जगद्वंद्य आचार्यश्री कुन्दकुन्ददेव ने संसारी प्राणियों के परिणाम को तीन अवस्थाओं में विभाजित किया है। १. अशुभोपयोग, २. शुभोपयोग, ३. शुद्धोपयोग। इन तीनों उपयोगों में सम्यग्दृष्टि जीव के लिए साक्षात् मोक्ष का कारण ऐसा शुद्धोपयोग तो उपादेय है ही, लेकिन परम्परा से मोक्ष का कारण तथा पुण्यवर्धक और पापनाशक ऐसा शुभोपयोग भी कथंचित् उपादेय है। इन दोनों से भिन्न जो अशुभोपयोग है वह तो सर्वथा हेय ही है। इस संबंध में आचार्यश्री कुंदकुंददेव ने प्रवचनसार में स्पष्ट कहा है–

असुहोदयेण आदा कुणरो तिरियो भवीय णेरइयो।
दुक्खसहस्सेहिं सदा अभिंधुदो भमदि अच्चंतं।।
धम्मेण परिणदप्पा अप्पा जदि सुद्धसंपयोगजुदो।
पावदि णिव्वाणसुहं सुहोवजुत्ते च सग्गसुहं।।

अर्थात् अशुभ उपयोग से यह जीव तिर्यंच, नारकी एवं खोटा मनुष्य होकर सहस्रों दुःखों को सहन करता हुआ इस संसार में परिभ्रमण किया करता है।

तथा धर्म से परिणत हुआ जीव शद्धोपयोग से तो निर्वाण की प्राप्ति कर लेता है और शुभोपयोग से स्वर्ग के सुखों की प्राप्ति करता है।

उपरोक्त संदर्भ में शुद्धोपयोग और शुभोपयोग से परिणत आत्मा को कुंदकुंदस्वामी ने धर्म से परिणत आत्मा कहा है, यह बात ध्यान देने योग्य है।

इन्हीं गाथाओं की टीका करते हुए परमोपकारी संत आचार्य श्री जयसेन जी कहते हैं कि ''शुद्धोपयोग का प्रारंभ तो सप्तम गुणस्थान अर्थात् दिगम्बर मुनि अवस्था में होता है।'' इसलिए सम्यग्दृष्टि श्रावक को मोक्षमार्ग पर चलने के लिए शुभोपयोग का आश्रय लेना चाहिए और शुद्धोपयोग की भावना भानी चाहिए ताकि कभी न कभी ऐसा अवसर प्राप्त हो जिससे अनेक दुःखों से व्याप्त गृहस्थ जीवन के त्यागरूप मुनिधर्म को अंगीकार करके 'ज्ञानध्यानतपोरक्तः' ज्ञान, ध्यान और तप में लीन रहकर शुद्धोपयोग के द्वारा सम्पूर्ण कर्मों का नाश कर मोक्ष को प्राप्त कर सकें।

वास्तव में शुभोपयोग रहना भी आसान बात नहीं है। जीव के जब कोई जन्म-जन्मांतरों का पुण्य संचित होकर एक साथ उदय में आता है तो जिनधर्म एवं जिनवाणी सुनने का साधन प्राप्त होता है जिससे शुभोपयोग में जीव का समय व्यतीत होता है अन्यथा तो सभी संसारी प्राणी दिन-रात अशुभोपयोग अर्थात् पाप क्रियाओं से संक्लेशित रहकर अपार कष्टों को उठाते रहते हैं।

कहने का अभिप्राय यह है कि अशुभोपयोग से बचने के लिए प्रत्येक श्रावक को यह लगन लगी रहनी चाहिए कि उसका समय शुभोपयोग में कैसे व्यतीत हो। भगवान् की भक्ति, पूजा, स्तोत्रपाठ, तीर्थयात्रा वगैरह सब शुभोपयोग के ही अंग हैं। आचार्य कुंदकुंददेव के अनुसार तो 'दाणं-पूजामुक्खो' अर्थात् श्रावक के लिए दान और पूजन ये दोनों नित्य आवश्यक कर्तव्य हैं। इसलिए प्रतिदिन पूजन करना यह श्रावक का आवश्यक कार्य होना ही चाहिए।

नित्य पूजाओं के अतिरिक्त नैमित्तिक पूजाओं में अनेकानेक मण्डल विधान वगैरह की पूजाएँ की जाती हैं। जिसमें सर्वोत्कृष्ट एवं अचिंत्यफलप्रदायक ऐसा यह 'इंद्रध्वज' नामक विधान है जिसकी रचना पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका रत्न श्री ज्ञानमती माताजी ने ३ माह के अल्प समय में की है जिसे देखकर अवश्य ही आाश्चर्य प्रतीत होता है। जिस विधान में ५० पूजाएँ हों और सभी पूजाओं के पद अलग-अलग छन्दों में लिखना बहुत ही विद्वत्ता एवं भाषाविद्य की बात है।

पूज्य माताजी न्याय, व्याकरण जैसे क्लिष्ट ग्रंथों का अनुवाद जैसा महान कार्य करते हुए हम लोगों के विशेष आग्रह पर ऐसे भक्तिपरक ग्रंथों का सृजन समय-समय पर कर दिया करती हैं। जिससे सहस्रों प्राणी अपने सांसारिक दुःखों से छूटकर शाश्वत सुख को प्राप्त करेंगे-यही रचना का उद्देश्य रहता है।

माताजी ने श्रावण वदी ७ को इस विधान की रचना प्रारंभ करके कार्तिक वदी अमावस्या दीपावली के शुभ मुहूर्त में इसकी विधिवत् सम्पूर्ति की है। इस प्रकार इस ग्रंथ का निर्माण उ.प्र. के मुजफ्फरनगर जिला के अंतर्गत खतौली नगर में (चातुर्मास के मध्य) सन् १९७६ में हुआ, ऐसा जानना चाहिए। यह खतौली नगर हस्तिनापुर से मात्र ५० कि.मी. दूर स्थित है। ग्रंथ निर्माण के पूर्व प्राचीन शास्त्र भंडारों से इंद्रध्वज विधान की प्रतियाँ मँगाई गईं जिसमें सर्वप्रथम झालरापाटन के शास्त्र भंडार में आषाढ़ शुक्ला ८, वि.सं.१९३३ की हस्तलिखित प्रति प्राप्त हुई जिसके रचयिता भट्टारक श्री

विश्वभूषण जी हैं। उसके बाद अन्य शास्त्र भंडारों से खोज करने पर इंदौर (म.प्र.), सरधना (उ.प्र.), टीकमगढ़ (म.प्र.) एवं दिल्ली के शास्त्र भंडार में भी प्रतियाँ मिली जिनके रचयिता भी एक ही हैं। काफी खोज के बाद भी विश्वभूषण कृत इंद्रध्वज विधान के अतिरिक्त अन्य किसी आचार्य या विद्वान की कृति उपलब्ध नहीं हुई है।

ज्ञात समाचारों के अनुसार अनेक ग्रंथों के हिन्दी टीकाकार महान विद्वान पं.टोडरमलजी ने भी अपने कार्यकाल के मध्य एक बार इंद्रध्वज विधान ठाटबाट से जयपुर में कराया था। इस नूतन इंद्रध्वज विधान के माध्यम से सर्वप्रथम यह विधान हस्तिनापुर में पूज्य माताजी के ही सानिध्य में सन् १९७७ में कराया गया उसके बाद तो देशभर में अनेक स्थानों पर ये विधान बड़े उल्लास से सम्पन्न हो रहे हैं।

जब से यह विधान हिन्दी में प्रकाशित हुआ है तब से सहस्त्रों स्थानों पर इसका पूजन विशाल महोत्सवपूर्वक हो चुका है। इस विधान की किताबों की अत्यधिक माँग होने से इसे अनेकों बार छपवाया गया है।

यह इंद्रध्वज विधान आप सभी श्रद्धालु भक्तों के लिए भक्ति का मार्ग प्रशस्त करता हुआ अभीष्ट फल की सिद्धि में कारण बने यही मंगल भावना है।

प्रस्तावना

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

इस इंद्रध्वज विधान में मध्यलोक के सर्व अकृत्रिम जिन चैत्यालयों की पूजा की जाती है। मध्यलोक के बीचों–बीच में सुमेरु पर्वत है उसमें सोलह चैत्यालय हैं। इस विधान में सुमेरु पर्वत से प्रारंभ कर तेरहवें रुचकवर पर्वत पर्यंत चैत्यालयों की पूजा होती है। ये कुल ४५८ चैत्यालय हैं।

अन्वर्थ नाम

संस्कृत के इंद्रध्वज विधान में कहा है कि–

यत्र तत्र कृता पूजा, तत्र तत्र विडौजसा।
ध्वजा प्रस्थापिता नित्यं, तस्मादिन्द्रध्वजं स्मृतम्।।

अर्थ–इंद्रों ने जहाँ–जहाँ पर पूजा की, वहाँ–वहाँ पर अर्थात् उन–उन चैत्यालयों पर ध्वजा आरोपित करते गए इसलिए इस विधान का 'इंद्रध्वज' यह सार्थक नाम है।

ग्रन्थ–परिचय

इस ग्रंथ में मूल संस्कृत 'इंद्रध्वज विधान' ग्रंथ के आधार से ही विषयों का चयन किया गया है। सबसे प्रथम मंगल स्तुति करते हुए सिद्धों को नमस्कार करके श्री ऋषभदेव, शांतिनाथ और महावीर प्रभु की वंदना की गई है। पुनः विधान रचना का उद्देश्य बताकर उसका माहात्म्य दर्शाया गया है। अनंतर पूजक का सबसे प्रथम कर्तव्य क्या है? इसका संकेत करके मंडल मांडने की विधि बतलाकर मंडल पर आरोपित की जाने वाली ध्वजाओं का वर्णन किया है। पुनः पूजन प्रारंभ करने में सकलीकरण आदि अवश्य करना चाहिए व पूजन विधान के पूर्ण होने पर हवनविधि करनी चाहिए ऐसा आदेश है। 'पीठिका' में यह सब विषय आ जाता है।

इस इंद्रध्वजविधान के प्रारंभ में मंगलस्तोत्र, पुष्पांजलि करके 'देवागम विधि' में देवों का आह्वानन किया जाता है। दिशा, विदिशाओं में ८ महाध्वजाएँ एवं मण्डल पर ४५८ ध्वजाएँ विधिवत् आरोपित की जाती हैं। इस महाविधान में ये दोनों विधि प्रधान हैं इसी से इसका नाम 'इंद्रध्वज' यह अन्वर्थक है। यह दोनों विधि संस्कृत में ही दी गई हैं। इतनी विधि के अनन्तर प्रथम 'सिद्धपूजा' है अनंतर सर्वमध्यलोक संबंधि अकृत्रिम चैत्यालयों की पूजा की 'समुच्चय पूजा' है। पुनः सुदर्शनमेरु की पूजा को

प्रारंभ कर क्रम से मध्यलोक के सर्व अकृत्रिम चैत्यालयों की पूजाएँ दी गई हैं। इस महाविधान में ५० पूजाएँ हैं। सर्व मध्यलोक चैत्यालय सम्बन्धि ४५८ अर्घ्य हैं, ६८ पूर्णार्घ्य हैं और ५१ जयमालाएँ हैं। पूजाओं का क्रम मूल ग्रंथ के आधार से ही है। पाँचों मेरुओं की पूजाओं में १-१ समुच्चय और भद्रसाल, नन्दन, सौमनस एवं पांडुक इन चार-चार वन सम्बन्धी पृथक्-पृथक् ४-४ पूजाएँ हैं। ऐसे एक-एक मेरु संबंधी ५-५ पूजाएँ हो जाने से पूजाओं की संख्या ७० भी हो जाती है। किन्तु उनकी जयमाला एक होने से उन पाँच-पाँच पूजाओं को एक-एक ही माना गया है। अतः ५० पूजाएँ ही मानी गई हैं। अंत में एक बड़ी जयमाला है जो कि सर्व चैत्यालयों के उपसंहार रूप है।

इस ग्रंथ की रचना का आधार यद्यपि मूल संस्कृत कृति ही है फिर भी यह रचना मौलिक है। इसमें तिलोयपण्णत्ति, त्रिलोकसार आदि के आधार से प्रत्येक पर्वतों के चैत्यालयों के साथ-साथ उन-उन पर्वतों का, वे पर्वत किस क्षेत्र में हैं? कितने लम्बे चौड़े हैं? उनका क्या वर्ण है? उन पर कितने कूट हैं? इत्यादि का वर्णन बहुत ही सरल व सुन्दर ढंग से किया गया है। प्रायः विधान की पुस्तकों में जम्बूद्वीप के जम्बूवृक्ष व शाल्मलि वृक्ष के चैत्यालयों की पूजन की तरह धातकी खण्ड व पुष्कर द्वीप में भी जम्बू शाल्मलि के चैत्यालयों की पूजा देखने को मिलती है किन्तु त्रिलोकसार, तिलोयपण्णत्ति, राजवार्तिक आदि ग्रंथों में धातकीखंड व पुष्करद्वीप में धातकी वृक्ष और शाल्मलि वृक्ष माने गए हैं। अतः इन ग्रंथों के आधार से वहाँ-वहाँ पर धातकी वृक्ष व पुष्कर वृक्ष के चैत्यालयों की ही इसमें पूजाएँ दी गई हैं।

मूल संस्कृत ग्रंथ में अधिकतर अनुष्टुप आदि छंद में किसी भी चैत्यालय का अति संक्षिप्त प्रकरण है। इस भाषा ग्रंथ में नरेन्द्र छंद, शम्भु छंद, गीता छंद आदि विविध छन्दों में उन-उन चैत्यालयों का सुन्दर व विस्तृत वर्णन देखने को मिलता है। इस ग्रंथ में ग्रन्थकर्त्री पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी ने ४० प्रकार के छंदों का उपयोग किया है। प्रायः नए-नए छंदों में जयमालाएँ हैं जो कि अतिशय अर्थपूर्ण हैं कहीं-कहीं जयमालाओं में उन-उन चैत्यालयों के स्थान पर प्रकाश डाला गया है, कहीं पर प्रभु का गुणगान है, कहीं पर अपने संसार के दुःखों की गाथा प्रभु के सामने रखी गयी है और कहीं पर भक्ति के साथ-साथ अध्यात्म व वैराग्य का स्रोत उमड़ पड़ा है। इसीलिए यह विधान संगीतज्ञ जनों द्वारा संगीत के साथ-साथ कराया जाने पर पूजनकर्ताओं और श्रोताओं को अतिशय रूप से मंत्र मुग्ध करने वाला सिद्ध होता है। इसका माहात्म्य तो अचिन्त्य व अकथनीय ही है। आज भी सर्व जैन समाज के लोग इस विधान को सर्वश्रेष्ठ व अतिशय चमत्कार पूर्ण ही मानते हैं।

इंद्रध्वज विधान में प्रयुक्त छंदों के नाम

१. शंभु छंद
२. गीता छंद
३. चौबोल छंद, मदअवलिप्त कपोल, कसुमलता छंद
४. नरेन्द्र छंद
५. शेर छंद (हे दीनबंधु श्री पति...)
६. घत्ता छंद
७. कुसुमलता छंद
८. चाल छंद (नंदीश्वर पूजन चाल)
९. वीर छंद (मेरी भावना चाल)
१०. रोला छंद
११. अडिल्ल छंद
१२. द्रुतविलम्बित छंद (सुंदरी छंद)
१३. तोटक छंद
१४. त्रिभंगी छंद
१५. सवैया छंद, कुसुमलता
१६. मदअवलिप्तकपोल छंद
१७. स्रग्विणी छंद
१८. चाल छंद (चौबीसों श्री जिनचंद)
१९. लोलतरोल छंद
२०. चौपाई छंद
२१. सुगीतिका छंद

पूजन के द्रव्य

पूजन ग्रंथों में आचार्यों ने पूजन को एकादश प्रकार की कहा है- जल, चंदन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल, अर्घ्य, शांतिधारा व पुष्पांजलि। श्री पूज्यपाद स्वामीकृत अभिषेक पाठ में अभिषेक के बाद पूजा है। उसमें भी अर्घ्य के बाद शांतिधारा[१] पुष्पांजलि देखने को मिलती है। अन्यत्र[२] भी ऐसा विधान देखा गया है। तथा दक्षिण व महाराष्ट्र प्रांत में आज भी सर्वत्र अर्घ्य के बाद में शांतिधारा व पुष्पांजलि

१. इसी इंद्रध्वज विधान पुस्तक में देखें। २. भावसंग्रह श्रीवामदेवकृत।

करते हैं। यही विधि शास्त्रोक्त है। अतः इस ग्रंथ में सर्व पूजाओं में अर्घ्य के बाद शांतिधारा व पुष्पांजलि दी गई है।

ध्वजाओं का वर्णन

विधान के रचयिता ग्रंथकार ने इन मंदिरों के ऊपर ध्वजा चढ़ाने के लिए उन ध्वजाओं के दस प्रकार के चिन्ह बतलाए हैं। यथा-

''**मालामृगेन्द्रकमलांबरवैनतेय मातंगगोपतिरथांगमयूरहंसाः**''

अर्थ—माला, सिंह, कमल, वस्त्र, गरुड़, हाथी, वृषभ, चकवा-चकवी, मयूर और हंस ये दस प्रकार के चिन्ह उन ध्वजाओं में बनवाने चाहिए।

किन मंदिरों पर कौन से चिन्ह वाली ध्वजाएँ होनी चाहिये, इस बात को बताते हैं-मेरु के मंदिरों की ध्वजाओं में माला चिन्ह है। गजदन्त की ध्वजाओं में सिंह, कुलाचल की ध्वजाओं में कमल, वृक्ष की ध्वजाओं में वस्त्र या तोता, वक्षार की ध्वजाओं में गरुड़, इष्वाकार और मानुषोत्तर की ध्वजाओं में हाथी, विजयार्ध में बैल, नंदीश्वर की ध्वजाओं में चकवा-चकवी, कुण्डलगिरि की ध्वजाओं में मयूर और रुचकगिरि की ध्वजाओं में हंस ये चिन्ह माने गये हैं।

संस्कृत विधान प्रति में जम्बू आदि वृक्षों की ध्वजाओं में चिन्ह के विषय में श्लोक है-

कुलावृक्षदशानां तु सद्मेषु केतुभिः रचेत्।
ध्वजादानांशुकैः युक्तं, जिनयज्ञमहोत्सवे।।

इसमें यदि 'अंशुक' शब्द है तब तो उसका अर्थ वस्त्र होता है तथा किसी प्रति में 'ध्वजादानं शुकै' पाठ भी उपलब्ध हो रहा है तो 'शुक' शब्द से विद्वान लोग 'तोता' अर्थ लेकर वृक्षों की ध्वजाओं में 'तोता' के चिन्ह को बनवाते हैं।

जैसा कि प्रमुख विद्वान् प्रतिष्ठाचार्य पं. नाथूलाल जी शास्त्री का भी कहना है-

''इंद्रध्वज विधान में अम्बर या अंशुक कपड़े को ही माना जाना चाहिए परन्तु हमारे इधर तो तोता चिन्ह वाली ध्वजा रखी जाती हैं। इसका कारण जहाँ ध्वजा का वर्णन है वहाँ ''ध्वजादानं शुकैकः'' लिखा होने से ''शुकैः'' पद को अलग मान कर तोते के चिन्ह का प्रचार हो गया है क्योंकि 'अंशुकैः' का अर्थ कपड़ा प्रतिष्ठाचार्यों को समझ में नहीं आया।''

ये दश चिन्ह वाली ध्वजाएँ मंडल पर स्थापित ४५८ चैत्यालयों पर चढ़ाई जाती हैं इनसे अतिरिक्त मंडल के चारों तरफ में चार दिशा और चार विदिशा संबंधी आठ

दिशाओं में आठ महाध्वज स्थापन करने की भी परम्परा है। इन आठ महाध्वजाओं में भी क्रम से चक्र, हाथी, बैल, कमल, वस्त्र, सिंह, गरुड़ और माला इन चिन्हों को बनाना चाहिए।

आदिपुराण में भगवान् वृषभदेव के समवसरण में द्वितीय कटनी पर आठ दिशाओं में आठ चिन्हों से युक्त महाध्वजाओं का बहुत ही सुन्दर वर्णन है। यथा-[१]

''द्वितीय पीठ पर आठ दिशाओं में आठ बड़ी-बड़ी ध्वजाएँ सुशोभित हो रही थीं, जो बहुत ऊँची थीं और ऐसी जान पड़ती थीं मानों इंद्रों के आठ लोकपाल ही हों, चक्र, हाथी, बैल, कमल, वस्त्र, सिंह, गरुड़ और माला चिन्ह से सहित तथा सिद्ध भगवान के आठ गुणों के समान वे ध्वजाएँ बहुत अधिक सुशोभित हो रही थीं।

समवसरण की प्रथम कटनी पर यक्षेन्द्र अपने मस्तक पर धर्मचक्र धारण किये रहते हैं और द्वितीय कटनी पर आठों दिशाओं में चिन्ह सहित ध्वजाओं का वर्णन तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ में भी है-

''द्वितीय पीठ पर मणिमय स्तम्भों पर लटकती हुईं सिंह, बैल, कमल, वस्त्र, चक्र, माला, गरुड़ और हाथी इन आठ चिन्हों से युक्त ध्वजाएँ शोभायमान होती हैं[२]।''

ये आठ महाध्वज के चिन्हों के प्रमाण हुए। अब पूर्वोक्त दश प्रकार के चिन्हों के विधान देखिए। ये दश प्रकार के चिन्हों से सहित ध्वजाएँ समवसरण में भी होती हैं, अकृत्रिम जिन मंदिरों में तथा चार प्रकार के देवों के भवनों में होने वाले अकृत्रिम मंदिर में भी होती हैं।

धवला में भगवान महावीर स्वामी के समवसरण की पाँचवी ध्वजभूमि के वर्णन में बताया है-''माला, अबराध्य अर्थात् सूर्य और चन्द्र, अब्ज, मयूर, गरुड़, गज, सिंह, बैल, हंस और चक्र के चिन्ह से युक्त ध्वजाओं के समूह से घिरा हुआ है[३]।''

तिलोयपण्णत्ति में भी समवसरण की पाँचवीं ध्वजभूमि का वर्णन इस प्रकार है-

''इसके आगे ध्वजभूमि में दिव्य ध्वजाएँ होती हैं। जो सिंह, गज, वृषभ, गरुड़,

---

१. तस्योपरितले रेजुर्दिक्ष्वष्टासु महाध्वजाः। लोकपाला इवोत्तुंगाः सूरेणमभिसंमताः।।२९५।।
चक्रेभवृषभाम्भोजवस्त्रसिंहगरुत्मतां। माल्यस्य च ध्वजा रेजुः सिद्धाष्टगुणनिर्मला।।२९६।।
(आदि पुराण पर्व २२, पृष्ठ ५३६)

२. केसरिवसहसरोरुहचक्कंवरदामगरुडहत्थिधया।
मणिथंभलंबमाणा राजंते विदियपीढेसुं ।।८८०।। (तिलोयपण्णत्ति प्र.भाग पृ.२६०)

३. ''मल्लंबरद्धबरहिण गरुडगयकेसरिवसहहंसचक्कद्धयणिवएहि परिवेढिराए।''
(धवला पु. ९, पृ.१११)

मयूर, चंद्र, सूर्य, हंस, पद्म और चक्र इन चिन्हों से चिन्हित[१] दश प्रकार की ध्वजाओं में से प्रत्येक एक सौ आठ रहती हैं। और इनमें से भी प्रत्येक ध्वजा अपनी एक सौ आठ क्षुद्र ध्वजाओं से संयुक्त होती है।

महाध्वजा १०×१०८×४=४३२०। क्षुद्रध्वजा १०×१०८×१०८×४=४६६५६०. समस्त ध्वजा ४३२०+४६६५६०=४७०८८०।

समस्त ध्वजाएँ रत्नों से खचित सुवर्णमय स्तम्भों से संलग्न रहती हैं। इन स्तम्भों की ऊँचाई अपने-अपने तीर्थंकरों को ऊँचाई से बारहगुणी हुआ करती है।

भगवान नेमिनाथ के समवसरण में भी इन ध्वजाओं के चिन्हों का वर्णन किया गया है। यथा-'प्रत्येक विभाग में इन ध्वजाओं की पृथक-पृथक पीठिकाएँ हैं जो तीन धनुष चौड़ी हैं, चित्र-विचित्र हैं तथा उन पर आधे योजन ऊँचे रत्नमयी बाँस लगे हुए हैं। उन बाँसों के अग्रभाग पर जो पटिया लगे हैं उनमें दश प्रकार की रंग-बिरंगी, छोटी घंटियों और चित्रपटकों से युक्त, बड़ी ध्वजाएँ फहराती रहती हैं। वे दश प्रकार की ध्वजाएँ क्रम से मयूर, हंस, गरुड़, माला, सिंह, हाथी, मकर, कमल, बैल और चक्र के चिन्ह से चिन्हित होती हैं[२]।

"ध्वजभूमि में सिंह, गज, वृषभ, गरुड़, मयूर, चंद्र, सूर्य, हंस, पद्म और चक्र इन चिन्हों से चिन्हित प्रत्येक चिन्ह वाली एक सौ आठ महाध्वजाएँ और एक-एक महाध्वजा के आश्रित एक सौ आठ क्षुद्र ध्वजाएँ होती हैं।"[३] यह भवनवासी देवों के भवन के अकृत्रिम मंदिर का वर्णन है। ऐसे ही चतुर्णिकाय देवों के भवनों के जिनमंदिरों में ध्वजाएँ होती हैं।

मध्यलोक के अकृत्रिम जिनमंदिर के वर्णन में देखिए-

"प्रत्येक जिनमंदिर की चारों दिशओं में सिंह, हाथी, वृषभ, गरुड़, मयूर, चंद्र, सूर्य, हंस, कमल और चक्र के चिन्हों से चिन्हित, १०८, १०८ मुख्य ध्वजाएँ हैं। सभी मिलाकर ४७०८८० ध्वजाएँ हैं। वे ध्वजाएँ प्रथम और द्वितीय कोट में अंतराल में हैं[४]।

इन्हीं अकृत्रिम मंदिरों के वर्णन में जम्बूद्वीपपण्णत्ति[५] में भी कहा है-

---

१. तत्तो धयभूमीए दिव्यधया होंति ते च दसभेया।
सोयगयवसहखगवइसिहितिरविहंसपउमचक्का य।।८१८।। (तिलोयपण्णत्ति अ.४, पृ. २५०)

२. शिखिहंसगरुत्मत्स्वक्सिंहेभमकराम्बुजैः।
वषरूपेण चक्रेण समधिष्ठितमूर्तयः।। (हरिवंशपुराण सर्ग ५७, पृ.६४९)

३. तिलोयपण्णत्ति अ. ३, पृ. ११६। ४. त्रिलोकसार गाथा १०१०, पृ.७६३।

५. जम्बूद्वीपपण्णत्ति अ. ५, पृ. ९०।

सिंह, हंस, गज, कमल, वस्त्र, वृषभ, मयूर, गरुड़, चक्र और माला के चिन्हों से सुशोभित दश प्रकार की पंचवर्णी महाध्वजाओं से उन चैत्यालयों की दशों दिशाएँ ऐसी जान पड़ती हैं मानों लहलहाते हुए नूतन पत्तों से ही युक्त हों[१]।।

इस प्रकार इन प्रमाणों को देखकर ध्वजा के चिन्ह के विषय में समाधान कर लेना चाहिए।

प्रमुख विधानकर्त्ता का आद्य कर्तव्य

सबसे पहले इस महान् विधान के लिए आचार्य प्रवर गुरुदेव के पास जाकर उन्हें नमस्कार करके उनकी पूजा भक्ति विनय करके उनके चरणों के सन्मुख श्रीफल चढ़ाकर यह प्रार्थना करे कि-हे भगवन्! मैं इंद्रध्वज विधान करना चाहता हूँ सो आपकी कृपा प्रसाद से मेरी इच्छा पूर्ण होवे। गुरु की आज्ञा व आशीर्वाद प्राप्त करके पुनः गुरु से निवेदन करे कि भगवन्! आप चतुर्विध संघ सहित इस उत्सव की निर्विघ्न समाप्ति हेतु वहाँ पर पदार्पण कीजिए। गुरु की स्वीकृति मिलने पर यदि गुरु अन्यत्र हैं तो उन्हें अपने यहाँ ठाट-बाट से विहार कराके ले आना चाहिए और अपने यहाँ उचित वसतिका में गुरुओं को ठहरा कर उनकी समुचित व्यवस्था करना चाहिए। पुनः विधानाचार्य को आचार्य निमंत्रण की विधि से सम्मान पूर्वक बुलाकर उनकी आज्ञा के अनुसार सर्वकार्य करने चाहिए।

अनंतर शुभ दिन, शुभ मुहूर्त में विशाल मंडप बनवाकर उसके प्रांगण में एक चबूतरे पर ऊँचा विशाल ध्वज आरोहण करें पुनः उसके तृतीय या पाँचवें दिन विधिवत् अंकुरारोपण करें।

विधानकर्ता कैसे हों?

विधानकर्ता इंद्र सौ होवें, जो अपनी इंद्राणियों सहित होवें। और यदि सौ इंद्र नहीं हो सकें तो कम से कम बारह इंद्र होवें। यदि बारह भी न होवें तो जितने भी हों अपनी श्रद्धा भक्ति के अनुसार अनुष्ठान करें। ये विधान करने वाले श्रावकगण और श्राविकाएँ सच्चरित्र हों, दुर्व्यसनी न हों, हीनांगी या अधिकांगी न हों, कुष्ट आदि रोगों से ग्रसित न हों, जातिच्युत अथवा हीन न हों। ऐसा महाविधानों में योग्य पुरुष ही भाग लेने के अधिकारी होते हैं।

---

१. सिंहहंसगजाम्भोजदुकूलवृषभध्वजैः। मयूरगरुडाकीर्णश्चक्रमालामहाध्वजैः।।३६९।।
दशार्धवर्णभासद्भिर्दशभेदैर्दिशो दश। साशीतिक सहस्रान्तैर्भान्ति पल्लविता इव।।३७०।।
(हरिवंशपुराण सर्ग ५, पृ. ९५)

विधानाचार्य का कर्तव्य

विधानाचार्य विद्वान् इस 'इंद्रध्वज विधान' के प्रारंभ में श्रेष्ठ मुहूर्त में सबसे प्रथम मांगलिक ध्वजारोहण करावें। पुनः विधान प्रारंभ के तृतीय या पाँचवें दिन अंकुरारोपण करावें। मंडल की शुद्धि के लिए व प्रभावना हेतु जलयात्रा भी करा सकते हैं। अनंतर मंडप बनाकर उस पर मंदिर व ध्वजाओं का आरोपण करें।

मंडल मांडने की विधि

मंडल के पूर्व दिशा या उत्तर दिशा में मुख करके सुंदर वेदी बनवानी चाहिए और उस वेदी के सामने बहुत बड़ा सा चबूतरा। यह चबूतरा मध्यम रूप के ४०×४० वर्ग फुट का होना चाहिए। यह चबूतरा पक्का नहीं हो तो लकड़ी के तख्तों को मिला कर भी मंडप बनाया जा सकता है। इस चबूतरे पर सफेद वस्त्र की चाँदनी बिछावे। उस पर तेरहद्वीप के लिए क्रम से गोल रेखाएँ खींचे। उसके मध्य सुमेरु का चित्र बनाकर उस पर सोलह चैत्यालय रखें या मंदिर में धातु के २, ३ फुट के मेरु यदि हो तों उन्हें ही उस स्थान पर एक चौकी पर विराजमान कर देवें। मेरु की विदिशा में चार गजदन्त बनावें तथा मेरु के उत्तर ईशान कोण में जम्बू वृक्ष और दक्षिण में नैऋत्य कोण में शाल्मलि वृक्ष बनावें। पुनः भरत आदि सात क्षेत्र, हिमवान् आदि छह पर्वत बनावें। उसमें मध्य के विदेह में मेरु के होने से मेरु के पूर्व और पश्चिम भाग में विदेह के दो भाग हो जाने से पूर्व विदेह और पश्चिम विदेह हो गये हैं। इनमें क्रम से नक्शे के अनुसार सोलह वक्षार बनावें। विदेह के बत्तीस देशों में बत्तीस विजयार्ध बनावें तथा भरत व ऐरावत क्षेत्र के मध्य में भी एक-एक विजयार्ध बनावें ऐसे चौंतीस विजयार्ध बनावें। पुनः हिमवान्, महाहिमवन्, निषध, नील, रुक्मि और शिखरी इन छह पर्वतों पर पूर्व दिशा की तरफ एक-एक चैत्यालय बनावें। इस प्रकार से मेरु के १६+गजदंत के ४+जम्बू शाल्मलि वृक्ष के २+वक्षार के १६+विजयार्ध के ३४ और कुलाचल के ६=७८ चैत्यालयों को स्थापित करें। क्षेत्रों में गंगा सिंधु आदि नदियाँ हैं व पर्वतों पर जितने-जितने कूट हैं, उतने-उतने कूटों को भी बनावें।

पुनः आधे फुट का गोल घेरा इस जम्बूद्वीप को वेष्टित करके बनावें जिसमें लवण समुद्र की रचना करें। उसके बाद उसे वेष्टित कर ६ फुट घेरा खींच देवें। इसका नाम धातकी खंड है। इसके दक्षिण और उत्तर में १-१ इष्वाकार पर्वत बना देवें। इन दो पर्वतों से धातकी खंड के पूर्व और पश्चिम ऐसे दो भेद हो गये हैं अब पूर्व धातकी खंड के मध्य में विजय मेरु और पश्चिम धातकी खंड के मध्य में अचल मेरु की रचना

करके उनकी विदिशा में गजदंत आदि सारी रचनाएँ जम्बूद्वीप के समान कर देवें। इनमें भरत आदि क्षेत्र व हिमवान आदि पर्वत आरे के समान हो जावेंगे। पुनः आधा फुट का कालोदधि समुद्र इस द्वीप को वेष्टित करते हुए बनाना चाहिए।

अनंतर इस समुद्र को वेष्टित करते हुए ७ फुट का घेरा खीचें, जो कि पुष्करार्ध द्वीप है। इसमें भी दक्षिण-उत्तर में इष्वाकार बना देवें जिससे इस द्वीप में भी पूर्व पुष्करार्ध और पश्चिम पुष्करार्ध ऐसे दो भेद हो गये हैं। पूर्व पुष्करार्ध के मध्य में मंदर मेरु और पश्चिम पुष्करार्ध के मध्य में विद्युन्माली मेरु बना देवें। अनंतर सारी रचना धातकी द्वीपवत् बना देवें। इस अर्ध पुष्करद्वीप को घेरे हुए मानुषोत्तर पर्वत जो कि २-३ अंगुल चौड़ा हो ऐसा बना देवें उस पर चारों दिशाओं में चार चैत्यालय की रचना करें।

आगे एक-एक अंगुल के द्वीप समुद्र एक-दूसरे को वेष्टित करते हुए सातवें समुद्र तक बना देवें।

पुनः आठवां नंदीश्वर द्वीप बनाने के लिए २ फुट का घेरा खींच देवें। इसमें पूर्व आदि चारों दिशाओं के मध्य में अंजनगिरि पर्वत बनावें। उस पर्वत के चारों तरफ चार बावड़ि चौकोन बनावें। इन बावड़ियों के मध्य दधिमुख पर्वत बनावें तथा बावड़ियों के दो-दो कोनों पर रतिकर ये १३ पर्वत के १३ चैत्यालय हो जाते हैं जो कि चारों दिशा संबंधी १३×४=५२ हो जाते हैं।

इसकी भी अंगुल प्रमाण के समुद्र व द्वीपों से वेष्टित करके ग्यारहवाँ कुण्डलवर द्वीप आधा फुट का बनावें जिसके मध्य कुण्डल पर्वत तीन अंगुल का बना देवें। इस अंगुलमात्र के समुद्र द्वीपों से वेष्टित कर पुनः आधा फुट का रुचवर द्वीप बनाकर उसमें भी तीन अंगुल का रुचकवर पर्वत देवें। इन कुण्डल पर्वत व रूचक पर्वत के चारों दिशाओं में भी चार-चार मंदिर बना देवें।

इस तरह जम्बूद्वीप के ७८+धातकी खण्ड के दो मेरु संबंधी ७८+७८ व इष्वाकार के २+ऐसे ही पुष्करार्ध के १५८+मानुषोत्तर के ४+नंदीश्वर के ५२+कुण्डलगिरि के ४+और रुचकगिरि के ४=कुल मिलाकर ४५८ चैत्यालय हो जाते हैं।

ये ४०×४० के मण्डल में बनाये गये हैं सो उसमें ५ फुट जम्बूद्वीप $\frac{१}{२}+\frac{१}{२}$ =१ फुट लवणसमुद्र, ६+६ फुट धातकी खण्ड, १ फुट कालोदधि, ७+७ फुट पुष्करार्ध द्वीप, आधा फुट मानुषोत्तर, २+२ फुट नंदीश्वर, १ फुट का कुण्डल और १ फुट का रुचक द्वीप ऐसे ५+१+१२+१+१४+$\frac{१}{२}$+४+१+१=३१$\frac{१}{२}$ फुट हुआ। इसमें से २$\frac{१}{२}$फुट मध्य में द्वीप समुद्रों में गया। ऐसे ४०×४० का मण्डल करना चाहिए। यदि इतनी बड़ी जगह न

हो तो यथायोग्य जगह में यथायोग्य चीजें बनावें।

इस तरह मण्डल को रंग-बिरंगे चावलों से या नाना रंग की रंगोली से बनाकर उस पर सुंदर-सुंदर मंदिर रखें। ये मंदिर लकड़ी के, काँच के, मिट्टी के अथवा पीतल आदि किसी धातु के बनवा लेने चाहिए।

इस मण्डल को चन्दोवा, छत्र, चामर, घंटा, किंकणी, आठ मंगल द्रव्य, माला आदि से सुसज्जित करके रंग-बिरंगी लाइट से जगमगा देना चाहिए। चारों तरफ में तोरण द्वार, मंगल कलश, धूप घट आदि से खूब सुंदर बनाना चाहिए। पुनः सुन्दर वस्त्रों की ध्वजायें और उसमें निम्नलिखित चिन्ह बनावें।

ध्वजाओं के चिन्ह[१]

मेरु के	८०	मंदिरों की	८०	ध्वजाओं में माला का चिन्ह
गजदंत के	२०	मंदिरों की	२०	ध्वजाओं में सिंह का चिन्ह
कुलाचल के	३०	मंदिरों की	३०	ध्वजाओं में कमल का चिन्ह
वृक्ष के	१०	मंदिरों की	१०	ध्वजाओं में वस्त्र या तोता का चिन्ह
वक्षार के	८०	मंदिरों की	८०	ध्वजाओं में गरुड़ का चिन्ह
इष्वाकार के	४	मंदिरों की	४	ध्वजाओं में हाथी का चिन्ह
मानुषोत्तर के	४	मंदिरों की	४	ध्वजाओं में हाथी का चिन्ह
विजयार्ध के	१७०	मंदिरों की	१७०	ध्वजाओं में बैल का चिन्ह
नन्दीश्वर के	५२	मंदिरों की	५२	ध्वजाओं में चकवा-चकवी का चिन्ह
कुण्डलगिरि के	४	मंदिरों की	४	ध्वजाओं में मयूर का चिन्ह
रुचकगिरि के	४	मंदिरों की	४	ध्वजाओं में हंस का चिन्ह

इनसे अतिरिक्त मंडल के चारों तरफ से चार दिशा और चार विदिशा संबंधी आठ दिशाओं में जो आठ महाध्वज स्थापना करना है उन आठ महाध्वजाओं में भी क्रम से-चक्र, हाथी, बैल, कमल, वस्त्र, सिंह, गरुड़ और माला इन चिन्हों को बनाना चाहिए।

इन ध्वजाओं को मंडल पर रखे हुए उन-उन मंदिरों में आरोपित कर देवें। एक मेरु के व एक गजदंत आदि के एक-एक मंदिर की ध्वजाओं को पास में रखना चाहिए। पुनः ध्वजारोपण की विधि के समय मंत्र पढ़कर उन ध्वजाओं को वहाँ चढ़ा देना चाहिए तथा अन्य ऊपर रखी हुई ध्वजाओं पर पुष्पांजलि क्षेपण कर देना चाहिए।

१. ये चिन्ह श्रीमान पं. नाथूलाल जी के सौजन्य से प्राप्त हुए हैं।

[१] विधान प्रारंभ दिवस की क्रिया

विधान प्रारंभ के दिन सबसे प्रथम 'पूजामुखविधि' करावें, सकलीकरण इसी में आ जाता है। पुनः महाभिषेक व शांतिधारा करावें। इसके बाद मंडल की आराधना के लिए अर्हंत पूजा, सिद्धपूजा, महर्षिपूजा व स्वस्त्ययन विधि करावें। पुनः 'यज्ञदीक्षाविधि' कराकर 'भूमिशोधन' व 'मंडपप्रतिष्ठाविधि करावें। इसी 'यज्ञदीक्षाविधि' में 'इंद्रप्रतिष्ठाविधि' आ जाती है।

उस समय विधानाचार्य सभी विधान करने वाले इंद्र, इन्द्राणियों को पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत व चार शिक्षाव्रत ऐसे बारह व्रत देवें। एक भुक्ति व ब्रह्मचर्य व्रत देवें। आजकल एक भुक्ति से साथ सायंकाल में फलाहार की छूट भी दे देते हैं। इससे अधिक छूट नहीं देनी चाहिए। तथा विधान पर्यन्त एक भुक्ति व फलाहार में आटा, घी, जल आदि सब पदार्थ शुद्ध ही काम में लेने चाहिए। तथा चर्म व ऊन के वस्त्रों का त्याग करा देवें और उस ग्राम के कहीं बाहर जाने का भी नियंत्रण होना चाहिए। यह सब नियम जितने दिन तक विधान होता है उतने दिन तक का ही है।

पुनः विधानाचार्य 'नवदेवता पूजा' अथवा स्वरुचि अनुसार नित्य पूजन की पूजाएँ करावें। पुनः जय-जयकार की ध्वनि और गाजे-बाजे के साथ 'इंद्रध्वज विधान' प्रारंभ करें उसमें 'मंगलस्त्रोत' आदि कराके मंडल पर पुष्पांजलि क्षेपण कराके 'देवागम विधि' करावें पुनः मंडल पर ध्वजाओं के आरोहण की विधि से ध्वजाएँ आरोपित करावें। उसके बाद सिद्धपूजा व समुच्चय पूजा करावें। प्रथम दिवस इतनी ही विधि में समय बहुत हो जायेगा अतः आरती करके पूजा अन्त्यविधि करावें। इसी में शांतिपाठ व विसर्जन पाठ आ जाता है। उसी दिन जाप्यानुष्ठान विधि से जाप्यकर्ताओं से निम्नलिखित जाप्य करने का संकल्प करावें।

''मंत्र-ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा मध्यलोक संबंधि चतुःशताष्टपंचाशत् श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो नमः[२]।''

जाप्य का संकल्प सवालाख या इच्छानुसार जितना भी हो करा देना चाहिए। द्वितीय दिवस 'पूजामुखविधि' व अभिषेक विधि करावें। पुनः नवदेवता पूजा या नित्य पूजन की पूजाओं के बाद आगे की विधान की पूजायें करावें। ऐसे ही विधान पूर्ण होने

१. नोट- विधान प्रारंभ की क्रियाएँ पूजा मुखविधि महाभिषेक, यज्ञदीक्षा विधि, इंद्रप्रतिष्ठा विधि, सकलीकरण, नवदेवतापूजन एवं पूजा अन्त्य विधि, हवन विधि तथा जाप्यानुष्ठान आदि के लिए ''मण्डप विधान एवं हवन विधि'' पुस्तक हस्तिनापुर से ही प्रकाशित है उससे करावें।

२. यह मंत्र पं. श्री नाथूलाल जी प्रतिष्ठाचार्य के सौजन्य से प्राप्त हुआ।

तक प्रतिदिन पूजामुखविधि अभिषेक विधि व पूजा अन्त्य विधि करानी होती है।

अन्त में जाप्य के दशांश भाग प्रमाण आहुति करने के लिए 'हवन विधि' करना चाहिए। उसमें त्रिकोण, गोल व चौकोण ऐसे तीन कुण्ड कटनीदार शास्त्रोक्त विधि से बनवाकर होम करावें। अन्त में आशीर्वाद श्लोक बोलकर सभी पूजन कर्ताओं के मस्तक पर अक्षत क्षेपण करें।

विधानाचार्य स्वयं भी विधान पूर्ण होने पर्यन्त एकभुक्ति, ब्रह्मचर्य व्रत, अणुव्रत आदि को धारणकर संयमपूर्वक रहें।

विधान का समय

यह विधान किसी महीने में भी किया जा सकता है। इसको निराकुलता से करने के लिए एक महीने का समय निश्चित करना चाहिए। अथवा २७ दिन, २१ दिन या ११ दिन जितने समय में करना हो निर्धारित करना चाहिए। कम से कम ९ दिन का समय तो इसमें अवश्य ही होना चाहिए। यदि अधिक दिन वाले विधान का आयोजन किया गया है तो विधानाचार्य संगीत आदि से इस विधान की पूजन को करावेंगे जिससे करने वाले को और सुनने वालों को सभी को आनंद अधिक आवेगा और पुण्यबंध भी अधिक होगा। पर्याप्त समय मिलने पर अर्थ भी समझाया जा सकेगा एवं चित्रपट पर चित्र बना-बनाकर हर स्थान दिखाये जा सकेंगे कि अब कहाँ के चैत्यालयों की पूजा हो रही है। अतः विधानाचार्य भी सामने बोर्ड पर पूजन से संबंधित स्थानों को बना बना कर बतातें जावें और उन पर अर्घ्य चढ़वाते जावें तो करने वाले, कराने वाले, देखने वाले सभी लोगों को बहुत ही आनंद आएगा।

इस विधान में ५० पूजायें हैं, ४५८ अर्घ्य हैं, ६८ पूर्णार्घ्य हैं एवं ५१ जयमालायें हैं। विधानाचार्य को आदि से अंत तक विधिवत् ही सर्व क्रियायें करनी चाहिये और समय-समय पर उनका अर्थ एवं महत्त्व समझाते रहना चाहिए।

इस प्रकार के विधि विधान पूर्वक की गई जिनपूजा असंख्यात गुणी कर्मों की निर्जरा करती है और सातिशय पुण्य का बंध भी कराती है।

राष्ट्रगौरव परम पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

कुन्दकुन्दान्वयो जीयात्, जीयात् श्री शांतिसागरः।
जीयात् पट्टाधिपस्तस्य, सूरिः श्री वीरसागरः।।
श्री ब्राह्मी गणिनी जीयात्, जीयादन्तिमचन्दना।
जीयात् ज्ञानमती माता, गणिन्यां प्रमुखा कलौ।।

जैनशासन के वर्तमान व्योम पर छिटके नक्षत्रों में दैदीप्यमान सूर्य की भाँति अपनी प्रकाश-रश्मियों को प्रकीर्णित कर रहीं पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर उठी लेखनी की अपूर्णता यद्यपि अवश्यंभावी है, तथापि आत्मकल्याण की भावना से पूज्य माताजी के श्रीचरणों में उनके दीर्घकालीन त्यागमयी जीवन के प्रति विनम्र विनयांजलिरूप मेरा यह विनीत प्रयास है।

१. जन्म, वैराग्य और दीक्षा-२२ अक्टूबर सन् १९३४, शरदपूर्णिमा के दिन टिकैतनगर ग्राम (जि. बाराबंकी, उ.प्र.) के श्रेष्ठी श्री छोटेलाल जैन की धर्मपत्नी श्रीमती मोहिनी देवी के दांपत्य जीवन के प्रथम पुष्प के रूप में ''मैना'' का जन्म परिवार में नवीन खुशियाँ लेकर आया था। माँ को दहेज में प्राप्त 'पद्मनंदिपंचविंशतिका' ग्रन्थ के नियमित स्वाध्याय एवं पूर्वजन्म से प्राप्त दृढ़ वैराग्य संस्कारों के बल पर मात्र १८ वर्ष की अल्प आयु में ही शरद पूर्णिमा के दिन मैना ने आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से सन् १९५२ में आजन्म ब्रह्मचर्यव्रतरूप सप्तम प्रतिमा एवं गृहत्याग के नियमों को धारण कर लिया। उसी दिन से इस कन्या के जीवन में २४ घंटे में एक बार भोजन करने के नियम का भी प्रारंभीकरण हो गया।

नारी जीवन की चरमोत्कर्ष अवस्था आर्यिका दीक्षा की कामना को अपनी हर साँस में संजोये ब्र. मैना सन् १९५३ में आचार्य श्री देशभूषण जी से ही चैत्र कृष्णा एकम् को श्री महावीरजी अतिशय क्षेत्र में 'क्षुल्लिका वीरमती' के रूप में दीक्षित हो गईं। सन् १९५५ में चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की समाधि के समय कुंथलगिरी पर एक माह तक प्राप्त उनके सान्निध्य एवं आज्ञा द्वारा 'क्षुल्लिका वीरमती' ने आचार्य श्री के प्रथम पट्टाचार्य शिष्य-वीरसागर जी महाराज से सन् १९५६ में 'वैशाख कृष्णा दूज' को माधोराजपुरा (जयपुर-राज.) में आर्यिका दीक्षा धारण करके ''**आर्यिका ज्ञानमती**'' नाम प्राप्त किया।

२. अध्ययन और अध्यापन-ज्ञानप्राप्ति की पिपासा माता ज्ञानमती जी के रोम-रोम में प्रारंभ से ही कूट-कूट कर भरी थी। दीक्षा लेते ही स्वाध्याय-मनन-चिंतन की धारा में ही उन्होंने स्वयं को निबद्ध कर लिया। ज्ञान प्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ स्त्रोत बना-संघस्थ मुनियों, आर्यिकाओं एवं संघस्थ शिष्य-शिष्याओं को जैनागम का तलस्पर्शी अध्यापन। 'कातंत्र रूपमाला' रूपी बीज से पूज्य माताजी की ज्ञानसाधना रूप वृक्ष प्रस्फुटित हुआ, जिस पर जो पत्ते, फूल-फल इत्यादि लगे, उन्होंने समस्त संसार को सुवासित कर दिया। गोम्मटसार, परीक्षामुख, न्यायदीपिका, प्रमेयकमलमार्तण्ड, अष्टसहस्री, तत्त्वार्थराजवार्तिक, सर्वार्थसिद्धि, अनगारधर्मामृत, मूलाचार, त्रिलोकसार आदि अनेक ग्रंथों को अपनी शिष्याओं और संघस्थ साधुओं को पढ़ा-पढ़ाकर आपने अल्प समय में ही विस्तृत ज्ञानार्जन कर लिया। हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, मराठी इत्यादि भाषाओं पर आपका पूर्ण अधिकार हो गया।

३. लेखनी का प्रारंभीकरण संस्कृत भाषा से-भगवान महावीर के पश्चात् २६०० वर्ष के जिस इतिहास में जैन साध्वियों के द्वारा शास्त्र लेखन की कोई मिसाल दृष्टिगोचर नहीं होती थी, वह इतिहास जागृत हो उठा जब क्षुल्लिका वीरमती जी ने सन् १९५४ में सहस्त्रनाम के १००८ मंत्रों से अपनी लेखनी का प्रारंभ किया। यही मंत्र सरस्वती माता का वरदहस्त बनकर पूज्य माताजी की लेखनी को ऊँचाइयों की सीमा तक ले गये। सन् १९६९-७० में न्याय के सर्वोच्च ग्रंथ 'अष्टसहस्री' के हिन्दी अनुवाद ने उनकी अद्वितीय विद्वत्ता को संसार के सामने उजागर कर दिया। कितने ही ग्रंथों की संस्कृत टीका, कितनी ही टीकाओं के हिंदी अनुवाद, संस्कृत एवं हिन्दी में अनेक मौलिक ग्रंथों की रचना मिलकर आज लगभग २५० से भी अधिक संख्या हो चुकी है। पूज्य माताजी द्वारा लिखित समयसार, नियमसार इत्यादि की हिन्दी-संस्कृत टीकाएँ, जैनभारती, ज्ञानामृत, कातंत्र व्याकरण, त्रिलोक भास्कर, प्रवचन निर्देशिका इत्यादि स्वाध्याय ग्रंथ, प्रतिज्ञा, संस्कार, भक्ति, आदिब्रह्मा, आटे का मुर्गा, जीवनदान इत्यादि जैन उपन्यास, द्रव्यसंग्रह-रत्नकरण्डश्रावकाचार इत्यादि के हिन्दी पद्यानुवाद व अर्थ, बाल विकास, बालभारती, नारी आलोक आदि का अध्ययन किसी को भी वर्तमान में उपलब्ध जैन वाङ्मय की विविध विधाओं का विस्तृत ज्ञान कराने में सक्षम है।

अध्यात्म, व्याकरण, न्याय, सिद्धांत, बाल साहित्य, उपन्यास, चारों अनुयोगोंरूप विविध विधाओं के अतिरिक्त पूज्य माताजी की लेखनी से विपुल भक्ति साहित्य उद्भूत हुआ है। इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, तीन लोक, सिद्धचक्र, विश्वशांति महावीर विधान इत्यादि अनेकानेक भक्ति विधानों ने देश के कोने-कोने में जिनेन्द्र भक्ति की जो धारा प्रवाहित की है, वह अतुलनीय है। पूज्य माताजी का चिंतन एवं लेखन पूर्णतया जैन आगम

से संबद्ध है, यह उनकी महान विशेषता है।

धन्य हैं ऐसी महान प्रतिभावान् सरस्वती माता!

४. सिद्धांत चक्रेश्वरी-पूज्य माताजी ने जैनशासन के सर्वप्रथम सिद्धांत ग्रंथ 'षट्खण्डागम' की सोलहों पुस्तकों के सूत्रों की संस्कृत टीका 'सिद्धांत चिंतामणि' का लेखन करके महान कीर्तिमान स्थापित किया है। क्रम-क्रम से हिन्दी टीका सहित इन पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य चल रहा है। आज से लगभग १००० वर्ष पूर्व आचार्य श्री नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती ने जिस प्रकार छह खण्डरूप द्वादशांगरूप जिनवाणी को परिपूर्ण आत्मसात करके साररूप में द्रव्य संग्रह, गोम्मटसार, लब्धिसार इत्यादि ग्रंथ अपनी लेखनी से प्रसवित किये थे, उसी प्रकार इस बीसवीं सदी की माता ज्ञानमती जी ने समस्त उपलब्ध जैनागम का गहन अध्ययन-मनन-चिंतन करके इस सिद्धांतचिंतामणिरूप संस्कृत टीका लेखन के महत्तम कार्य से 'सिद्धांत चक्रेश्वरी' के पद को साकार कर दिया है। आचार्य श्री वीरसेन स्वामी द्वारा १००० वर्ष पूर्व लिखित 'धवलाटीका' के पश्चात् इस महान ग्रंथ की सरल टीका लेखन का कार्य प्रथम बार हुआ है।

५. शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर-जैन सिद्धांतों का मर्म विद्वत् वर्ग समझ सके, इस भावना से कितने ही शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन पूज्य माताजी की प्रेरणास्वरूप किया गया। सन् १९६९ में जयपुर चातुर्मास के मध्य 'जैन ज्योतिर्लोक' पर प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया, जिसमें पूज्य माताजी द्वारा 'जैन भूगोल एवं खगोल' का विशेष ज्ञान विद्वत्वर्ग को कराया गया। अक्टूबर सन् १९७८ में हस्तिनापुर में पं. मक्खनलाल जी शास्त्री, पं. मोतीचंद जी कोठारी, डा. लाल बहादुर शास्त्री सहित जैन समाज के उच्चकोटि के लगभग १०० विद्वानों का विद्वत् प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया, जिसमें पूज्य माताजी ने विद्वत्समुदाय को यथेष्ट मार्गदर्शन प्रदान किया। समय-समय पर आज तक यह श्रृंखला चल रही है।

६. राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार-सन् १९८५ में 'जैन गणित एवं त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में सम्पन्न हुआ, पुनः अनेक संगोष्ठियाँ सम्पन्न होती रहीं और सन् १९९८ में 'भगवान ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन' के भव्य आयोजन द्वारा देशभर के विश्वविद्यालयों से पधारे कुलपतियों को भगवान ऋषभदेव को भारतीय संस्कृति एवं जैनधर्म के वर्तमानयुगीन प्रणेता पुरुष के रूप में जानने का अवसर प्राप्त हुआ। ११ जून २००० को 'जैनधर्म की प्राचीनता' विषय पर आयोजित इतिहासकारों के सम्मेलन द्वारा पाठ्य पुस्तकों में जैनधर्म संबंधी भ्रांतियों के सुधार के लिए विशेष दिशा-निर्देश 'राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद' (NCERT) तक पहुँचाये गये।

इनके अतिरिक्त अनेक अन्य सेमिनार भी समय-समय पर सम्पन्न हुए हैं, जिनके प्रतिफल में देश के समक्ष समय-समय पर साहित्यिक कृतियाँ (इदमा्हु) प्रस्तुत हो चुकी हैं।

७. दिगम्बर समाज की साध्वी को प्रथम बार डी.लिट्. की उपाधि प्रदान कर विश्वविद्यालय भी गौरवान्वित हुआ-किसी महाविद्यालय, विश्वविद्यालय आदि में पारम्परिक डिग्रियों को प्राप्त किये बिना मात्र स्वयं के धार्मिक अध्ययन के बल पर विदुषी माताजी ने अध्ययन, अध्यापन, साहित्य निर्माण की जिन ऊँचाइयों को स्पर्श किया, उस अगाध विद्वत्ता के सम्मान हेतु डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद द्वारा ५ फरवरी १९९५ को डी.लिट्. की मानद् उपाधि से पूज्य माताजी को सम्मानित करके स्वयं को गौरवान्वित अनुभव किया गया तथा दिगम्बर जैन साधु-साध्वी परम्परा में पूज्य माताजी यह उपाधि प्राप्त करने वाली प्रथम व्यक्तित्व बन गईं।

इसी प्रकार से समय-समय पर विभिन्न आचार्यों एवं सामाजिक संस्थाओं द्वारा पूज्य माताजी को न्याय प्रभाकर, आर्यिकारत्न, आर्यिकाशिरोमणि, गणिनीप्रमुख, वात्सल्यमूर्ति, तीर्थोद्धारिका, युगप्रवर्तिका, चारित्रचन्द्रिका, राष्ट्रगौरव, वाग्देवी इत्यादि अनेक उपाधियों से अलंकृत किया गया है, किन्तु पूज्य माताजी इन सभी उपाधियों से निस्पृह होकर अपनी आत्मसाधना को प्रमुखता देते हुए निर्दोष आर्यिका चर्या में निमग्न रहने का ही अपना मुख्य लक्ष्य रखती हैं।

८. पूज्य माताजी की प्रेरणा से त्याग में बढ़े कदम-त्यागमार्ग में अग्रसर सम्यग्दृष्टी जीव की यह विशेषता रहती है कि वह संसार परिभ्रमण से आक्रान्त अन्य भव्यजीवों को भी मोक्षमार्ग का पथिक बनाने हेतु विशेषरूप से प्रयासरत रहता है। इसी भावना की परिपुष्टी करते हुए पूज्य माताजी ने अनेकानेक शिष्य-शिष्याओं का सृजन किया।

संघस्थ साधुओं-मुनिजनों एवं आर्यिकाओं को अध्ययन कराते हुए सन् १९५६-५७ में ब्र. राजमल जी को राजवार्तिक आदि अनेक ग्रंथों का अध्ययन कराकर पूज्य माताजी ने उन्हें मुनिदीक्षा लेने की प्रेरणा प्रदान की। पुनश्च ब्र. राजमल जी कालांतर में आचार्य अजितसागर जी महाराज के रूप में चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज की परम्परा में चतुर्थ पट्टाचार्य के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

सन् १९६७ में सनावद चातुर्मास के मध्य पूज्य माताजी ने ब्र. मोतीचंद एवं युवक यशवंत कुमार को घर से निकाला, उन्हें खूब विद्याध्ययन कराया तथा यशवंत कुमार को मुनिदीक्षा दिलवायी, जो वर्तमान में आचार्यश्री वर्धमानसागर के नाम से प्रसिद्धि को प्राप्त हैं। ब्र. मोतीचंद जी भी क्षुल्लक मोतीसागर बनकर जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर के पीठाधीश के

रूप में प्रतिष्ठित हैं तथा निरंतर धर्मप्रभावना में संलग्न हैं।

वर्तमान पट्टाचार्यश्री अभिनंदनसागर जी महाराज ने भी पूज्य माताजी से राजवार्तिक, गोम्मटसार आदि ग्रंथों का अध्ययन किया था। मुनि श्री भव्यसागर जी महाराज, मुनि श्री संभवसागर जी महाराज इत्यादि ने भी पूज्य माताजी से विद्याध्ययन किया तथा उनकी प्रेरणा से ही मुनि दीक्षा प्राप्त की। वर्तमान में पूज्य माताजी के अनन्य शिष्य कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन अत्यंत कर्मठ व्यक्तित्व के रूप में समस्त समाज में प्रसिद्धि को प्राप्त हैं।

आर्यिका माताओं की शृँखला में आर्यिका श्री पद्मावती माताजी, आर्यिका श्री जिनमती माताजी, आर्यिका श्री आदिमती माताजी, आर्यिका श्री श्रेष्ठमती माताजी, आर्यिका श्री अभयमती माताजी, आर्यिका श्री श्रुतमती माताजी, मैं स्वयं (आर्यिका चन्दनामती) तथा आर्यिका श्री सम्मेदशिखरमती माताजी, आर्यिका श्री कैलाशमती माताजी आदि अन्य कई माताजी पूज्य माताजी से प्राप्त वैराग्यमयी संस्कारों एवं अध्यापन का ही प्रतिफल हैं। पूज्य माताजी से सर्वांगीण ग्रंथों का अध्ययन करके पूज्य जिनमती माताजी ने प्रमेयकमलमार्तण्ड, पूज्य आदिमती माताजी ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड का हिन्दी अनुवाद किया है। मुझे भी षट्खण्डागम एवं अन्य महान ग्रंथों की हिन्दी टीका लिखने का सुअवसर पूज्य माताजी की अनुकम्पा से प्राप्त हो रहा है।

५९ वर्षों की सुदीर्घ अवधि में कितने ही भव्य जीवों ने पूज्य माताजी से आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत, पंच अणुव्रत, शक्ति अनुसार प्रतिमाएँ इत्यादि ग्रहण करके संयम के मार्ग को आत्मसात किया है। वर्तमान में पूज्य माताजी के साक्षात् सानिध्य में रहकर अनेक ब्रह्मचारिणी बहनें त्यागमार्ग में संलग्न हैं।

९. तीर्थ विकास की भावना-तीर्थंकर भगवन्तों की कल्याणक भूमियों एवं विशेष रूप से जन्मभूमियों के विकास की ओर पूज्य माताजी की विशेष आंतरिक रुचि सदा से रही है। पूज्य माताजी का कहना है कि हमारी संस्कृति का परिचय प्रदान करने वाली ये कल्याणक भूमियाँ हमारी संस्कृति की महान धरोहर हैं अतः इनका संरक्षण-संवर्धन-विकास अत्यंत आवश्यक है।

सर्वप्रथम भगवान शांतिनाथ, कुन्थुनाथ, अरहनाथ की जन्मभूमि 'हस्तिनापुर' में पूज्य माताजी की प्रेरणा से निर्मित जैन भूगोल की अद्वितीय रचना 'जम्बूद्वीप' आज विश्व के मानस पटल पर अंकित हो गयी है, उ.प्र. सरकार के पर्यटन विभाग ने जम्बूद्वीप से हस्तिनापुर की पहचान बताते हुए उसे एक अतुलनीय 'मानव निर्मित स्वर्ग' (A Man Made Heaven of Unparallel Superlatives And Natural Wonders) की संज्ञा प्रदान की है। सन् १९९३ से १९९५ तक शाश्वत जन्मभूमि 'अयोध्या' में 'समवसरण मंदिर' और 'त्रिकाल चौबीसी मंदिर' का निर्माण करवाकर उसका विश्वव्यापी

प्रचार, अकलूज (महाराष्ट्र) में नवदेवता मंदिर निर्माण की प्रेरणा, सनावद (म.प्र.) में णमोकार धाम, प्रीत विहार-दिल्ली में कमलमंदिर, मांगीतुंगी (महाराष्ट्र) में सहस्रकूट कमल मंदिर, अहिच्छत्र में ग्यारह शिखर वाला तीस चौबीसी मंदिर और भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं केवलज्ञान कल्याणक भूमि-प्रयाग (इलाहाबाद) में 'तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ' का भव्य निर्माण पूज्य माताजी की ही प्रेरणा के प्रतिफल हैं।

कितने ही अन्य स्थानों पर भी जैसे-खैरवाड़ा में कैलाशपर्वत निर्माण की प्रेरणा, पिड़ावा में समवसरण रचना की प्रेरणा, सोलापुर (महा.) में भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा की स्थापना, श्री महावीर जी के शांतिवीर नगर में मंदारवृक्ष की स्थापना, अतिशयक्षेत्र श्री त्रिलोकपुर में पारिजातवृक्ष की स्थापना, केकड़ी (राज.) में सम्मेदशिखर की रचना आदि अनेकानेक निर्माण पूज्य माताजी के निर्देशन द्वारा सम्पन्न हुए और हो रहे हैं। भगवान महावीर स्वामी की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) के विकास हेतु भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ, भगवान महावीर की विशाल खड्गासन प्रतिमा सहित विश्वशांति महावीर मंदिर, नवग्रह शांति जिनमंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर एवं नंद्यावर्त महल आदि अनेक निर्माण आपकी प्रेरणा से इस क्षेत्र पर हुए हैं तथा कुण्डलपुर तीर्थ विश्वभर के लिए आकर्षण का केन्द्र बन गया है।

भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि 'राजगृही' में 'मुनिसुव्रतनाथ जिनमंदिर' एवं विपुलाचल पर्वत की तलहटी में मानस्तंभ रचना, भगवान महावीर की निर्वाणस्थली पावापुरी में जलमंदिर के समक्ष पाण्डुकशिला परिसर में भगवान की खड्गासन प्रतिमा सहित 'भगवान महावीर जिनमंदिर', गौतम गणधर स्वामी की निर्वाणस्थली गुणावां जी में गौतम स्वामी की खड्गासन प्रतिमा सहित जिनमंदिर, श्री सम्मेदशिखर जी में भगवान ऋषभदेव मंदिर इत्यादि समस्त निर्माण भी पूज्य माताजी की संप्रेरणा से ही सम्पन्न हुए हैं।

वर्तमान में तीर्थंकर जन्मभूमि विकास की शृँखला में भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकंदी में 'श्री पुष्पदंतनाथ जिनमंदिर' का निर्माणकार्य पूर्ण होकर उसमें भगवान पुष्पदंतनाथ की विशाल सवा ९ फुट उत्तुंग पद्मासन प्रतिमा विराजमान हो चुकी हैं, जिसकी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा जून २०१० में सम्पन्न हुई और अब इस उपेक्षित जन्मभूमि का परिचय सभी भक्तों को प्राप्त हो रहा है।

तीर्थंकरों की शाश्वत जन्मभूमि अयोध्या में वर्तमानकालीन वहाँ जन्में पाँच तीर्थंकरों की जन्मभूमि की टोकों पर जिनमंदिर निर्माण की प्रेरणा प्रदान कर आपने संस्कृति को जीवन्त करने का अभूतपूर्व प्रयास किया है। उस शृँखला में प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की टोंक पर सुन्दर कलात्मक मंदिर बनकर उसमें सवा चार फुट पद्मासन श्वेत

प्रतिमा विराजमान हुई हैं तथा सरयू नदी के तट पर भगवान अनन्तनाथ के मंदिर का शिलान्यास होकर निर्माणकार्य चल रहा है। इसी प्रकार क्रमशः अन्य टोकों पर भी मंदिरों के निर्माण की योजना भी चल रही है।

उल्लेखनीय है कि पूज्य माताजी के आर्यिका दीक्षास्थल-माधोराजपुरा (राज.) में भी 'गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती दीक्षा तीर्थ' के विकास का कार्य सम्पन्न किया जा चुका है। यहाँ सुन्दर कृत्रिम पर्वत का निर्माण करके १५ फुट उत्तुंग काले पाषाण वाली भगवान पार्श्वनाथ की खड्गासन प्रतिमा एवं चौबीसी विराजमान की गई हैं। इस तीर्थ की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा २१ नवम्बर से २६ नवम्बर २०१० तक पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज के सान्निध्य में एवं कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन के निर्देशन में विशेष महोत्सवपूर्वक सम्पन हुई है।

विशेष : तेरहद्वीप रचना, तीर्थंकरत्रय प्रतिमा एवं तीनलोक रचना-

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर तीर्थ के विकास की अद्वितीयता को अमरता प्रदान करने वाली इन रचनाओं का निर्माण पूज्य माताजी की प्रेरणा से इतिहास में प्रथम बार हुआ। अप्रैल सन् २००७ में स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हुई। विश्व में प्रथम बार निर्मित इस रचना में विराजमान २१२७ जिनप्रतिमाओं के दर्शन करके लोग इच्छित फल की प्राप्ति करते हैं। इसके अतिरिक्त हस्तिनापुर में जन्मे भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की ३१-३१ फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमाओं एवं ५६ फुट उत्तुंग निर्मित तीनलोक रचना की जिनप्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा फरवरी सन् २०१० में हुई जो हस्तिनापुर के अतिशय में चार चाँद लगा रही हैं।

१०. विश्व में अनोखी १०८ फुट मूर्ति निर्माण की प्रेरणा-विश्व के अप्रतिम आश्चर्य के रूप में १०८ फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की खड्गासन प्रतिमा के निर्माण का कार्य मांगीतुंगी (महा.) के पर्वत पर पूज्य माताजी की प्रेरणा से द्रुतगति से चल रहा है। युगों-युगों तक जिनशासन की महिमा को विकसित करने वाली यह प्रतिमा जैन संस्कृति के विशाल व्यक्तित्व का परिचय भी जनमानस को प्रदान करेगी।

११. शिरडी (महाराष्ट्र) में ज्ञानतीर्थ-शिरडी (महाराष्ट्र) को जैन संस्कृति केन्द्र के रूप में स्थापित करने हेतु वहाँ पर 'ज्ञानतीर्थ' के निर्माण की योजना मूर्त रूप ले रही है, जिसमें पूज्य माताजी के निर्देशानुसार भगवान पार्श्वनाथ की विशाल प्रतिमा विराजमान करके विशेष निर्माण सम्पन्न किया जा रहा है।

१२. जृम्भिका तीर्थ विकास की प्रेरणा-भगवान महावीर स्वामी की कैवल्य भूमि जृंभिका जो आज बिहार प्रान्त में जमुई के नाम से प्रसिद्ध है, वहाँ एक नूतन भूमि पर

जृम्भिका तीर्थ का निर्माण प्रस्तावित है, जो शीघ्र ही भक्तों के तीर्थयात्रा की श्रेणी में आएगा।

१३. धर्मप्रभावना के विविध आयाम-जम्बूद्वीप रचना के निर्माण का प्रमुख लक्ष्य लेकर 'दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान' नामक संस्था का राजधानी दिल्ली में पूज्य माताजी की प्रेरणा से सन् १९७२ में गठन किया गया। इसी संस्थान ने विविध धर्मप्रभावना के कार्यों का निष्पादन किया है। संस्थान स्थित 'वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला' द्वारा लाखों की संख्या में ग्रंथ प्रकाशन, चारों अनुयोगों के ज्ञान से समन्वित 'सम्यग्ज्ञान' मासिक पत्रिका का प्रकाशन, णमोकार महामंत्र बैंक इत्यादि कितनी ही कार्ययोजनाएँ जिनशासन की कीर्ति को निरंतर प्रसारित कर रही हैं।

पूज्य माताजी की प्रेरणा से सन् १९८२ में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा राजधानी दिल्ली से उद्घाटित 'जम्बूद्वीप ज्ञान ज्योति' ने तीन वर्ष तक सम्पूर्ण भारतवर्ष में जैनधर्म के सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार किया और अंत में यह ज्योति अखण्डरूप से तत्कालीन केन्द्रीय रक्षामंत्री-श्री पी.वी. नरसिंहाराव द्वारा जम्बूद्वीप स्थल पर स्थापित कर दी गयी। इसी प्रकार अप्रैल सन् १९९८ में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 'भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार' का राजधानी दिल्ली से प्रवर्तन किया, जो समस्त प्रांतों में प्रवर्तन के पश्चात् भगवान ऋषभदेव की दीक्षास्थली-प्रयाग तीर्थ पर निर्मित 'समवसरण मंदिर' में स्थापित होकर युगों-युगों तक के लिए भगवान ऋषभदेव के वास्तविक समवसरण की याद दिला रहा है। भगवान महावीर जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) से सन् २००३ में 'भगवान महावीर ज्योति रथ' का विविध प्रांतों में सफल प्रवर्तन भी इसी शृँखला की विशिष्ट कड़ी है।

जैनधर्म की प्राचीनता तथा भगवान ऋषभदेव के नाम एवं सिद्धांतों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए पूज्य माताजी ने सन् १९९७ में राजधानी दिल्ली में विशाल 'चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान' आयोजित कराया, जिसका झण्डारोहण पूर्व राष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा ने किया एवं दिल्ली के मुख्यमंत्री श्री साहिब सिंह वर्मा, मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री दिग्विजय सिंह तथा श्रीमती सुषमा स्वराज आदि अनेक कैबिनेट मंत्रियों ने उपस्थित होकर धर्मलाभ लिया। साथ ही 'भगवान ऋषभदेव जन्मजयंती वर्ष' (सन् १९९७-१९९८ में) तथा 'भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष' (सन् २००० में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा उद्घाटित) भी पूज्य माताजी की प्रेरणा द्वारा विविध धर्मप्रभावना के कार्यक्रमों सहित सम्पन्न हुए। विभिन्न टी.वी. चैनलों द्वारा पूज्य माताजी के 'तीर्थंकर जीवन दर्शन (सचित्र)' एवं अन्य विषयों पर प्रभावक प्रवचन लम्बे समय तक प्रसारित हुए एवं हो रहे हैं। पूज्य माताजी की प्रेरणा से

स्थापित 'अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महिला संगठन' अपनी सैकड़ों ईकाइयों द्वारा दिगम्बर जैन समाज की नारी शक्ति को सृजनात्मक कार्यों हेतु संगठित कर रहे है।

इसके अतिरिक्त कितने ही अन्य धर्मप्रभावना के कार्य पूज्य माताजी ने सम्पन्न किये हैं जिनका यहाँ लेखन तो संभव नहीं है, किन्तु आज पूरा समाज उनके कार्यकलापों से परिचित होकर उन्हें कर्मठता की मूर्ति के रूप में पहचानता है।

१४. संघर्ष विजेत्री-पूज्य माताजी ने प्रारंभ से अपना प्रमुख लक्ष्य बनाया- प्रत्येक कार्य आगमानुकूल ही करना। पुनः उन कार्यों के निष्पादन में जो भी विघ्न आते हैं, उन्हें बहुत ही शांतिपूर्वक झेलकर पूरी तन्मयता के साथ उस कार्य को परिपूर्ण करना उनकी विशेषता रही है। उनका पूरा जीवन आर्ष परम्परा का संरक्षण करते हुए अपने मूलगुणों में बाधा न आने देकर जिनधर्म की अधिकाधिक प्रभावना के साथ व्यतीत हुआ है।

१५. भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्त्राब्दि महोत्सव का आयोजन-२३वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की जन्मभूमि वाराणसी में ६ जनवरी २००५ को पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं ससंघ सानिध्य में 'भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्त्राब्दि महोत्सव' का उद्घाटन किया गया। भगवान की केवलज्ञान कल्याणक भूमि 'अहिच्छत्र', निर्वाणभूमि 'श्री सम्मेदशिखर जी' इत्यादि अनेकानेक तीर्थों पर विविध आयोजनों के साथ यह वर्ष मनाया गया। वर्ष २००६ को ''सम्मेदशिखर वर्ष'' के रूप में मनाने की प्रेरणा पूज्य माताजी ने प्रदान की, ताकि तन-मन-धन से दिगम्बर जैन समाज अपने महान तीर्थराज 'श्री सम्मेदशिखर जी' के प्रति समर्पित हो सके। पुनः दिसम्बर २००७ में अहिच्छत्र में आयोजित 'सहस्त्राब्दि महामस्तकाभिषेक' के साथ इस त्रिवर्षीय महोत्सव का समापन किया गया।

१६. शताब्दी का अभूतपूर्व अवसर : दीक्षा स्वर्ण जयंती -वैशाख कृष्णा दूज, वी.नि.सं. २५३२ अर्थात् १५ अप्रैल २००६ को अपनी आर्यिका दीक्षा के ५० वर्ष पूर्ण करने वाली पूज्य माताजी वर्तमान दिगम्बर जैन साधु परम्परा में सर्वाधिक प्राचीन दीक्षित होने के गौरव से युक्त होकर हम सभी के लिए अतिशयकारी प्राचीन प्रतिमा के सदृश बन गईं। जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में १४ से १६ अप्रैल २००६ तक **'गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती महोत्सव'** का भव्य आयोजन करके समस्त समाज ने पूज्य माताजी के श्रीचरणों में अपनी विनम्र विनयांजलि अर्पित की।

१७. अमृतमय हों वर्ष तुम्हारे : हीरक जयंती महोत्सव-जिनकी दीर्घकालिक तपस्या के वर्षों की गिनती जानकर अनेक आचार्य, मुनि, आर्यिकाएँ इत्यादि भी इस बात को कहते हुए गौरव का अनुभव करते हैं कि आज जितनी मेरी उम्र भी नहीं है उससे अधिक तो पूज्य माताजी की दीक्षा आयु है, अर्थात् १८ वर्ष की उम्र से त्याग मार्ग पर जिन्होंने कदम

जीवन के ५९ वर्ष भी उन्होंने निर्विघ्नतापूर्वक पूर्ण किये हैं। इसीलिए इनके ७५वें जन्मदिवस पर १२ से १४ अक्टूबर २००८ को राष्ट्रीय स्तर पर हीरक जयंती महोत्सव मनाया गया।

१८. विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का उद्घाटन किया राष्ट्रपति जी ने-२१ दिसम्बर २००८ को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में पूज्य माताजी की प्रेरणा से आयोजित विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का उद्घाटन भारत की प्रथम महिला राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील के करकमलों से हुआ। पुनः सन् २००९ "शांति वर्ष" में पूरे देश में विश्व की शांति के लिए धार्मिक अनुष्ठान एवं संगोष्ठियों के कार्यक्रम आयोजित किए गए।

१९. 'प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर वर्ष' मनाने की प्रेरणा-बीसवीं सदी के प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज के महान उपकारों से जन-जन को परिचित कराने के उद्देश्य से पूज्य माताजी ने वर्ष २०१० को "प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर वर्ष" के रूप में मनाने की प्रेरणा समस्त समाज को प्रदान की। इस वर्ष का उद्घाटन ज्येष्ठ कृ. चतुर्दशी, ११ जून २०१० को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में भगवान शांतिनाथ जन्म-दीक्षा एवं निर्वाणकल्याणक के शुभ दिवस किया गया तथा ज्येष्ठ कृ. चतुर्दशी, ३१ मई २०११ तक यह वर्ष पूरे देश के विभिन्न अंचलों में अनेक धर्मप्रभावनात्मक कार्यक्रमों के साथ विभिन्न आयोजनोंपूर्वक मनाया गया है।

ऐसी महान चतुर्मुखी प्रतिभा की धनी पूज्य माताजी के चरणों में भावभीना कोटिशः नमन है तथा भगवान जिनेन्द्र से यही प्रार्थना है कि उनके इस पवित्र त्यागमयी जीवन का हमें शताब्दी महोत्सव भी मनाने का लाभ प्राप्त हो तथा आपके द्वारा नया-नया साहित्य जनता को प्राप्त होता रहे, यही मंगलकामना है।

एक अद्वितीय जैन केन्द्र

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान - जम्बूद्वीप

—स्वस्तिश्री कर्मयोगी पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी

पिछले तीन दशकों से राजधानी दिल्ली की उत्तर दिशा में उत्तरप्रदेश के जिला मेरठ स्थित पौराणिक तीर्थ **हस्तिनापुर** में 'जम्बूद्वीप' नाम से एक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय आकर्षण का केन्द्र अवस्थित है। २०० फुट के व्यास में निर्मित जैन भूगोल की अद्वितीय रचना **'जम्बूद्वीप'** के अन्दर हल्के गुलाबी संगमरमर से निर्मित १०१ फुट ऊँचे **सुमेरु पर्वत** की शोभा आज किसके मन को आकर्षित नहीं करती है?

प्राचीन जैन साहित्य एवं भूगोल के परिचायक, वैज्ञानिकों के लिए शोध केन्द्र, आध्यात्मिक उन्नयन के लिए पवित्र स्थान, मानसिक शांति एवं जिनेन्द्र भगवान की पूजन-भक्ति के सम्पूर्ण साधनों तथा समस्त आधुनिक सुविधाओं की उपलब्धता सहित इस अनुपम तीर्थ की जनक संस्था का नाम है-**दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान (रजि.)**। जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा से १९७२ में इस संस्थान का सूत्रपात किया गया। दिगम्बर जैन इंस्टीट्यूट ऑफ कॉस्मोग्राफिक रिसर्च **(Digambar Jain Institute of Cosmographic Research)** के नाम से प्रसिद्ध इस संस्थान का आधारभूत लक्ष्य था-जम्बूद्वीप का निर्माण और यह जम्बूद्वीप ही अंततः संस्थान का मुख्य कार्यालय बन गया।

जंबूद्वीप की ३० एकड़ पवित्र भूमि पर संस्थान के द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं/रचनाओं का संक्षिप्त विवरण निम्नांकित है-

१. जंबूद्वीप रचना-जिनेन्द्र भगवान की २०७ प्रतिमाओं से पावन भारतीय शिल्प और जैन भूगोल का अद्वितीय उदाहरण, आधुनिक आकर्षणों-बिजली के फौव्वारे, नौका-विहार इत्यादि सहित।

२. कमल मंदिर-भगवान महावीर की अतिशयकारी खड्गासन प्रतिमा इस मंदिर में विराजमान हैं।

३. ध्यान मंदिर-२४ तीर्थंकर भगवन्तों की प्रतिमाओं सहित **'ह्रीं'** रचना इस मंदिर में विराजमान हैं, जो कि 'ध्यान' (Meditation) करने हेतु उत्तमोत्तम माध्यम हैं।

४. त्रिमूर्ति मंदिर-भगवान आदिनाथ, भरत एवं बाहुबली की खड्गासन प्रतिमाओं

से इस मंदिर का नाम सार्थक है। कमल पर विराजमान भगवान नेमिनाथ एवं पार्श्वनाथ से इस मंदिर की शोभा द्विगुणित हो गयी है।

५. वासुपूज्य मंदिर-इस मंदिर में १२वें तीर्थंकर-वासुपूज्य स्वामी की खड्गासन प्रतिमा विराजमान हैं।

६. शांतिनाथ मंदिर-जिन भगवन्तों के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान कल्याणकों से हस्तिनापुर की भूमि परम-पावन हुई है, उन शांति-कुंथु और अरहनाथ भगवंतों की खड्गासन प्रतिमाएँ इस मंदिर में विराजमान हैं।

७. ॐ मंदिर-अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठियों की प्रतिमाओं सहित ॐ (ओम) रचना इस मंदिर में विराजित है।

८. विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर-इस मंदिर में विदेह क्षेत्र के विद्यमान २० तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ बीस कमलों पर विराजमान हैं।

९. सहस्त्रकूट मंदिर-जिनेन्द्र भगवान की १००८ प्रतिमाओं सहित।

१०. भगवान ऋषभदेव मंदिर-धातु निर्मित भगवान ऋषभदेव की मूलनायक प्रतिमा एवं अन्य जिन प्रतिमाओं सहित।

११. भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ-'भगवान ऋषभदेव अन्तर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष' में निर्मित, भगवान के जीवन चरित्र को प्रदर्शित करने वाला, ८ प्रतिमाओं से समन्वित ३१ फुट ऊँचा कीर्तिस्तंभ।

१२. तेरहद्वीप जिनालय-इस मंदिर के अंदर मध्यलोक के तेरहद्वीपों की अकृत्रिम रचना का अति सुन्दरता के साथ दिग्दर्शन कराया गया है, जिसमें पंचमेरु पर्वतों के साथ-साथ कुल २१२७ प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

१३. अष्टापद दिगम्बर जैन मंदिर-इस मंदिर के अंदर प्रथम जैन तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की निर्वाणभूमि अष्टापद-कैलाशपर्वत की आकर्षक प्रतिकृति विराजमान है। कैलाशपर्वत का ही दूसरा नाम अष्टापद है। ४ फरवरी २००० को लाल किला मैदान, दिल्ली में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा इस प्रतिकृति के समक्ष निर्वाणलाडू चढ़ाकर इसका उद्घाटन किया गया।

१४. नवग्रह शान्ति जिनमंदिर—पूज्य माताजी की पावन प्रेरणा से उत्तर भारत में प्रथम बार निर्मित इस नवग्रहशांति जिनमंदिर में नवग्रह अरिष्ट निवारक नव तीर्थंकरों की धातु निर्मित सुन्दर प्रतिमाएँ विराजमान हैं, जिनके दर्शन-पूजन करके भक्तगण अपने ग्रहों की शांति करते हुए देखे जाते हैं।

१५. तीर्थंकरत्रय की विशाल प्रतिमाएँ—हस्तिनापुर में जन्मे तीर्थंकर श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ भगवान की ३१-३१ फुट की खड्गासन प्रतिमाएँ पूज्य माताजी की प्रेरणा से जम्बूद्वीप स्थल पर विराजमान हुई हैं, जिनका विशाल मंदिर भी प्रस्तावित है।

१६. तीनलोक की भव्य रचना—त्रिलोकसार, तिलोयपण्णत्ति आदि करणानुयोग ग्रंथों के अनुसार तीन लोक की सुन्दर रचना का निर्माण भी पूज्य माताजी की प्रेरणा का ही सुफल है। इसमें अत्याधुनिक सुविधा के लिए लिफ्ट लगाई गई है, जिससे सभी भक्तगण सिद्धशिला तक के दर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

१७. जम्बूद्वीप पुस्तकालय—प्राचीन हस्तलिखित एवं प्रकाशित लगभग १५००० ग्रंथों एवं पुस्तकों के संग्रह सहित।

१८. जम्बूद्वीप औषधालय

१९. ज्ञानमती कला मंदिरम्—हस्तिनापुर के पौराणिक इतिहास को प्रदर्शित करने वाली झांकियों सहित।

२०. ज्ञानमती हीरक जयंती एक्सप्रेस—विशेष कृत्रिम रेल, जिसमें चौबीसों तीर्थंकरों की १६जन्मभूमियों का विविध झाँकियों एवं चित्रावली के माध्यम से मनमोहक प्रस्तुतीकरण किया गया है।

२१. वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला—१९७२ में संस्थापित इस ग्रंथमाला द्वारा अब तक लाखों की संख्या में लगभग ३०० ग्रंथों एवं पुस्तकों के संस्करणों का प्रकाशन हो चुका है।

२२. सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका—यह पत्रिका सन् १९७४ से लगातार प्रकाशित हो रही है, जिसमें जैन शास्त्रों के साररूप लेखों एवं अन्य महत्वपूर्ण कार्यक्रमों का संकलन एक स्थान पर प्राप्त होता है।

२३. राजा श्रेयांस भोजनशाला—आने वाले दर्शनार्थियों को प्रतिदिन शुद्ध (जैनचर्या के अनुरूप) भोजन उपलब्ध कराने वाला यह दिगम्बर जैन समाज का प्रथम भोजनालय है, जहाँ एक साथ ५०० लोग बैठकर भोजन कर सकते हैं।

२४. धर्मशालाएँ—२०० से अधिक फ्लैट, बंगले इत्यादि, जिनमें ठहरने संबंधी सभी आधुनिक सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

२५. मनोरंजन के साधन—तरह-तरह के झूले, बच्चों की रेल, हँसी के गोलगप्पे, नौका विहार, फौव्वारे, हरे-भरे लॉन, पूरे कैम्पस में घूमने के लिए ऐरावत हाथी (मोटर से संचालित), बिजली की आकर्षक व्यवस्था, सुन्दर प्राकृतिक दृश्य

इत्यादि बरबस ही दर्शनार्थियों को इस भव्य रचना की तुलना 'स्वर्ग' से करने के लिए प्रेरित करते हैं।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा आयोजित सामाजिक एवं शैक्षणिक कार्यक्रम

अक्टूबर १९८१-जम्बूद्वीप (हस्तिनापुर) स्थल पर **'जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति सेमिनार'**।

३१ अक्टूबर १९८२-फिक्की ऑडिटोरियम-दिल्ली में **'जम्बूद्वीप सेमिनार'** जिसका उद्घाटन श्री राजीव गांधी, तत्कालीन संसद सदस्य द्वारा किया गया।

अप्रैल १९८५-जम्बूद्वीप (हस्तिनापुर) स्थल पर **'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान'** विषय पर अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार, जिसका उद्घाटन उ.प्र. के तत्कालीन मंत्री प्रोफेसर वासुदेव सिंह द्वारा किया गया।

जून १९८२ से अप्रैल १९८५-लालकिला मैदान, दिल्ली से तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरागांधी द्वारा ४ जून, १९८२ को पूरे देश में भ्रमण करने हेतु **'जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति'** रथ का उद्घाटन किया गया। जनसाधारण में अहिंसा, चारित्र-निर्माण तथा विश्व बन्धुत्व के संदेश का प्रचार-प्रसार करते हुए १०४५ दिन तक देश भर में भ्रमण करने के पश्चात् यह ज्ञान ज्योति तत्कालीन रक्षामंत्री श्री पी.वी. नरसिम्हा राव (भूतपूर्व प्रधानमंत्री) द्वारा जम्बूद्वीप के मुख्य द्वार के समक्ष सदैव के लिए स्थापित कर दी गई।

१९९२-**'अंतर्राज्यीय चरित्र निर्माण संगोष्ठी'** का जंबूद्वीप स्थल पर श्री नेमीचंद जैन, विधायक (मध्यप्रदेश) की अध्यक्षता में आयोजन किया गया।

'जैन गणित' एवं **'चारित्र निर्माण'** आदि विषयों पर हुई संगोष्ठियाँ **मेरठ विश्वविद्यालय एवं दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के संयुक्त तत्वावधान में** आयोजित की गईं।

१९९३-अयोध्या में अवध विश्वविद्यालय-फैजाबाद के संयुक्त तत्वावधान में **'भारतीय संस्कृति के आद्य प्रणेता भगवान ऋषभदेव'** विषय पर संगोष्ठी।

अक्टूबर १९९५-मेरठ विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्वावधान में पंचदिवसीय **'गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती साहित्य संगोष्ठी-९५'**।

मार्च-अप्रैल १९९८-तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा

९ अप्रैल १९९८ को तालकटोरा स्टेडियम, दिल्ली से देश भर में भ्रमण करने हेतु **'भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ'** का उद्घाटन। ३ वर्ष तक देशभर में तीर्थंकर भगवन्तों के सर्वोदयी सिद्धांतों एवं जैनधर्म की प्राचीनता का प्रचार-प्रसार करने के पश्चात् यह समवसरण इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश द्वारा तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग तीर्थ (इलाहाबाद) में स्थापित कर दिया गया।

अक्टूबर १९९८-जम्बूद्वीप स्थल पर **'राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन',** जिसका उद्घाटन किया गया-स्वर्गीय श्री राजेश पायलट (तत्कालीन संसद सदस्य द्वारा)।

फरवरी २०००-तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा ४ फरवरी २००० को लाल किला मैदान, दिल्ली में एक वर्ष तक चलने वाले **'भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष'** का उद्घाटन किया गया।

इस युग में जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव पर १००८ संगोष्ठियों की शृंखला, भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभों का निर्माण तथा अन्य अनेक सामाजिक एवं शैक्षणिक कार्यक्रम राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस वर्ष के अंतर्गत आयोजित किये गये।

टोरण्टो, कनाडा, न्यूजर्सी आदि विदेश की भूमियों पर भी इन्हीं प्रेरणाओं के माध्यम से ४ फरवरी २००० को निर्वाण महामहोत्सव मनाया गया।

जून २०००-जम्बूद्वीप स्थल पर ११ जून २००० को **'जैनधर्म की प्राचीनता'** विषय पर राष्ट्रीय सेमिनार आयोजित किया गया।

फरवरी २००१-भगवान ऋषभदेव की दीक्षाभूमि-प्रयाग (इलाहाबाद) में **'तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ'** का नवनिर्माण। इस तीर्थ पर भगवान के दीक्षा कल्याणक के प्रतीकस्वरूप धातु के वटवृक्ष के नीचे ध्यान में लीन महायोगी ऋषभदेव की सवा पांच फुट उत्तुंग पिच्छी-कमण्डलु सहित खड्गासन प्रतिमा, केवलज्ञान कल्याणक के प्रतीकस्वरूप भगवान की चतुर्मुखी प्रतिमा सहित दिव्य समवसरण रचना तथा निर्वाण कल्याणक के प्रतीक स्वरूप ५१ फुट उत्तुंग 'कैलाशपर्वत' की भव्य रचना पर भगवान ऋषभदेव की १४ फुट उत्तुंग अत्यंत मनोहारी लालवर्णी पद्मासन प्रतिमा तथा तीन चौबीसी के प्रतीक स्वरूप ७२ जिन प्रतिमाएँ विराजमान हैं। 'ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ' भी स्थापित है। ४ से ८ फरवरी २००१ तक 'भगवान ऋषभदेव पंचकल्याणक प्रतिष्ठा' एवं १००८ महाकुंभों से कैलाशपर्वत पर प्रतिष्ठित भगवान ऋषभदेव का 'महाकुंभमस्तकाभिषेक' कार्यक्रम।

सन् २००३-२००४-भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) में **'नंद्यावर्त महल तीर्थ'** का निर्माण। भगवान महावीर मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर, नवग्रहशांति जिनमंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर और नंद्यावर्त महल (भगवान महावीर का जन्म महल) एवं उसमें स्थापित भगवान शांतिनाथ जिनालय इस तीर्थ के मुख्य आकर्षण हैं। महावीर की जन्मभूमि के प्रचार-प्रसार हेतु **भगवान महावीर ज्योति रथ** सम्पूर्ण भारतवर्ष में प्रवर्तन कर चुका है।

सन् २००५-२००७-भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव-६ जनवरी २००५ को जन्मभूमि वाराणसी से इसका भव्य उद्घाटन होकर पूरे एक वर्ष तक (२७ दिसम्बर २००५ तक) इसे विभिन्न आयोजनों के साथ मनाया गया।

पुनः सन् २००६ में पूज्य माताजी ने भगवान पार्श्वनाथ निर्वाणभूमि ''सम्मेदशिखर वर्ष'' घोषित किया तथा दिसम्बर २००७ में केवलज्ञान भूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर भगवान पार्श्वनाथ सहस्राब्दि महोत्सव का राष्ट्रीय कार्यक्रम आयोजित करके ४ जनवरी २००८ को भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव का समापन किया।

विशेषरूप से इस संस्थान द्वारा २१ दिसम्बर २००८ को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में 'विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन' का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ससंघ के सानिध्य में भारत गणतंत्र की राष्ट्रपति महामहिम श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील के करकमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर राष्ट्रपति जी अपने पति डॉ. देवीसिंह शेखावत के साथ सम्मेलन में पधारीं। कार्यक्रम में उत्तरप्रदेश के राज्यपाल श्री टी.वी. राजेश्वर तथा स्वास्थ्य मंत्री श्री अनंत कुमार मिश्रा भी पधारे। इसी अवसर पर पूज्य माताजी द्वारा वर्ष २००९ को ''शांति वर्ष'' के रूप में मनाने की घोषणा की गई। यह 'शांति वर्ष-२००९' वर्तमान में समस्त जैन समाज द्वारा भारत के विभिन्न प्रान्तों में अनेक कार्यक्रमों के माध्यम से मनाया गया।

इस संस्थान के द्वारा समय-समय पर विविध पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं एवं धार्मिक कार्यक्रम सम्पन्न होते रहते हैं। संस्थान के अद्भुत कार्यकलाप की श्रेणी में है-**णमोकार महामंत्र बैंक,** जहाँ प्रतिवर्ष श्रद्धालु भक्तों द्वारा लाखों की संख्या में णमोकार मंत्र लिखकर जमा कराए जाते हैं, तुमकूर (कर्नाटक) से एक करोड़ मंत्र एवं उदयपुर (राज.) से एक करोड़ मंत्र सन् २००६ में इस बैंक में जमा हुए अतः

उन्हें विशेष रूप से सम्मानित किया गया। करोड़ों महामंत्र विश्वशांति की किरणें प्रसारित करने में अतिशय धरोहरस्वरूप हैं।

संस्थान द्वारा दिये जाने वाले पुरस्कार

गणिनी ज्ञानमती पुरस्कार-सन् १९९५ से प्रत्येक पाँच वर्ष में यह पुरस्कार जैन धर्म पर उच्चस्तरीय शोध तथा संस्थान की शैक्षणिक गतिविधियों में सहयोग हेतु किसी भी जैन विद्वान या समर्पित कार्यकर्ता को १,००,०००/-(एक लाख) रुपये की नगद राशि, प्रशस्ति-पत्र इत्यादि के साथ प्रदान किया जाता था। अप्रैल २००६ में ''गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती महोत्सव'' के अवसर पर संस्थान द्वारा प्रतिवर्ष इस पुरस्कार को देने का निर्णय लिया गया अतः अब यह पुरस्कार प्रतिवर्ष किसी वरिष्ठ विद्वान अथवा विशिष्ट समाजसेवी को प्रदान किया जाता है।

आर्यिका रत्नमती पुरस्कार-सन् १९९९ में स्थापित ११,०००/- रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

जम्बूद्वीप पुरस्कार-सन् २००० में स्थापित २५,०००/- रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

श्री छोटेलाल जैन पुरस्कार-सन् २००३ में स्थापित ११,०००/-रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

नंद्यावर्त महल पुरस्कार-सन् २००४ से प्रारंभ २५०००/-रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

उपरोक्त पुरस्कारों के अतिरिक्त 'भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव वर्ष' के अवसर पर घोषित **'भगवान ऋषभदेव नेशनल अवार्ड', 'ब्राह्मी पुरस्कार', 'भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर पुरस्कार', 'गणिनी ज्ञानमती दीक्षा स्वर्ण जयंती पुरस्कार'** एवं **'हीरक जयंती पुरस्कार'** भी संस्थान द्वारा प्रदान किये जा चुके हैं।

इलाहाबाद-उ.प्र. में
तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग तीर्थ का निर्माण

सन् २००१ में संस्थान के अन्तर्गत भगवान ऋषभदेव दीक्षा एवं केवलज्ञानकल्याणक भूमि प्रयाग (उ.प्र.) में इस तीर्थ का निर्माण इलाहाबाद-बनारस हाइवे पर किया गया है। इस तीर्थ परिसर में ''ऋषभदेव दीक्षाकल्याणक तपोवन'' एवं समवसरण रचना मंदिर के साथ-साथ भगवान की निर्वाणभूमि के प्रतीक में विशाल कैलाशपर्वत का भी निर्माण हुआ। इसमें ७२ चैत्यालय हैं तथा पर्वत के नीचे गुफा मंदिर में भगवान

ऋषभदेव की अतिशयकारी धातु प्रतिमा (सवा तीन फुट पद्मासन) विराजमान है। पर्वत के ईशान कोण में निर्मित ३१ फुट ऊँचे कीर्तिस्तंभ में ऋषभदेव-महावीर स्वामी की ८ प्रतिमाएँ हैं। क्षेत्र पर यात्रियों के आवास-भोजन आदि की सम्पूर्ण आधुनिक व्यवस्था उपलब्ध है। इस तीर्थ का संचालन संस्थान के अंतर्गत गठित उपसमिति के द्वारा किया जा रहा है।

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ का विकास

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) का विकास करने हेतु संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति नाम से एक उपसमिति बनाई गई, जिसके माध्यम से वहाँ 'नंद्यावर्त महल' तीर्थ परिसर का निर्माण किया गया। वहाँ नंद्यावर्त महल तीर्थ परिसर में भगवान शांतिनाथ चैत्यालय के अतिरिक्त विश्वशांति महावीर मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर, नवग्रहशांति मंदिर तथा तीन मंजिल का त्रिकाल चौबीसी मंदिर है। वहाँ यात्रियों के लिए आधुनिक सुविधायुक्त आवास एवं भोजन की समुचित व्यवस्था है।

उपरोक्त सभी निर्माण योजनाएं, सामाजिक, धार्मिक तथा शैक्षणिक कार्यक्रम **पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी** की पावन प्रेरणा से उनके ससंघ सानिध्य में इस संस्थान द्वारा आयोजित किये गये हैं। संघस्थ **प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी** का मार्गदर्शन एवं **पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज** का निर्देशन इन समस्त कार्यों में अत्यन्त महत्वपूर्ण रहता है।

भगवान पुष्पदंतनाथ जन्मभूमि काकंदी तीर्थ का विकास

पूज्य माताजी की प्रेरणा से गठित "अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थंकर जन्मभूमि विकास कमेटी" द्वारा भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकासकार्य सम्पन्न किया गया है। तीर्थ पर भगवान पुष्पदंतनाथ की सवा ९ फुट पद्मासन प्रतिमा सुन्दर जिनमंदिर में विराजमान होकर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा से प्रतिष्ठित हो चुकी हैं तथा भगवान पुष्पदंतनाथ कीर्तिस्तंभ तीर्थ की कीर्ति को दिग् दिगन्तव्यापी ख्याति प्राप्त कराने में निमित्तभूत है।

इस प्रकार यह संस्थान अपनी विभिन्न समर्पित कार्य योजनाओं द्वारा समाज की सेवा में प्रतिक्षण संलग्न है। मानसिक शांति, आध्यात्मिक विकास, प्राकृतिक सौन्दर्य एवं अन्य अनेक लाभ एक साथ प्राप्त करने हेतु यह संस्थान जंबूद्वीप दर्शन के लिए आपको सादर आमंत्रित करता है।

प्राचीन एवं अर्वाचीन हस्तिनापुर

—पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर

भगवान आदिनाथ का प्रथम आहार—

हस्तिनापुर तीर्थ तीर्थों का राजा है। यह धर्म प्रचार का आद्य केन्द्र रहा है। यहीं से धर्म की परम्परा का शुभारंभ हुआ। यह वह महातीर्थ है जहाँ से दान की प्रेरणा संसार ने प्राप्त की।

भगवान आदिनाथ ने जब दीक्षा धारण की उस समय उनके देखा-देखी चार हजार राजाओं ने भी दीक्षा धारण की। भगवान ने केशलोंच किया, उन सबने भी केशलोंच किया, भगवान ने वस्त्रों का त्याग किया, उसी प्रकार से उन राजाओं ने भी नग्न दिगम्बर अवस्था धारण कर ली। भगवान हाथ लटकाकर ध्यान मुद्रा में खड़े हो गये, वे सभी राजागण भी उसी प्रकार से ध्यान करने लगे किन्तु तीन दिन के बाद उन सभी को भूख-प्यास की बाधा सताने लगी। वे बार-बार भगवान की तरफ देखते किन्तु भगवान तो मौन धारण करके नासाग्र दृष्टि किये हुए अचल खड़े थे, एक-दो दिन के लिए नहीं पूरे छह माह के लिए अतः उन राजाओं (मुनियों) ने बेचैन होकर जंगल के फल खाना एवं झरनों का पानी पीना प्रारंभ कर दिया।

उसी समय वन देवता ने प्रगट होकर उन्हें रोका कि—"मुनि वेश में इस प्रकार से अनर्गल प्रवृत्ति मत करो। यदि भूख-प्यास का कष्ट सहन नहीं हो पाता है, तो इस जगत पूज्य मुनि पद को छोड़ दो।" तब सभी राजाओं ने मुनि पद को छोड़कर अन्य वेश धारण कर लिये। किसी ने जटा बढ़ा ली, किसी ने बल्कल धारण कर ली, किसी ने भस्म लपेट ली, कोई कुटी बनाकर रहने लगे इत्यादि।

भगवान ऋषभदेव का छह माह के पश्चात् ध्यान विसर्जित हुआ, वैसे तो भगवान का बिना आहार किये भी काम चल सकता था किन्तु भविष्य में भी मुनि बनते रहें, मोक्षमार्ग चलता रहे, इसके लिए आहार के लिए निकले किन्तु उनको कहीं पर भी विधिपूर्वक एवं शुद्ध प्रासुक आहार नहीं मिल पा रहा था। सभी प्रदेशों में भ्रमण हो रहा था किन्तु कहीं भी दातार नहीं मिल रहा था। कारण यह था कि उनसे पूर्व में भोगभूमि की व्यवस्था थी। लोगों को जीवनयापन की सामग्री—भोजन, मकान, वस्त्र, आभूषण आदि सब कल्पवृक्षों से प्राप्त हो जाते थे। जब भोगभूमि की व्यवस्था समाप्त हुई, तब कर्मभूमि में कर्म करके जीवनोपयोगी सामग्री प्राप्त करने की कला भगवान के पिता नाभिराय ने एवं स्वयं भगवान ऋषभदेव ने सिखाई।

असि, मसि, कृषि, सेवा, शिल्प एवं वाणिज्य करके जीवन जीने का मार्ग बतलाया। सब कुछ बतलाया किन्तु दिगम्बर मुनियों को किस विधि से आहार दिया जावे, इस विधि को नहीं बतलाया। जिस इन्द्र ने भगवान ऋषभदेव के गर्भ में आने से छह माह पहले से रत्नवृष्टि प्रारंभ कर दी थी, पाँचों कल्याणकों में स्वयं इन्द्र प्रतिक्षण उपस्थित रहता था किन्तु जब भगवान प्रासुक आहार प्राप्त करने के लिए भ्रमण कर रहे थे, तब वह भी नहीं आ पाया।

सम्पूर्ण प्रदेशों में भ्रमण करने के पश्चात् हस्तिनापुर आगमन से पूर्व रात्रि के पिछले प्रहर में यहाँ के राजा श्रेयांस को सात स्वप्न दिखाई दिये, जिसमें प्रथम स्वप्न में सुदर्शन मेरु पर्वत दिखाई दिया। प्रातःकाल में उन्होंने ज्योतिषी को बुलाकर उन स्वप्नों का फल पूछा, तब ज्योतिषी ने बताया कि जिनका मेरु पर्वत पर अभिषेक हुआ है, जो सुमेरु के समान महान् हैं, ऐसे तीर्थंकर भगवान के दर्शनों का लाभ प्राप्त होगा।

कुछ ही देर बाद भगवान ऋषभदेव का हस्तिनापुर नगरी में मंगल पदार्पण हुआ। भगवान का दर्शन करते ही राजा श्रेयांस को जातिस्मरण हो गया, उन्हें आठ भवपूर्व का समरण हो आया। जब भगवान ऋषभदेव राजा वज्रजंघ की अवस्था में व स्वयं राजा श्रेयांस वज्रजंघ की पत्नी रानी श्रीमती की अवस्था में थे और उन्होंने चारण ऋद्धिधारी मुनियों को नवधा भक्तिपूर्वक आहारदान दिया था, तभी राजा श्रेयांस समझ गये कि भगवान आहार के लिए निकले हैं।

यह ज्ञान होते ही वे अपने राजमहल के दरवाजे पर खड़े होकर मंगल वस्तुओं को हाथ में लेकर भगवान का पड़गाहन करने लगे।

हे स्वामी ! नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु अत्र तिष्ठ तिष्ठ.....विधि मिलते ही भगवान राजा श्रेयांस के आगे खड़े हो गये। राजा श्रेयांस ने पुनः निवेदन किया — मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि, आहार जल शुद्ध है, भोजनशाला में प्रवेश कीजिये। चौके में ले जाकर पाद प्रक्षाल करके पूजन की एवं इक्षुरस का आहार दिया। आहार होते ही देवों ने पंचाश्चर्य की वृष्टि की। चार प्रकार के दानों में से केवल आहार दान के अवसर पर ही पंचाश्चर्य वृष्टि होती है। भगवान जैसे पात्र का लाभ मिलने पर उस राजा श्रेयांस की भोजनशाला में उस दिन भोजन अक्षय हो गया। शहर के सारे नर-नारी भोजन कर गये, तब भी भोजन जितना था उतना ही बना रहा।

एक वर्ष के उपवास के बाद हस्तिनापुर में जब भगवान का प्रथम आहार हुआ तो समस्त पृथ्वी मंडल पर हस्तिनापुर के नाम की धूम मच गई, सर्वत्र राजा श्रेयांस की प्रशंसा होने लगी। अयोध्या से भरत चक्रवर्ती ने आकर राजा श्रेयांस का भव्य

समारोहपूर्वक सम्मान किया तथा प्रथम आहार की स्मृति में यहाँ एक विशाल स्तूप का निर्माण कराया।

दान के कारण ही भगवान आदिनाथ के साथ राजा श्रेयांस को भी याद करते हैं। जिस दिन यहाँ प्रथम आहार दान हुआ, वह दिन वैशाख सुदी तीज का था। तब से आज तक वह दिन प्रतिवर्ष पर्व के रूप में मनाया जाता है। अब उसे आखा तीज या अक्षय तृतीया कहते हैं।

इस प्रकार दान की परम्परा हस्तिनापुर से प्रारंभ हुई। दान के कारण ही धर्म की परम्परा भी तब से अब तक बराबर चली आ रही है क्योंकि मंदिरों का निर्माण, मूर्तियों का निर्माण, शास्त्रों का प्रकाशन, मुनि संघों का विहार, दान से ही संभव है और यह दान श्रावकों के द्वारा ही होता है। श्रवणबेलगोल में एक हजार साल से खड़ी भगवान बाहुबली की विशाल प्रतिमा भी चामुण्डराय के दान का ही प्रतिफल है, जो कि असंख्य भव्य जीवों को दिगम्बरत्व का, आत्मशांति का पावन संदेश बिना बोले ही दे रही है।

यहाँ बनी यह जम्बूद्वीप की रचना भी संपूर्ण भारतवर्ष के लाखों नर-नारियों के द्वारा उदार भावों से प्रदत्त दान के कारण मात्र दस वर्ष में बनकर तैयार हो गई, जो कि सम्पूर्ण संसार के लिए आकर्षण का केन्द्र बन गई है। जम्बूद्वीप की रचना सारी दुनिया में अभी केवल यहाँ हस्तिनापुर में ही देखने को मिल सकती है। नंदीश्वर द्वीप की रचना, समवसरण की रचना तो अनेक स्थलों पर बनी है और बन रही है। यह हमारा व आप सबका परम सौभाग्य है कि हमारे जीवनकाल में ऐसी भव्य रचना बनकर तैयार हो गई और उसके दर्शनों का लाभ सभी को प्राप्त हो रहा है।

भगवान आदिनाथ के प्रथम आहार के उपलक्ष्य में वह तिथि पर्व के रूप में मनाई जाने लगी, वह दिन इतना महान हो गया कि कोई भी शुभ कार्य उस दिन बिना किसी ज्योतिषी से पूछे कर लिया जाता है। जितने विवाह अक्षय तृतीया के दिन होते हैं उतने शायद ही अन्य किसी दिन होते हों और तो और जब से भगवान का प्रथम आहार इक्षुरस का हुआ, तब से इस क्षेत्र में गन्ना भी अक्षय हो गया, जिधर देखों उधर गन्ना ही गन्ना नजर आता है। सड़क पर गाड़ी में आते-जाते बिना खाये मुँह मीठा हो जाता है। कदम-कदम पर गुड़, शक्कर बनता दिखाई देता है। हस्तिनापुर में आने वाले प्रत्येक यात्री को जम्बूद्वीप प्रवेश द्वार पर भगवान के आहार के प्रसाद रूप में यहाँ लगभग बारह महीने इक्षुरस पीने को मिलता है।

भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरहनाथ के चार-चार कल्याणक —

भगवान आदिनाथ के पश्चात् अनेक महापुरुषों का इस पुण्य धरा पर आगमन

होता रहा है। भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ एवं अरहनाथ के चार-चार कल्याणक यहाँ हुए हैं। तीनों तीर्थंकर चक्रवर्ती एवं कामदेव पद के धारी थे। तीनों तीर्थकरों ने यहाँ से समस्त छह खण्ड पृथ्वी पर राज्य किया किन्तु उन्हें शांति की प्राप्ति नहीं हुई। छियानवे हजार रानियाँ भी उन्हें सुख प्रदान नहीं कर सकीं अतएव उन्होंने सम्पूर्ण आरंभ परिग्रह का त्याग कर नग्न दिगम्बर अवस्था धारण की, मुनि बन गये। जैसा कि आज भी वैराग्यभावना में पढ़ा जाता है—

छोड़े चौदह रत्न नवों निधि, अरु छोड़े संग साथी।
कोटि अठारह घोड़े छोड़े, चौरासी लख हाथी।।
इत्यादिक संपति बहुतेरी जीरण तृण सम त्यागी।
नीति विचार नियोगी सुत को, राज दियो बड़भागी।।

भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरहनाथ ने महान तपश्चर्या करके दिव्य केवलज्ञान की प्राप्ति की। उनकी ज्ञान ज्योति के प्रकाश से अनेकों भव्य जीवों का मोक्षमार्ग प्रशस्त हुआ। अंत में उन्होंने सम्मेदशिखर से निर्वाण प्राप्त किया। आज प्रतिमाह हजारों लोग उन तीर्थंकरों की चरण रज से पवित्र उस पुण्यधरा की वंदना करने आते हैं। उस पुनीत माटी को मस्तक पर चढ़ाते हैं। उन तीनों तीर्थंकर भगवन्तों की ३१-३१ फुट विशाल खड्गासन प्रतिमाएँ जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में विराजमान हो जाने से तीर्थ का प्राचीन इतिहास जीवन्त हो गया है।

कौरव-पांडव की राजधानी—महाभारत की विश्व विख्यात घटना भगवान नेमीनाथ के समय में यहाँ घटित हुई। यह वही हस्तिनापुर है, जहाँ कौरव पांडव ने राज्य किया। सौ कौरव भी पाँव पांडवों को हरा नहीं सके। क्या कारण था? कौरव अनीतिवान थे, अन्यायी थे, अत्याचारी थे, ईर्ष्यालु थे, द्वेषी थे। उनमें अभिमान बाल्यकाल से ही कूट-कूट कर भरा हुआ था। पांडव प्रारंभ से धीर-वीर-गंभीर थे। सत्य आचरण करने वाले थे। न्याय-नीति से चलते थे। सहिष्णु थे। इसलिए पांडवों ने विजय प्राप्त की। यहाँ तक कि पांडव भी सती सीता की तरह अग्नि परीक्षा में सफल हुए। कौरवों के द्वारा बनाये गये जलते हुए लाक्षागृह से भी णमोकार महामंत्र का स्मरण करते हुए एक सुरंग के रास्ते से बच निकले।

वे दूसरी बार पुनः अग्नि परीक्षा में सफल हुए, जब शत्रुंजय में नग्न दिगम्बर मुनि अवस्था में ध्यान में लीन थे, उस समय दुर्योधन के भानजे कुर्युधर ने लोहे के आभूषण बनवाकर गरम करके पहना दिये। जिसके फलस्वरूप बाहर से उनका शरीर जल रहा था और भीतर से कर्म जल रहे थे। उसी समय सम्पूर्ण कर्म जलकर भस्म हो

गये और अंतकृत केवली बनकर तीन पांडवों ने निर्वाण प्राप्त किया और नकुल, सहदेव उपशम श्रेणी का आरोहरण करके ग्यारहवें गुणस्थान में मरण को प्राप्त करके सर्वार्थसिद्धि गये।

कौरव-पांडव तो आज भी घर-घर में देखने को मिलते हैं। यदि विजय प्राप्त करना है, तो पांडवों के मार्ग का अनुसरण करना चाहिए। सदैव न्याय-नीति से चलना चाहिए। तभी पांडवों की तरह यश की प्राप्ति होगी। धर्म की सदा जय होती है।

रक्षाबंधन पर्व—एक समय हस्तिनापुर में अकंपनाचार्य आदि सात सौ मुनियों का संघ आया हुआ था। उस समय यहाँ महापद्म चक्रवर्ती के पुत्र राजा पद्म राज्य करते थे। उनसे कारणवश बली मंत्री ने वरदान के रूप में सात दिन का राज्य माँग लिया। राज्य लेकर बली ने अपने पूर्व अपमान का बदला लेने के लिए जहाँ सात सौ मुनि विराजमान थे, वहाँ उनके चारों ओर यज्ञ के बहाने अग्नि प्रज्वलित कर दी। उपसर्ग समझकर सभी मुनिराज शांत परिणाम से ध्यान में लीन हो गये।

दूसरी तरफ उज्जैनी में विराजमान विष्णुकुमार मुनिराज को मिथिला नगरी में चातुर्मास कर रहे मुनिश्री श्रुतसागर जी के द्वारा भेजे गये क्षुल्लक श्री पुष्पदंत से सूचना प्राप्त हुई कि हस्तिनापुर में मुनियों पर घोर उपसर्ग हो रहा है और उसे आप ही दूर कर सकते हैं।

यह समाचार सुनकर परम करुणामूर्ति विष्णुकुमार मुनिराज के मन में साधर्मी मुनियों के प्रति तीव्र वात्सल्य की भावना जागृत हुई। तपस्या से उन्हें विक्रिया ऋद्धि उत्पन्न हो गई थी। वे वात्सल्य भावना से ओतप्रोत होकर उज्जैनी से चातुर्मास काल में हस्तिनापुर आते हैं। अपनी पूर्व अवस्था के भाई वहाँ के राजा पद्म को डांटते हैं। राजा उनसे निवेदन करते हैं—हे मुनिराज! आप ही इस उपसर्ग को दूर करने में समर्थ हैं, तब मुनि विष्णुकुमार ने वामन का वेष बनाकर बलि से तीन कदम जमीन दान में मांगी। बलि ने देने का संकल्प किया। मुनिराज ने विक्रिया ऋद्धि से विशाल शरीर बनाकर दो कदम में सारा अढ़ाई द्वीप नाप लिया, तीसरा पैर रखने की जगह नहीं मिली। चारों तरफ त्राहिमाम् होने लगा। रक्षा करो, क्षमा करो की ध्वनि गूंजने लगी। बलि ने भी क्षमा मांगी। मुनिराज तो क्षमा के भंडार होते ही हैं, उन्होंने बलि को क्षमा प्रदानकर की। उपसर्ग दूर होने पर विष्णुकुमार ने पुनः दीक्षा धारण की। सभी ने मिलकर विष्णुकुमार की बहुत भारी पूजा की।

अगले दिन श्रावकों ने भक्ति से मुनियों को सिवईं की खीर का आहार दिया और आपस में एक-दूसरे को रक्षा सूत्र बाँधे। यह निश्चय किया कि विष्णुकुमार मुनिराज

की तरह वात्सल्य भावनापूर्वक धर्म एवं धर्मायतनों की रक्षा करेंगे। तभी से वह दिन प्रतिवर्ष रक्षाबंधन पर्व के रूप में श्रावण सुदी पूर्णिमा को मनाया जाने लगा। इसी दिन बहनें भाइयों के हाथ में राखी बाँधती हैं। अब आगे से रक्षाबंधन के दिन हस्तिनापुर का स्मरण करें। देव-शास्त्र-गुरु के प्रति तन-मन-धन न्योछावर कर दें। साधर्मी के प्रति वात्सल्य की भावना रखें। तभी रक्षाबंधन पर्व मनाना सार्थक हो सकता है।

दर्शन प्रतिज्ञा में प्रसिद्ध मनोवती — गजमोती चढ़ाकर भगवान के दर्शन कर भोजन करने का अटल नियम निभाने वाली इतिहास प्रसिद्ध महिला मनोवती भी इसी हस्तिनापुर की थी। यह नियम उसने विवाह के पूर्व लिया था। विवाह के पश्चात् जब ससुराल गई, तो वहाँ संकोचवश कह नहीं पाई। तीन दिन तक उपवास हो गया। जब उसके पीहर में सूचना पहुँची, तो भाई आया, उसे एकांत में मनोवती ने सब बात बता दी। उसके भाई ने मनोवती के स्वसुर को बताया, तो उसके स्वसुर ने कहा कि हमारे यहाँ तो गजमोती का कोठार भरा है। तभी मनोवती ने गजमोती चढ़ाकर भगवान के दर्शन करके भोजन किया।

इसके बाद मनोवती को तो उसका भाई अपने घर लिवा ले गया। इधर उन मोतियों के चढ़ाने से इस परिवार पर राजकीय आपत्ति आ गई, जिसके कारण मनोवती के पति बुधसेन के छहों भाइयों ने मिलकर उन दोनों को घर से निकाल दिया। घर से निकलने के बाद मनोवती ने तब तक भोजन नहीं किया, जब तक गजमोती चढ़ाकर भगवान के दर्शनों का लाभ नहीं मिला। जब चलते-चलते थक गये, तो रास्ते में सो गये, पिछले रात्रि में उन्हें स्वप्न होता है कि तुम्हारे निकट ही मंदिर है शिला हटाकर दर्शन करो। उठकर संकेत के अनुसार शिला हटाते ही भगवान के दर्शन हुए। वहीं पर चढ़ाने के लिए गजमोती मिल गये। दर्शन करके भोजन किया। आगे चलकर पुण्ययोग से बुधसेन राजा के जमाई बन गये।

इधर वे छहों भाई अत्यन्त दरिद्र अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं। गाँव छोड़कर कार्य की तलाश में घूमते-घूमते छहों भाई, उनकी पत्नियाँ व माता-पिता सभी वहाँ पहुँचते हैं, जहाँ बुधसेन जिनमंदिर का निर्माण करा रहे थे। लोगों ने उन्हें बताया कि आप बुधसेन के यहाँ जाओ आपको वे काम पर लगा लेंगे। वे सभी वहाँ पहुँचे, उनको काम पर लगाया, बुधसेन मनोवती उन्हें पहचान गये अन्त में सबका मिलन हुआ। सभी भाइयों-भौजाइयों तथा माता-पिता ने क्षमायाचना की। धर्म की जय हुई। इस घटना से यही शिक्षा मिलती है कि आपस में सबको मिलकर रहना चाहिए। न मालूम

किसके पुण्ययोग से घर में सुख-शांति और समृद्धि होती है।

सुलोचना जयकुमार — महाराज सोम के पुत्र जयकुमार भरत चक्रवर्ती के प्रधान सेनापति हुए। उनकी धर्म परायणशील शिरोमणि धर्मपत्नी सुलोचना की भक्ति के कारण गंगा नदी के मध्य आया हुआ उपसर्ग दूर हुआ।

रोहिणी व्रत की कथा का घटनास्थल भी यही हस्तिनापुर तीर्थ है।

जम्बूद्वीप की रचना — अनेक घटनाओं की श्रृंखला के क्रम में एक और मजबूत कड़ी के रूप में जुड़ गई जम्बूद्वीप की रचना। इस रचना ने विस्मृत हस्तिनापुर को पुनः संसार के स्मृति पटल पर अंकित कर दिया। न केवल भारत के कोने-कोने में अपितु विश्वभर में जम्बूद्वीप रचना के दर्शन की चर्चा रहती है। जैन जगत में ही नहीं प्रत्युत्त वर्तमान दुनिया में पहली बार हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का विशाल खुले मैदान पर भव्य निर्माण हुआ है, जो कि गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी के ज्ञान व उनकी प्रेरणा का प्रतिफल है।

सन् १९६५ में श्रवणबेलगोल स्थित भगवान बाहुबली के चरणों में ध्यान करते हुए इन्हें तेरहद्वीप रचना के दिव्य दर्शन हुए थे, उसमें से एकमात्र जम्बूद्वीप को बीस वर्ष के पश्चात् यहाँ हस्तिनापुर में आकर साकार रूप प्राप्त हुआ। वर्तमान में जम्बूद्वीप रचना दर्शन के निमित्त से ही लाखों जैन-जैनेतर दर्शनार्थी हस्तिनापुर आने का सौभाग्य प्राप्त करते हैं।

तेरहद्वीप की स्वर्णिम रचना — पुनश्च उस पूरी तेरहद्वीप रचना का निर्माण भी पूज्य माताजी की प्रेरणा से जम्बूद्वीप तीर्थ परिसर में एक विशाल गोलाकार जिनालय के अन्दर हुई है। उसमें पंचमेरु पर्वत सहित ४५८ अकृत्रिम चैत्यालय, १७० समवसरण एवं ८२१ देवभवन आदि में कुल २१२७ जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं। इस स्वर्णिम रचना के दर्शन करके भक्तगण अभूतपूर्व आल्हाद का अनुभव करते हैं।

हस्तिनापुर आने वाले सभी दर्शनार्थियों के मुख से एक स्वर से यही कहते हुए सुनने में आता है कि हमें तो कल्पना भी नहीं थी कि इतनी आकर्षक जम्बूद्वीप एवं तेरहद्वीप की रचना बनी होगी, ऐसा लगता है मानो यहाँ स्वर्ग ही उतर आया हो।

तीन लोक की अद्वितीय रचना — करणानुयोग ग्रंथ के अनुसार पूज्य माताजी ने हस्तिनापुर की धरती पर तीन लोक की रचना भी बनाने की प्रेरणा दी, जिसके फलस्वरूप ५६ फुट उत्तुंग वह रचना भी बनकर तैयार हो गई है। इसमें अधोलोक में ७ नरक के साथ-साथ प्रथम पृथ्वी के खर-पंक भाग में भवनवासी देवों के जिनमंदिर, मध्यलोक में अकृत्रिम मंदिरों एवं ऊर्ध्वलोक में स्वर्ग की रचना, इन्द्रों के महल-मंदिर आदि तथा लोक के अग्रभाग पर अर्ध चन्द्राकार सिद्धशिला का रूपक दर्शाया गया है।

पूज्य माताजी ने जम्बूद्वीप आदि रचनाओं के निर्माण की प्रेरणा तो दी ही, साहित्य निर्माण के क्षेत्र में भी अद्भुत कीर्तिमान स्थापित किया है। अढ़ाई हजार वर्ष में दिगम्बर जैन समाज में ज्ञानमती माताजी पहली आर्यिका माता हैं, जिन्होंने ग्रंथों की रचना की है। अब से पहले के लिखे जितने भी ग्रंथ उपलब्ध होते हैं वे सब पुरुष वर्ग के द्वारा लिखे गये हैं, आचार्यों ने लिखे, मुनियों ने लिखे या पंडितों ने लिखे। किसी आर्यिका माता द्वारा लिखा एक भी ग्रंथ किसी ग्रंथ भंडार में देखने में नहीं आया।

पूज्य ज्ञानमती माताजी ने त्याग और संयम को धारण करते हुए एक-दो नहीं २५० से भी अधिक छोटे-बड़े ग्रंथों का सृजन किया। न्याय, व्याकरण, सिद्धांत, अध्यात्म आदि विविध विषयों के ग्रंथों की टीका आदि की। भक्तिपरक पूजाओं के निर्माण में उल्लेखनीय कार्य किया है। इन्द्रध्वज विधान, कल्पद्रुम विधान, सर्वतोभद्र विधान, जम्बूद्वीप विधान जैसी अनुपम कृतियों का सृजन किया। सभी वर्ग के व्यक्तियों को दृष्टि में रखकर माताजी ने विभिन्न रुचि के साहित्य की रचनाएँ की। प्राचीन धार्मिक कथाओं को उपन्यास की शैली में लिखा है। अब तक माताजी की कृतियों का प्रकाशन विभिन्न भाषाओं में दस लाख से अधिक मात्रा में हो चुका है।

पूज्य माताजी की लेखनी अभी भी चलती रहती है। आचार्य कुन्दकुन्ददेव द्वारा रचित समयसार की आचार्य अमृतचंद्र एवं आचार्य जयसेनकृत संस्कृत टीकाओं का हिन्दी अनुवाद किया। जो कि काफी समय पूर्व छपकर जन-जन के हाथों में पहुँच चुका है। इसी प्रकार उन्होंने षट्खण्डागम सूत्रग्रंथ की सोलहों पुस्तकों की "सिद्धान्तचिंतामणि" नामक सरल संस्कृत टीका भी ३१०७ पृष्ठों में पूर्ण करके समाज को प्रदान किया है। प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी द्वारा क्रमशः उनकी हिन्दी टीकाएँ लिखी जा रही हैं और वे भी यथाक्रम प्रकाशित हो रहे हैं। अन्य प्रकाशन कार्य भी सतत चल रहा है।

अनेक निर्माणात्मक एवं साहित्यिक, ऐतिहासिक कृतियों से समन्वित ऐसे दानतीर्थ हस्तिनापुर क्षेत्र का दर्शन महान् पुण्य फल को देने वाला है। यह तीर्थक्षेत्र युगों-युगों तक पृथ्वी तल पर धर्म की वर्षा करता रहे, यही मंगल भावना है।

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर **सन् २०००**

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के सहयोगी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत "वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला" की स्थापना सन् १९७२ में हुई। तब से अब तक लाखों की संख्या में ग्रन्थों का प्रकाशन हो चुका है और निरन्तर हो रहा है। ग्रंथमाला से पाठकों को ग्रन्थ कम कीमत में प्राप्त हो सकें, इस दृष्टि से ग्रन्थमाला में एक संरक्षक योजना अगस्त सन् १९९० से प्रारंभ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत निम्न महानुभाव अब तक संरक्षक बनकर अपना सहयोग प्रदान कर चुके हैं।

शिरोमणि संरक्षक

१. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, खारी बावली, दिल्ली-६।
२. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
३. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-१९, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
४. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
५. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
६. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
७. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-९२।
८. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
९. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
१०. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
११. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
१२. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-९२।
१३. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
१४. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
१५. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।

१६. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।

१७.श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-४, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।

परम संरक्षक

१. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
२. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, ७९२ विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
३. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
४. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
५. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
६. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
७. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
८. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
९. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले), गांधीनगर, दिल्ली।
१०. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
११. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन, तोपखाना बाजार, मेरठ।
१२. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
१३. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
१४. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
१५. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-७।
१६. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
१७. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
१८. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली
१९. श्री प्रद्युम्न कुमार जैन छोटी सा., श्री अमरचंद जैन सर्राफ, लखनऊ (उ.प्र.)

संरक्षक

१. स्व. श्री अनन्तवीर्य जैन एवं स्व. श्रीमती आदर्श जैन के सुपुत्र श्री मनोज कुमार जैन, मेरठ।
२. श्रीमती राजूबाई मातेश्वरी श्री शिखर चन्द भाई देवेन्द्र कुमार लखमी चन्द जैन, सनावद (म.प्र.)।
३. श्री चिमनलाल चुन्नीलाल दोशी, कीका स्ट्रीट, मुम्बई।

४. श्रीमती अरुणाबेन मन्नूभाई कोटड़िया, सी.पी. टैंक रोड, मुम्बई।
५. श्रीमती ताराबेन चन्दूलाल दोशी, फ्रेन्च ब्रिज, मुम्बई।
६. श्री रतिलाल चुन्नीलाल दोशी, मुम्बई।
७. स्व. श्रीमती मथुराबाई खुशाल चन्द्र जैन, द्वारा-श्री रतन चन्द खुशाल चन्द्र गाँधी के सुपुत्र श्री धन्य कुमार, अशोक कुमार, शिरीश कुमार, धर्मराज गाँधी फलटन (महा.)।
८. श्री शांतिलाल खुशाल चन्द गाँधी, फलटन (सातारा) महा.।
९. श्री अनन्त लाल फूलचन्द फड़े, अकलूज (सोलापुर) महा.।
१०. श्री हीरालाल माणिकलाल गाँधी, अकलूज (सोलापुर) महा.।
११. श्री जयकुमार खुशालचंद गाँधी, अकलूज (सोलापुर) महा.।
१२. श्रीमती बदामी देवी मातेश्वरी श्री पदम कुमार जैन गंगवाल, कानपुर (उ.प्र.)।
१३. श्रीमती कमलादेवी ध.प. स्व. श्री महेन्द्र कुमार जैन, घण्टे वाले हलवाई, दरियागंज, नई दिल्ली।
१४. श्रीमती उषादेवी ध.प. श्री श्रवण कुमार जैन, चावड़ी बाजार, दिल्ली।
१५. श्री मुकेश कुमार जैन, कटरा शहंशाही, चाँदनी चौक, दिल्ली।
१६. श्री हुकमीचंद मांगीलाल शाह, धानमंडी, उदयपुर (राज.)
१७. श्री किरण चन्द्र जैन, कटरा धूलियान, चाँदनी चौक, दिल्ली।
१८. श्रीमती विमलादेवी ध.प. श्री महावीर प्रसाद जैन इंजी. विवेक विहार, दिल्ली
१९. श्रीमती उषादेवी ध.प. श्री अशोक कुमार जैन (खेकड़ा निवासी), बहराइच (उ.प्र.)।
२०. श्रीमती लीलावती ध.प. श्री हरीश चन्द्र जैन, शकरपुर, दिल्ली।
२१. श्री दुलीचन्द जैन, बाहुबली एन्कलेव, दिल्ली।
२२. श्री रतिलाल केवलचन्द गाँधी की पुण्य स्मृति में, पापुलर परिवार, सूरत (गुज.)।
२३. श्रीमती भंवरीदेवी ध.प. श्री सदासुख जैन पांड्या की समृति में इन्दर चन्द सुमेरमल जैन पांड्या शिलांग (मेघालय)।
२४. श्रीमती सोहनीदेवी ध.प. श्री तनसुखराय सेठी, फैन्सी बाजार, गौहाटी (आसाम)।
२५. श्रीमती धापूबाई ध.प. श्री कस्तूर चन्द जैन, रामगंज मण्डी (राज.)।
२६. श्री मिट्ठनलाल चन्द्रभान जैन, कविनगर गाजियाबाद (उ.प्र.)।
२७. श्रीमती शकुन्तलादेवी ध.प. श्री सुरेशचंद जैन (बर्तन वाले), खुड़बुड़ा मोहल्लका, देहरादून (उ.प्र.)।
२८. श्री देवेन्द्र कुमार गुणवन्त कुमार टोंग्या, बड़नगर (म.प्र.)।

२९. श्री दिगम्बर जैन समाज, तहसील फतेहपुर (बाराबंकी) उ.प्र.।
३०. श्री मन्नालाल रामलाल जैन डूंगरवाला, भानपुरा (मन्दसौर) म.प्र.।
३१. श्री इन्दर चन्द कैलाश चंद चौधरी, सनावद (म.प्र.)।
३२. श्री प्रकाश चन्द अमोलक चन्द जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
३३. स्व. श्री विमल चन्द जैन, रखबचन्द दसरथ सा, सनावद (म.प्र.)।
३४. श्री आजाद कुमार जैन शाह (सनावद वाले), इन्दौर (म.प्र.)।
३५. श्रीमती सुषमा देवी ध.प. श्री राकेश कुमार जैन, मवाना (मेरठ) उ.प्र.।
३६. श्रीमती कुसुम जैन ध.प. श्री रमेशचन्द जैन, किशनपुरी, बागपत रोड, मेरठ।
३७. श्रीमती किरण जैन ध.प. श्री पदम प्रसाद जैन एडवोकेट, मेरठ (उ.प्र.)।
३८. श्रीमती विमलादेवी ध.प. श्री जिनेन्द्रप्रसाद जैन ठेकेदार, टोडरमल रोड, नई दिल्ली।
३९. श्रीमती क्षमादेवी जैन, मधुबन, दिल्ली।
४०. श्रीमती कमलादेवी ध.प. श्री राजेन्द्र कुमार जैन टोडरका, ठाणे (महा.)।
४१. श्री अजित प्रसाद जैन बब्बेजी, श्री राजकुमार श्रवण कुमार जैन, लखनऊ।
४२. श्री प्रभा चन्द गोधा, ४५ भगत वाटिका, सिविल लाइन, जयपुर-६ (राज.)।
४३. श्री गोपीचन्द विपिन कुमार जैन, सरधना टैन्ट हाउस, गंजमंडी, सरधना।
४४. श्रीमती रतनसुन्दरी देवी ध.प. श्री वीरचन्द जैन (चिकन वाले), चूड़ीवाली गली, चौक बाजार, लखनऊ।
४५. डॉ. सुभाषचन्द जैन, रातानाड़ा क्लीनिक, रातानाड़ा बाजार, जोधपुर (राज.)।
४६. श्री प्रमोद कुमार जैन (मुजफ्फरनगर वाले) ३५ एच.वी.रोड, न्यू मार्केट, थरपकना, रांची (बिहार)।
४७. श्री विजेन्द्र कुमार जैन, के.-१/२० मॉडल टाउन, दिल्ली।
४८. श्री कैलाश चंद जैन, ४५ भगत वाटिका, सिविल लाइन, जयपुर (राज.)।
४९. श्री सुभाषचंद जैन, श्री दि. जैन पार्श्वनाथ चैत्यालय, ४०५ डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली।
५०. श्री सुभाष चन्द जैन सर्राफ, टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.।
५१. श्री चन्द्रसेन जैन, द्वारा-सुमेरचन्द, चन्द्रसेन जैन, सब्जी मण्डी, नहटौर (बिजनौर)।
५२. श्री सुधीर कुमार जैन जे.ई., नन्द किशोर जैन, शारदा नहर खण्ड, शाहजहाँपुर।
५३. श्री सुकुमालचंद जैन, मोती ट्रेडिंग कम्पनी, टी.आर. फुकन रोड, फैन्सी बाजार, गौहाटी।
५४. श्री अनिल पुलकित सेठी, बी १/१२२, फेज-२, अशोक विहार, दिल्ली-११००५२।
५५. श्री चन्द्रमोहन बंसल, ११, पूसा रोड, करोलबाग, नई दिल्ली-५।

५६. श्री गिरधर प्रसाद आमोद प्रसाद जैन, जैन वस्त्रालय, काली मार्केट, सिवान (बिहार)।
५७. श्री सतीश चन्द जैन, ३१ सिविल लाइन, म.नं.-१०, सेक्टर-२, टाइप-५ झांसी।
५८. श्री स्वरूप चन्द कासलीवाल, नया बाजार, अजमेर (राज.)।
५९. श्री हुलास चन्द सेठी, अयोध्या शुगर मिल्स, राजा का सहसपुर, बिलारी (उ.प्र.)।
६०. श्रीमती किरण देवी जैन ध.प. श्री नरेन्द्र कुमार जैन, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
६१. श्रीमती संतोष जैन ध.प. श्री प्रवीण कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
६२. श्री सूरजमल पुत्र श्री विनीत कुमार जैन, मोहल्ला गंजकटरा पूरणटरा पूरणजाट, जैन विला, मुरादाबाद (उ.प्र.)।
६३. स्व. श्री शिखर चन्द जैन, 'टिम्बर कमीशन एजेन्ट', शंकरगंज, हापुड़ (उ.प्र.)।
६४. श्रीमती राजेश्वरी जैन मातेश्वरी श्री राकेश जैन ३१, सिविल लाईन, सीतापुर।
६५. श्री राजकुमार जैन, मैसर्स रविदत्त प्रेमचन्द जैन बारदाने वाले, श्यामगंज, बरेली।
६६. श्री बलवीर जैन, द्वारा-जानकी एक्सटेंशन रिफाइनरी, गाँधीगंज, शाहजहाँपुर।
६७. श्री पन्नालाल सेठी, डीमापुर (नागालैंड)।
६८. श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, ईदगाह कालोनी, आगरा (उ.प्र.)।
६९. श्री पोखपाल जैन, द्वारा-नावेल्टी मेटल इंडिया, मानसिंह गेट, अलीगढ़ (उ.प्र.)।
७०. श्रीमती रश्मि जैन ध.प. श्री विजय कुमार जैन, दरियागंज, नई दिल्ली।
७१. श्रीमती विमला देवी ध.प. श्री प्रमोद कुमार जैन इंजी., शाहजहाँपुर (उ.प्र.)।
७२. स्व. श्रीमती कैलाशवती जैन ध.प. श्री कैलाश चन्द जैन इंजी., तोपखाना बाजार, मेरठ।
७३. श्रीमती अरुण कुमार नांद्रेकर ध.प. भाऊ साहेब नांद्रेकर, मुलुन्ड (वेस्ट) मुम्बई।
७४. श्री भागचन्द मनीष कुमार ठोलिया, द्वारा-किरन एजेंसी, पो. बुरहानपुर, (म.प्र.)।
७५. श्री कैलाशचन्द राजकुमार जैन रावंका, पो. बिसवां (सीतापुर) उ.प्र.।
७६. श्रीमती विद्यावती जैन, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली।
७७. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) एवं सुपुत्र श्री मदन कुमार, प्रदीप कुमार एवं प्रवीण कुमार जैन, धर्मपुरा, गाँधीनगर, दिल्ली।
७८. श्रीमती अरुणा जैन, ध.प. प्रवीन्द्र कुमार जैन, प्रीतमपुरा, दिल्ली।
७९. श्रीमती पुष्पादेवी, ध.प. महेन्द्र कुमार जैन, पुष्पांजली एन्क्लेव, दिल्ली।
८०. श्री बाबूलाल तोताराम जैन, भुसावल (महा.)।
८१. डॉ. अनुपम जैन, सुदामा नगर, इंदौर (म.प्र.)।

८२. श्री विनय कुमार जैन, ज्वैलर्स, दरीबाकलां, दिल्ली।
८३. स्व. श्री आनन्द प्रकाश जैन 'शान्तिप्रिय', जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.।
८४. श्रीमती राजुलबाई ध.प. श्री नेमीचन्द जैन लोहाड़े, पो. कोपरगाँव (महा.)।
८५. श्री धन्नालाल गोधा, मल्हारगंज, इंदौर (म.प्र.)।
८६. श्री सुनील कुमार मनोज कुमार जैन, झिलमिल कालोनी, दिल्ली।
८७. श्रीमती आशा जैन ध.प. श्री राजेश कुमार जैन बरुआ सागर (उ.प्र.)।
८८. श्री पारसमल डूंगरमल जी पाटनी पो. मेड़तासिटी, नागौर (राजस्थान)।
८९. श्री अनिल कुमार जैन (गुड़गांव वाले) प्रियदर्शनी विहार, दिल्ली-९२।
९०. श्रीमती कृष्णा बाई नेमीनाथ जैन, पी. वाले, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
९१. श्रीमती मंजूलता जैन ध.प. श्री प्रभात चन्द गोधा, नया बाजार, अजमेर (राज.)।
९२. श्री प्रमोद कुमार जैन, पारस प्रिन्टर्स, शाहदरा-दिल्ली।
९३. श्री चांदमल अनिल कुमार सरावगी, किशनगंज (बिहार)।
९४. कुमारी अदिती सुपुत्री श्री अपोलो जी जैन सौगानी, इंदौर।
९५. श्रीमती मंजूलता ध.प. प्रभाचन्द गोधा-नया बाजार, अजमेर।
९६. श्री सुचेद्र कुमार शैलेन्द्र कुमार जैन, डाल्टनगंज (झारखंड)।
९७. श्रीमती जतनदेवी लक्ष्मीचंद जैन, चेन्नई (तमिलनाडु)।
९८. श्रीमती सखाई जैन ध.प. श्री जीतमल जैन, मड़ाना (कोटा) राज.।
९९. श्री मोहित जैन पुत्र मुकेश जैन, जगन्नाथ जैन पहाड़िया, फतेहपुर (शेखावटी) राज.।
१००. श्री नरेश जैन बंसल, गुड़गाँवा (हरि.)।
१०१. श्रीमती रतनबाई ध.प. राजेन्द्र प्रकाश कोठिया, कोटा (राज.)।
१०२. श्रीमती संतोष जैन ध.प. श्री अजीत कुमार जैन, भिवाड़ी (राज.)।
१०३. श्रीमती प्रेमलता जैन ध.प. श्री सुशील कुमार जैन, मलाड़ (मुम्बई)।
१०४. श्री राजेन्द्र कुमार पंचौलिया, इंदौर (म.प्र.)।
१०५. स्व. श्री मोहनलाल हेमचंद गांधी, सतारा (महा.)।
१०६. श्रीमती आरती जैन ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन 'शीशे वाले', इलाहाबाद (उ.प्र.)
१०७. डॉ. विमला जैन "विमल" ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन, फिरोजाबाद (उ.प्र.)

विषय-दर्पण

क्र.	विषय	पृष्ठ संख्या
१.	नवदेवता पूजन	१
२.	मंगलाचरण	६
३.	विधान रचना का उद्देश्य	७
४.	विधान का माहात्म्य	७
५.	पूजन का प्रारंभिक कर्तव्य	८
६.	मंडल मांडने की विधि	९
७.	ध्वजाओं का वर्णन	११
८.	पूजन प्रारंभ का वर्णन	१२
	इंद्रध्वज विधान प्रारंभ	
९.	पुष्पांजलि आदि	१३
१०.	मंगलस्तोत्र	१३
११.	देवागम विधिः	१५
१२.	ध्वजारोहणविधिः	२१
	पूजन प्रारंभ	
	पूजा नं.	
१३.	सिद्ध परमेष्ठी पूजा	१	२३
१४.	समुच्चय पूजा	२	२९
१५.	सुदर्शनमेरु जिनालय पूजा	३	३३
१६.	सुदर्शनमेरु संबंधी गजदंत जिनालय पूजा	४	५१
१७.	सुदर्शनमेरु जंबू शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजा	५	५६
१८.	सुदर्शनमेरु सोलहवक्षार जिनालय पूजा	६	६२
१९.	सुदर्शनमेरु चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा	७	७०
२०.	सुदर्शनमेरु षट्कुलाचल जिनालय पूजा	८	८२
२१.	विजयमेरु जिनालय पूजा	९	८८
२२.	विजयमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजा	१०	१०८
२३.	विजयमेरु धातकी शाल्मली वृक्ष जिनालय पूजा	११	११३

क्र. विषय	पूजा नं.	पृष्ठ संख्या
२४. विजयमेरु सोलह वक्षार जिनालय पूजा	१२	११८
२५. विजयमेरु चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा	१३	१२६
२६. विजयमेरु षट्कुलाचल जिनालय पूजा	१४	१३९
२७. अचलमेरु जिनालय पूजा	१५	१४६
२८. अचलमेरु गजदंत जिनालय पूजा	१६	१६४
२९. अचलमेरु धातकी शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजा	१७	१७०
३०. अचलमेरु षोडशवक्षार जिनालय पूजा	१८	१७६
३१. अचलमेरु चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा	१९	१८४
३२. अचलमेरु षट्कुलाचल जिनालय पूजा	२०	१९८
३३. अचलमेरु दक्षिणउत्तरद्वयइष्वाकार जिनालय पूजा	२१	२०५
३४. मंदरमेरु जिनालय पूजा	२२	२१०
३५. मंदरमेरु गजदंत जिनालय पूजा	२३	२३०
३६. मंदरमेरु पुष्कर शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजा	२४	२३६
३७. मंदरमेरु सोलहवक्षार जिनालय पूजा	२५	२४१
३८. मंदरमेरु चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा	२६	२४९
३९. मंदरमेरु षट्कुलाचल जिनालय पूजा	२७	२६२
४०. विद्युन्मालीमेरु जिनालय पूजा	२८	२६९
४१. विद्युन्मालीमेरु गजदंत जिनालय पूजा	२९	२८८
४२. विद्युन्मालीमेरु पुष्कर शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजा	३०	२९४
४३. विद्युन्मालीमेरु षोडश वक्षार जिनालय पूजा	३१	३००
४४. विद्युन्मालीमेरु चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा	३२	३०९
४५. विद्युन्मालीमेरु षट्कुलाचल जिनालय पूजा	३३	३२०
४६. विद्युन्मालीमेरु इष्वाकार जिनालय पूजा	३४	३२७
४७. मानुषोत्तर पर्वत पूर्वदिक् जिनालय पूजा	३५	३३३
४८. मानुषोत्तर पर्वत दक्षिणदिक् जिनालय पूजा	३६	३३८
४९. मानुषोत्तर पर्वत पश्चिमदिक् जिनालय पूजा	३७	३४३
५०. मानुषोत्तर पर्वत उत्तरदिक् जिनालय पूजा	३८	३४८

क्र. विषय	पूजा नं.	पृष्ठ संख्या
५१. नंदीश्वरद्वीप पूर्वदिक् जिनालय पूजा	३९	३५३
५२. नंदीश्वरद्वीप दक्षिणदिक् जिनालय पूजा	४०	३६१
५३. नंदीश्वरद्वीप पश्चिमदिक् जिनालय पूजा	४१	३६९
५४. नंदीश्वरद्वीप उत्तरदिक् जिनालय पूजा	४२	३७६
५५. कुण्डलगिरि पूर्वदिक् जिनालय पूजा	४३	३८४
५६. कुण्डलगिरि दक्षिणदिक् जिनालय पूजा	४४	३८९
५७. कुण्डलगिरि पश्चिमदिक् जिनालय पूजा	४५	३९४
५८. कुण्डलगिरि उत्तरदिक् जिनालय पूजा	४६	३९९
५९. रुचकवरगिरि पूर्वदिक् जिनालय पूजा	४७	४०४
६०. रुचकवरगिरि दक्षिणदिक् जिनालय पूजा	४८	४०९
६१. रुचकवरगिरि पश्चिमदिक् जिनालय पूजा	४९	४१४
६२. रुचकवरगिरि उत्तरदिक् जिनालय पूजा	५०	४१९
६३. बड़ी जयमाला		४२४
६४. अथ प्रशस्ति		४३१
६५. इंद्रध्वज विधान की आरती		४३४
६६. इंद्रध्वज विधान (भजन)		४३५
इंद्रध्वज विधान पूजन समाप्त		
६७. विधानकर्त्री आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी की पूजन		४३६

इंद्रध्वज विधान का ध्वज गीत

–आर्यिका चंदनामती माताजी

(विधान के शुभारंभ में ध्वजारोहण के समय यह गीत बोलें, उस समय सभी लोग हाथ जोड़कर शांत मुद्रा में खड़े रहें)

जय इन्द्रध्वज विस्तारक है, केशरिया ध्वज प्यारा।
जिनभवनों की कीर्ति पताका, फहराता जग सारा।।
सुरकिन्नरियां आवे,
ध्वज वंदन कर जावें।
मनुज लोक से न्यारा,
सुरतरु के पुष्पों से गूंथा, ध्वज का रूप निराला।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे।।१।।
अविरल स्वर से सुरकिन्नर भी, गाते तव गुणगाथा।
भाक्तिकगण इक संग में आकर, नित नत करते माथा।
इन्द्र सिंहासन डोला,
सबने जय जय बोला।
गूंज उठा जग सारा,
सुर खेचर के गगन गमन से, आच्छादित नभ सारा।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे।।२।।
इन्द्र सभी आ करके कर में, ध्वज लेकर जाऐंगे।
तेरह द्वीपों के चैत्यों पर, जाकर फहराऐंगे।
ध्वज ऊंचा लहराए,
नभ को छूना चाहे।
केशरिया ध्वज प्यारा,
पुष्पों से सुरभित होता, ''चंदनामती'' जग सारा।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे।।३।।

इंद्रध्वज मंडल विधान

नवदेवता पूजन

—गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

—गीता छन्द —

अरिहंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु त्रिभुवन वंद्य हैं।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वर, मूर्ति जिनगृह वंद्य हैं।।
नव देवता ये मान्य जग में, हम सदा अर्चा करें।
आह्वान कर थापें यहाँ, मन में अतुल श्रद्धा धरें।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरणं।

—अथाष्टक —

गंगानदी का नीर निर्मल, बाह्य मल धोवे सदा।
अंतर मलों के क्षालने को, नीर से पूजूँ मुदा।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर मिश्रित गंध चंदन, देह ताप निवारता।
तुम पाद पंकज पूजते, मन ताप तुरतहिं वारता।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीरोदधी के फेन सम सित, तंदुलों को लायके।
उत्तम अखंडित सौख्य हेतु, पुंज नवसु चढ़ायके।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पा चमेली केवड़ा, नाना सुगन्धित ले लिये।
भव के विजेता आपको, पूजत सुमन अर्पण किये।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पायस मधुर पकवान मोदक, आदि को भर थाल में।
निज आत्म अमृत सौख्य हेतू, पूजहूँ नत भाल मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर ज्योति जगमगे, दीपक लिया निज हाथ में।
तुम आरती तम वारती, पाऊँ सुज्ञान प्रकाश मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंधधूप अनूप सुरभित, अग्नि में खेऊँ सदा।
निज आत्मगुण सौरभ उठे, हों कर्म सब मुझसे विदा।।

नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अमरख आम्र अमृत, फल भराऊँ थाल में।
उत्तम अनूपम मोक्ष फल के, हेतु पूजूँ आज मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।8।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु, दीपक सुधूप फलार्घ्य ले।
वर रत्नत्रय निधि लाभ यह, बस अर्घ्य से पूजत मिले।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

जलधारा से नित्य मैं, जग की शांति हेत।
नवदेवों को पूजहूँ, श्रद्धा भक्ति समेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

नानाविध के सुमन ले, मन में बहु हरषाय।
मैं पूजूँ नव देवता, पुष्पांजली चढ़ाय।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

सोरठा – **चिच्चिंतामणिरत्न, तीन लोक में श्रेष्ठ हो।**
गाऊँ गुणमणिमाल, जयवंते वर्तो सदा।।1।।

(चाल-हे दीनबन्धु श्रीपति.....)

जय जय श्री अरिहंत देवदेव हमारे।
जय घातिया को घात सकल जंतु उबारे।।
जय जय प्रसिद्ध सिद्ध की मैं वंदना करूँ।
जय अष्ट कर्ममुक्त की मैं अर्चना करूँ।।2।।

आचार्य देव गुण छत्तीस धार रहे हैं।
दीक्षादि दे असंख्य भव्य तार रहे हैं।।
जैवंत उपाध्याय गुरु ज्ञान के धनी।
सन्मार्ग के उपदेश की वर्षा करें घनी।।3।।

जय साधु अठाईस गुणों को धरें सदा।
निज आत्मा की साधना से च्युत न हों कदा।।
ये पंचपरमदेव सदा वंद्य हमारे।
संसार विषम सिंधु से हमको भी उबारें।।4।।

जिनधर्म चक्र सर्वदा चलता ही रहेगा।
जो इसकी शरण ले वो सुलझता ही रहेगा।।
जिन की ध्वनि पीयूष का जो पान करेंगे।
भव रोग दूर कर वे मुक्ति कांत बनेंगे।।5।।

जिन चैत्य की जो वंदना त्रिकाल करे हैं।
वे चित्स्वरूप नित्य आत्म लाभ करे हैं।।
कृत्रिम व अकृत्रिम जिनालयों को जो भजें।
वे कर्मशत्रु जीत शिवालय में जा बसें।।6।।

नव देवताओं की जो नित आराधना करें।
वे मृत्युराज की भी तो विराधना करें।।
मैं कर्मशत्रु जीतने के हेतु ही जजूँ।
सम्पूर्ण ''ज्ञानमती'' सिद्धि हेतु ही भजूँ।।7।।

–दोहा–

नवदेवों को भक्तिवश, कोटि कोटि प्रणाम।
भक्ती का फल मैं चहूँ, निजपद में विश्राम।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भव्य श्रद्धाभक्ति से, नवदेवता पूजा करें।
वे सब अमंगल दोष हर, सुख शांति में झूला करें।।
नवनिधि अतुल भंडार ले, फिर मोक्ष सुख भी पावते।
सुखसिंधु में हो मग्न फिर, यहाँ पर कभी न आवते।।9।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

श्री इन्द्रध्वज विधान

।। मंगलाचरण ।।

सिद्धों की करूं वन्दना वे सिद्धिप्रदाता।
चैतन्यसुधारूप निजानन्द के दाता ।।
अर्हंतदेव को भी नमूं तीन योग से।
वे लौक औ अलोक को स्पष्ट लोकते ।।1।।

वृषभेश ने युग के प्रथम अवतार जब लिया।
शिवमार्ग भव्यजन को दिखा सर्वहित किया।।
प्रभुपंचकल्याणकपती त्रिभुवन गुरू हुए।
निज आत्मा से निज में तृप्त निजगुरू हुए।।2।।

श्री शांतिनाथ ने अनंत शांति पा लिया।
भक्तों को परम शांति का मारग दिखा दिया।।
तीर्थेश सोलवें हुए चक्रीश पांचवें।
प्रभु कामदेव फिर भी रहें स्वात्मधाम में ।।3।।

सिद्धार्थतनय वीर महावीर सन्मती।
प्रभु आप अकिंचन हो सबको देते सद्गती।।
हे नाथ! तुमको वंदना अनंत बार है।
भक्ती से भवोदधि तरूं जो अति अपार है।।4।।

जो कार्य के प्रारम्भ में प्रभु तुमको वंदते।
सम्पूर्ण विघ्नराशि को वे खंड खंडते ।।
सम्पूर्ण ऋद्धि सिद्धि से सर्वांग मंडते।
कृतकृत्य स्वयं होके वे ही नंद नंदते ।।5।।

विधान रचना का उद्देश्य

सम्पूर्ण विधानों में उत्तम, इन्द्रध्वज पूजा विधि मानी।
जिनदेव देव की भक्तीवश, मैंने इसकी रचना ठानी।।
यह कहां ज्ञान लव है मेरा ? औ कहां इन्द्रध्वज की विधि है।
इन्द्रों के गुरू बृहस्पति भी, महिमा कहने में नहिं प्रभु हैं।।6।।
फिर भी मेरा यह अति साहस, बस स्वात्मसिद्धि के हेतू है।
यदि रचना जन मन हरण करे, उसमें भक्ती ही हेतू है।।
प्रभुपादकमल की भक्ती ही, इस महत् कार्य को पूर्ण करे।
भक्ती पियूष की गंगा में, जन जन मन प्लावित पूर्ण करे।।7।।
संस्कृत का इन्द्रध्वज विधान, उसको आधार बना करके।
सब जन को अर्थ बोध होवे, यह हेतू भी मन में धरके।।
पुनरपि तिलोयपण्णत्ति आदि, ग्रंथों का सार ग्रहण करके।
भाषा में 'इन्द्रध्वज विधान' रचना मैं करूं रुची धरके।।8।।

विधान का माहात्म्य

अनुपम विधान महिमाशाली, इसको सबने बतलाया है।
जब था दुर्भिक्ष अकाल पड़ा, तब इसने जल बरसाया है।।
सब मनवांछित को पूर्ण करे, ऐसी विधान की महिमा है।
सब रोग शोक दारिद्र टलें, ऐसी इसकी ही गरिमा है।।9।।

ग्रहभूत पिशाच क्रूर व्यंतर नहिं रंच उपद्रव कर सकते ।
जो अनुष्ठान करते विधिवत्, उनके सब दुख संकट टलते।।
अतिवृष्टि अनावृष्टी ईती भीती संकट टल जाते हैं।
नित समय समय पर इन्द्रदेव, अमृतसम जल बरसाते हैं।।10।।

अत्यर्थ प्रभावी यह विधान, अति चमत्कार करने वाला।
परकृत भी सर्व उपद्रव को, इक क्षण में ही हरने वाला।।
अति दुखी असाध्य रोगियों के, तन को नीरोग बना देता।
ज्वर कुष्ट भगंदर आदी के, इक क्षण में नाम मिटा देता ।।11।।

जो इष्ट वियोग अनिष्ट योग से, महा क्लेश को भोग रहे।
निज पूर्व अशुभ कर्मोदय से, जिनको अति ही संक्लेश दहे।।
उन सबके लिये विधान यही, बस परम इष्ट बन जाता है।
प्रकृति असात को साता में, निश्चित संक्रमण कराता है।।12।।

इस विध अतिशय श्रद्धा से जो, 'इन्द्रध्वज' पाठ रचाते हैं।
धन धान्य समृद्धी अतुल ऋद्धि, अनुपम सिद्धी वो पाते हैं।।
यह सब अनुषंगिक फल केवल, तुम परंपरा मुक्ती जानो।
अंतिम फल है 'जिनपद' निश्चित, जिनवचन प्रमाण सदा मानो ।।13।।

पूजक का प्रारम्भिक कर्तव्य

यजमान और याजक दोनों, आकर गुरु का वंदन करिये।
इन्द्रध्वज आदि विधानों में, गुरुओं की आज्ञा शिर धरिये।।
गुरुदेव! मुझे यह इच्छा है, मैं इन्द्रध्वज का पाठ करूँ।
यह महायज्ञ विधिवत् करके, मैं उत्तम सुख को प्राप्त करूँ।।14।।

हों परिजन राजा प्रजा सुखी, ऐसा आशीर्वचन दीजे।
निर्विघ्न पाठ हेतू गुरुवर, अब आप पधार कृपा कीजे ।।
गुरुवर की स्वीकृति पा करके, चउसंघ विहार करा दीजे।
गुरु पादकमल पूजन करके, स्थान दान सेवा कीजे ।।15।।

मंडल मांडने की विधि

सबसे पहले जिन पूजाकर, मंडप वेदी रचना कीजे।
उत्तम मुहूर्त में प्रांगण में, ऊँचा ध्वज आरोहण कीजे।।
हीरा मोती माणिक्य रतन, अभ्रक औ स्वर्णिम रंग लाके।
बहुविध रंगे चावल से या, मंडल रचिये रांगोली से।।16।।

इस मध्यलोक में अकृत्रिम, जिनगृह तेरह द्वीपों तक हैं।
उन सबमें जम्बूद्वीप प्रथम, जो गोलाकृति थालीवत् है।।
इसको चारों तरफी घेरे, सागर औ द्वीप कहे जानो ।
इन मध्य चार सौ अट्ठावन, जिनमंदिर की रचना मानों ।।17।।

है प्रथम द्वीप में बीचोंबिच, श्रीमेरु सुदर्शन स्वर्णमयी।
उसमें सोलह चैत्यालय हैं, जो भविजन हित शिव सौख्य मही।।
इस मेरू की विदिशाओं में, गजदंत चार पर्वत मानो।
उन पर भी चार जिनालय हैं, जो सुरनरगण पूजित जानेा।।18।।

मेरू के उत्तर दक्षिण में उत्तरकुरु और देवकुरु हैं।
उनमें ईशान व नैऋत में, क्रम से जम्बू शाल्मलि तरु हैं।।
मेरू के पूरब पश्चिम में, वक्षारगिरी सोलह जानो ।
इन पूरब अपर विदेहों में, बत्तीस रजतगिरि हैं मानों ।।19।।

मेरू के दक्षिण उत्तर में, शुभ क्षेत्र भरत ऐरावत हैं।
दोनों में दो विजयार्ध अतः, चौंतीस हुए विजयारध हैं।।
मेरू के दक्षिण उत्तर में, हिमवन् आदिक षट् कुलगिरि हैं।
इन सबके जिनगृह इक इक मिल, सब अट्ठत्तर जिनमंदिर हैं।।20।।

फिर दुतिय धातकीद्वीप कहा, उसमें पूरब पश्चिम जानो।
पूरब में विजयमेरु पश्चिम, में अचलमेरु को सरधानो।।
इसके उत्तरकुरु देवकुरू, धातकि व शाल्मलि तरू धरें।
इस द्वीप में दक्षिण उत्तर दिश, इष्वाकृति दोय विभाग करें।।21।।

इस द्वीप धातकी खंड मध्य इक सौ अट्ठावन जिनगृह हैं।
बस पुष्करार्ध में इसी तरह, सारी रचना औ जिनगृह हैं।।
इस पुष्कर पूरब पश्चिम में, मेरू मंदर विद्युन्माली।
दो उत्तरकुरु में पुष्करतरु बस इतना अंतर बलशाली ।।22।।

इस पुष्कर मध्य मानुषोत्तर, नग ढाई द्वीप वेष्टित करके।
उस पे चारों दिश जिनमंदिर, उस परे मनुष नहिं जा सकते ।।
नंदीश्वर द्वीप आठवें में, चारों दिश चउ अंजन गिरि हैं।
अंजन के चारों दिश चउ चउ, दधिमुख वा वसु वसुं रतिकर हैं।।23।।

ग्यारहवें द्वीप में कुंडलनग, उस पे चउ दिश जिनभवन कहें।
तेरहवें द्वीप में रुचिकाद्रि, उस पे चउदिश जिनसदन रहें।।
इस विध पण मेरू के अस्सी गजदंत जिनालय बीस कहे।
जम्बू आदिक वृक्षों के दस, अस्सी वक्षारगिरी के हैं।।24।।

रजताचल इक सौ सत्तर, कुलपर्वत के सब तीस रहे।
इष्वाकृति नग के चार तथा, मनुजोत्तर के भी चार कहे।।
नंदीश्वर के बावन कुंडल, औ रुचकगिरी के चार चार।
सब चार शतक अट्ठावन ये, जिनमंदिर इनको नमस्कार ।।25।।

मंडल पर पहले मेरू की, रचना कर सब रचना रचिये।
तेरह द्वीपों तक रचना कर, नग नदियाँ साफ-साफ रचिये।।
उनमें सुस्पष्ट सु चार शतक, अट्ठावन जिनमंदिर रचिये।
उन पर सुन्दर जिनमंदिर को, रखकर स्थापन विधि करिये।।26।।

वेदी मंडल को गन्ध लेप, चन्दोपक वन्दनवारों से ।
ध्वज चामर मंगलद्रव्य आठ, मंगल घट तोरण द्वारों से ।।
बहुरंग बिरंगे रत्नद्वीप, सदृश बहु विद्युत् द्वीपों से ।
बहुविध उपकरणों धूप घड़े, सुरभित मालाओं फूलों से।।27।।

किंकिणियों के रुनझुनरव से, मंडपवेदी भूषित करिये।
जिनबिम्ब चतुर्मुख स्थापित कर, इन्द्रध्वज पूजा करिये।।

1. आठ- आठ ।

इस विधि गुरु आज्ञा औ आशिष, लेकर मंडप वेदी रचिये।
मंडल की रचना ऐसी हो, नर क्या सुर का भी मन हरिये।।28।।

मंडल के मंदिरों पर आरोपण करने वाली ध्वजाओं का वर्णन

सब इन्द्रवृन्द बहु भक्ती से, अकृत्रिम जिनगृह जाते हैं।
अतिशायि महामह पूजाविधि, बहु वैभवपूर्ण रचाते हैं।।
क्रम क्रम से जिन जिनभवनों की, वे पूजा करते जाते हैं।
उन उन मंदिर के शिखरों पर, वे ध्वज फहराते जाते हैं।।29।।

उस ही से उनका वह विधान, 'इन्द्रध्वज' सार्थक नाम धरे।
इससे ही ध्वज आरोहण कर, नर भी 'इन्द्रध्वज' पाठ करें।।
कोमल सुन्दर कौशेय आदि, वस्त्रों की ध्वजा बना लीजे।
उनमें क्रम से माला आदिक, दश चिन्हों को करवा लीजे।।30।।

मेरू के ध्वज में माला का हो, चिन्ह बना अति ही सुन्दर।
गजदंत ध्वजा में सिंह चिन्ह, कुलगिरि ध्वज में पंकज सुन्दर।।
जम्बूतरु आदि ध्वजाओं में, अंशुक का चिन्ह बना लीजे।
वक्षार ध्वजा में गरूड़ चिन्ह, करके सुन्दर रचना कीजे।।31।।

इष्वाकृतिनग मनुजोत्तर नग, इनके ध्वज में गज चिन्ह करो।
रजताचल सभी ध्वजाओं में, सित वृषभ चिन्ह उत्कीर्ण करो।।
नंदीश्वर के ध्वज में चकवा-चकवी का चिन्ह मनोज्ञ रहे।
कुंडलगिरि ध्वज में मोर चिन्ह, रुचकाचल ध्वज में हंस रहे।।32।।

जो मंडल ऊपर चार शतक, अट्ठावन जिनमंदिर दीखें ।
उन पर विधिवत् इन चिन्हों युत, सब ध्वज का आरोपण कीजे।।
मंडल को शाश्वत जिनमंदिर, अपने को इन्द्र समझ लीजे।
इन्द्रध्वज मण्डल पूजाकर, अतिशायी पुण्य निकट कीजे ।।33।।

पूजन प्रारम्भ करने का वर्णन

पूजामुख सकलीकरण विधी कर, जिनवर का अभिषेक करो।
स्वस्ती और इन्द्र प्रतिष्ठा कर, जिनयज्ञ सुदीक्षा ग्रहण करो।।
सर्वोत्तम इन्द्रध्वज विधान, प्रारम्भ करो जय जय ध्वनि से।
देवागम ध्वज आरोपण विधि, कर पूजन पढ़ो मधुर ध्वनि से।।34।।

संगीत वाद्य नृत्यादिक कर, प्रतिदिन मनहर पूजन करिये।
प्रतिदिन जप का कर अनुष्ठान, अंतिम दिन पूर्ण हवन करिये।।
रथयात्रा महामहोत्सव कर, अतिशय प्रभावना को करिये।
हो उठे स्वर्ग में भी हलचल, ऐसी बाजों की ध्वनि करिये।।35।।

फिर गुरूवर्य की पूजा कर, चउसंघ की भी पूजा कीजे।
आहार औषधि पिच्छी पुस्तक, उपकरण आदि वस्तू दीजे।।
आर्यिका आर्य को वस्त्रदान, आवश्यक योग्य वस्तु दीजे।
सहधर्मी जन को दान मान, आदिक देकर हर्षित कीजे ।।36।।

पूजन दानादिक कार्यों में जितना धन खर्चा जावेगा।
कूंये के जल के ही समान, दिन पर दिन बढ़ता जावेगा।।
इस भव में सुख औ यश देकर, परभव में भी संग आयेगा।
फिर फले अनंतगुणा होके, अंतिम शिवपद दिलवायेगा।।37।।

–दोहा–

इस विध अति उत्सव सहित, करो इन्द्रध्वज पाठ।
इन्द्रों के सुख भोगकर, करो मुक्ति में ठाठ।।38।।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

श्री इन्द्रध्वज विधान प्रारम्भ

सिद्धान् त्रैलोक्यमूर्धस्थान् नत्वा भक्त्या शिवाप्तये।
इंद्रध्वजमहायज्ञं प्रारब्धुमेष प्रक्रमे ।।1।।
सिद्धेर्धाम भवार्तिदावशमनं पीयूषधारागृहम् ।
मोहध्वांतविदारकं सुखकरं, निर्वाणलक्ष्मीप्रियम् ।।
भक्त्यानम्य प्रमोदतो जिनपतेः पादारविंदद्वयम्।
तस्याग्रे जिनयज्ञवर्तनविधौ कुर्वे लतांताञ्जलिम् ।।2।।

(इति इन्द्रध्वज महायज्ञ प्रतिज्ञापनाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाँजलिः)

भेरीमृदंगवीणादिघंटाटंकारनिः स्वनैः ।
वाद्योद्घोषं प्रतन्वेऽहं जिनपूजामहोत्सवे ।।3।।

(नाना प्रकार के बाजे बजावें)

मंगलस्तोत्रं

यावंति जिनचैत्यानि, विद्यंते भुवनत्रये।
तावंति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ।।4।।
मध्यलोके जिनेंद्राणामकृता ये जिनालयाः ।
चतुःशतानि वंदे तान्, अष्टपंचाशदुत्तरं।।5।।
श्रीमेरौ गजदंतरूप्यगिरिवक्षारे कुलाद्रौ तथा।
जम्ब्वादिद्रुममानुषोत्तरनगेविष्वाकृतौ पर्वते।।
श्रीनंदीश्वरकुंडले च रूचके शैले हि चैत्यालयाः।
तान् सर्वान् प्रणमामि भक्तिभरतः सर्वार्थसंसिद्धये।।6।।
अर्हंतो मंगलं कुर्युः, सिद्धा कुर्युश्च मंगलम्।
आचार्याः पाठकाश्चापि, साधवो मम मंगलम् ।।7।।

अकृता ये जिनागाराः त्रैलोक्यसंपदालयाः।
स्वयंभुवां स्वयंसिद्धाः, कुर्वंतु मम मंगलम् ।।8।।
विघ्ना निघ्नंतु मे सर्वेऽमीप्सितार्थप्रदाश्च ते।
तुष्टिपुष्टिप्रदातारः कुर्वंतु मम मंगलम् ।।9।।
अकृतानि कृतानीह जिनबिंबानि सर्वतः।
स्वात्मसौख्यप्रदानि स्युः कुर्युश्च मम मंगलम् ।।10।।
जिनास्तत्प्रतिमाश्चापि तद् गेहास्तन्निषद्यकाः।
ते ताश्च ते च ताश्चापि कुर्वंतु मम मंगलम् ।।11।।

(नमस्कार करें)

चतुर्णिकायदेवानां सर्वेन्द्राः सपरिच्छदाः ।
देव्यो यक्षाश्च यक्ष्योऽपि, ते ताश चाकारयाम्यहम्।।
युष्माभिः क्रियते यद्वत्, इन्द्रध्वजमहामहः।
ध्वजारोहणविध्यादिः, महावैभवसंयुतैः।।
तद्वन्मनाग् विधिं कर्तुमहमप्युत्सहे त्विह।
युष्मत्साहाय्यमासाद्य विधास्ये सफलं भवेत् ।।
शक्त्या बुद्ध्या च हीनोऽपि, भक्त्यैव प्रेरितः किल।
महाविधानमेतद्धि, करिष्ये तत्तु विस्मयं।।
एतैतात्र सकलेंद्राः तिष्ठतात्रैव मण्डले।
इन्द्रध्वजाख्ययज्ञेऽस्मिन् वाद्योद्घोषादिमंगले।।
प्रत्यूहपरिहाराय धर्मप्रद्योतनाय च।
स्वस्वयज्ञांशमादाय यज्ञांतं स्थीयतामिह।।
जिनभक्तिं प्रकुर्वाणाः रक्षां कुरुत सर्वतः।
बाधा न जातु बाधेरन् यूयं हि धर्मिवत्सलाः।।

(इति मंडपान्तः पुष्पांजलिः)

अथ देवागमविधिः

–अनुष्टुप् छंद–

भवनालयदेवेन्द्राः समायात महामहे।
चत्वारिंशत् प्रमाः सर्वे धर्मोद्योतनतत्पराः ।।1।।

ॐ ह्रीं चत्वारिंशत् भवनवासिदेवेन्द्राः अत्र आगच्छत आगच्छत, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा। अर्घ्यं।

द्वात्रिंशत्प्रमिताः प्रोक्ताः, व्यंतरेन्द्राः सहामरैः।
आगच्छंतु महायज्ञे, जिनभक्तिपरायणाः ।।2।।

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशत् व्यंतरेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदमर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा। अर्घ्यं।

चतुर्विंशतिकल्पेन्द्राः समायांतु महोत्सवे।
धर्मप्रभावनायुक्ताः, शुद्धसम्यक्त्वशालिनः।।3।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिकल्पेन्द्राः अत्र आगच्छत 2 इदमर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्णां 2 इति स्वाहा। अर्घ्यं।

अष्टाशीतिग्रहैरष्टाविंशत्या चोडुभिः सह।
वाणर्षिरुद्रषट्भिश्च सुकोटिकोटितारकैः।।4।।
सूर्याचन्द्रमसौ इन्द्रौ समायातां सहामरैः।
जिनयज्ञमहार्चायां, धर्मप्रद्योतनाय च ।।5।। (युग्म)

ॐ ह्रीं अष्टाशीतिग्रहैरष्टाविंशतिनक्षत्रैः षट्षष्टिसहस्रनवशतसप्तसप्तति-कोटाकोटितारकाभिः संपूर्णस्वपरिवारदेवैः सह सूर्याचन्द्रमसौ ज्योतिष्केन्द्राः अत्र आगच्छत आगच्छत इदमर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

वास्तुदेवाः समायांतु, एकोनपंचाशत्प्रमाः।
महाकैवल्यभर्तृणां, महायज्ञमहोत्सवे।।6।।

ॐ ह्रीं एकोनपंचाशत् वास्तुदेवाः अत्र आगच्छत आगच्छत, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

जयाद्या देव्य आयांतु, सर्वरोगप्रहारिकाः ।
स्वस्ववाहनसंरूढा, जिनधर्मोपकारिकाः।।7।।

ॐ ह्रीं जयाद्या अष्टौ देव्यः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्णां 2 इति स्वाहा।

रोहिण्याद्या महादेव्यो महाविद्याभृतः मुदा।
आयांतु श्रीमहायज्ञे, सम्यक्त्वस्थितिहेतवे ।।8।।

ॐ ह्रीं रोहिण्याद्याः षोडश महादेव्यः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

जिनशासनदेवा ये चतुर्विंशतयो स्मृताः।
गोमुखाद्याः समायांतु जिनभक्तिपरायणाः ।।9।।

ॐ ह्रीं गोमुखाद्याः चतुर्विंशतिप्रमाः जिनशासनदेवाः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

चक्रेश्वर्यादयो देव्यः, तीर्थकृद्भक्तवत्सलाः।
जिनयज्ञे समायांतु, सर्वविघ्नौघशांतये ।।10।।

ॐ ह्रीं चक्रेश्वर्यादिचतुर्विंशतिजिनशासनदेवताः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

चतुःषष्टिप्रमैर्लक्षैः आयांतु भावनैः सह।
असुरेन्द्रा महायज्ञे, कुर्वंतु धर्मदीपनं ।।11।।

ॐ ह्रीं चतुःषष्टिलक्षभवनस्वामिनः असुरेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

देवा नागकुमाराश्च, मौलिमालांबरांकिताः।
लक्षैश्च चतुरशीतीनां, आयांतु भवनेश्वराः ।।12।।

ॐ ह्रीं चतुरशीतिलक्षभवनस्वामिनो नागकुमारेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

द्वासप्ततिमितैर्लक्षैर्भवनानां हि स्वामिनः।
देवाः सुपर्णनामानः, आयांतु श्रीमहोत्सवे ।।13।।

ॐ ह्रीं द्वासप्ततिलक्षभवनानां स्वामिनः सुपर्णकुमारेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

[1]रसर्षिलक्षगेहानां, आयांतु स्वामिनो मुदा।
इंद्रा द्वीपकुमाराणां, स्वस्वपरिच्छदैः सह।।14।।

ॐ ह्रीं षट्सप्ततिलक्षभवनानां स्वामिनो द्वीपकुमारेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

आयांतूदधिदेवा वै, जिनयज्ञमहोत्सवे,
रसर्षिलक्षगेहानां, स्वामिनः सपरिच्छदाः ।।15।।

ॐ ह्रीं षट्सप्ततिलक्षभवनानां स्वामिनो उदधिकुमारेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

1. 76 लक्ष ।

स्तनिताख्यसुराणां च रसर्षिलक्षसद्मनां।
स्वामिनोऽत्र समायांतु, धर्मरक्षणहेतवे ।।16।।

ॐ ह्रीं षट्सप्ततिलक्षभवनानां स्वामिनः स्तनितकुमारेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

विद्युत्कुमारदेवानां, रसर्द्धिलक्षवेश्मनां।
ईशा अत्र समायांतु, इन्द्रध्वजमहोत्सवे ।।17।।

ॐ ह्रीं षट्सप्ततिलक्षभवनानां स्वामिनो विद्युत्कुमारेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

दिक्कुमारगृहाणि स्युः रसर्द्धिलक्षसंख्यया।
तेषामिंद्राः समायांतु सार्ध सर्वपरिच्छदैः ।।18।।

ॐ ह्रीं षट्सप्ततिलक्षभवनानां स्वामिनो दिक्कुमारेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

अग्निकुमारदेवेन्द्राः रसर्द्धिलक्षसद्मनां।
स्वामिनोऽत्र समायांतु, परिवारयुजोऽधुना।।19।।

ॐ ह्रीं षट्सप्ततिलक्षभवनानां स्वामिनो अग्निकुमारेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

वायुकुमारसद्मानि, लक्षाणि रसरुद्रकैः।
तेषामिन्द्राः समायांतु, धर्मोद्योतनतत्पराः ।।20।।

ॐ ह्रीं षण्णवतिलक्षभवनानां स्वामिनो वायुकुमारेन्द्राः सपरिवाराः अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

द्वात्रिंशल्लक्षसंख्यानां विमानानां प्रभुस्त्वरं।

सौधर्मेन्द्रः समायांतु, जिनयज्ञे सुदृष्टियुक् ।।21।।

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशल्लक्षविमानानां स्वामिन् सौधर्मेंद्र! सम्पूर्ण परिवारैः सह अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

ईशानेंद्रो महादेव आगच्छतु जिनोत्सवे।

अष्टाविंशतिलक्षाणां, विमानानां विभुस्त्वरं ।।22।।

ॐ ह्रीं अष्टाविंशतिलक्षविमानानां स्वामिन्! ईशानेन्द्र निजपरिवारैः सह अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

सानत्कुमार देवेन्द्र! एहि जैनमहोत्सवे।

द्विषड्लक्षविमानानां, स्वामी वैमानिकः स्मृतः ।।23।।

ॐ ह्रीं द्वादशलक्षविमानानां स्वामिन् सानत्कुमारेन्द्र! संपूर्ण परिवारैः सह अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

माहेन्द्रस्वर्गादागच्छ, भो माहेन्द्र! मखोत्तमे।

अष्टलक्षविमानानां, ईशो विघ्नौघभंजकः ।।24।।

ॐ ह्रीं अष्टलक्षविमानानां स्वामिन् माहेन्द्र! संपूर्ण परिवारैः सह अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

ब्रह्मब्रह्मोत्तरात् युग्मात्, एहि ब्रह्मेन्द्र! मोदतः।

चतुर्लक्षविमानेशो, जहि विघ्नानि सर्वतः ।।25।।

ॐ ह्रीं चतुर्लक्षविमानानां स्वामिन् ब्रह्मेन्द्र! संपूर्ण परिवारैः सह अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

लांतवकापिष्ठयुग्मात्, लांतवेन्द्र! त्वमेहि भोः।

सुपंचाशत्सहस्राणां, विमानानां पतिः मुदा ।।26।।

ॐ ह्रीं पंचाशत्सहस्रविमानानां स्वामिन् लांतवेन्द्र! सम्पूर्णपरिवारैः सह अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

शुक्रस्वर्गात् महाशुक्रात् महाशुक्रेन्द्र! एहि भोः।

चत्वारिंशत् सहस्राणां, विमानानां महाप्रभुः ।।27।।

ॐ ह्रीं चत्वारिंशत् सहस्रविमानानां स्वामिन् महाशुक्रेन्द्र! संपूर्णपरिवारैः सह अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

स्वःशतारात् सहस्रारात्, शतारेन्द्र! त्वमेहि भोः।

षट्सहस्रविमानानां, स्वामिन्! सर्वपरिच्छदैः ।।28।।

ॐ ह्रीं षट्सहस्रविमानानां स्वामिन् शतारेन्द्र! सम्पूर्णपरिवारैः सह अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

आनतप्राणतस्वर्गात् आरणाच्युतयुग्मतः।

सप्तशतविमानानां इन्द्राः एतात्र सूत्सवे ।।29।।

ॐ ह्रीं सप्तशत्विमानानां स्वामिनः आनतप्राणतारणाच्युतेन्द्राः संपूर्णपरिवारैः सह अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा।

चतुर्णिकायसंयुक्ताः सार्ध स्वस्वपरिच्छदैः।

स्वस्ववाहनसंरूढाः दिव्यालंकारभूषिताः ।।30।।

शच्यादिभिः स्वदेवीभिर्वृता आयांतु हर्षतः।

इंद्राः देवादयश्चान्ये, जिनयज्ञमहोत्सवे ।।31।।(युग्म)

ॐ ह्रीं चतुर्णिकायदेवैः स्वस्वपरिवारदेवैर्देवीभिश्च परिवृताः निजनिज-वाहनारूढा सर्वेऽपि इन्द्राः देवा देव्यो यक्षाः यक्ष्यश्च! अत्र आगच्छत 2, इदं अर्घ्यं पाद्यं जलं गंधं अक्षतान् पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं बलिं स्वस्तिकं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां 2 इति स्वाहा। अर्घ्यं।

।इति देवागम विधिः।

अथ ध्वजारोहणविधानं

यद्यज्जिनौकसां पूजां कुर्वंति तत्र तत्र ते।
ध्वजानारोपयन्तीन्द्रास्तस्मादिन्द्रध्वजं मतं ।।1।।

बसंततिलका छन्दः

साक्षादिमे जिनगृहा अकृता जिनानाम् ।
मुक्त्यंगनामुखनिरीक्षणदर्पणा नु।।
इंद्रोऽहमेष जिनयज्ञविधौ हि साक्षात्।
आरोपयामि वरकीर्तिकरान् ध्वजांश्च ।।1।।

मालामृगेन्द्रकमलांबर वैनतेयमातंगगोपतिरथांगमयूरहंसाः।।
एतत्सुचिन्हदशसंयुतसद्ध्वजानां, आरोपणाय पुष्पांजलिमुत्क्षिपामि ।।2।।

(मंडलस्योपरि ध्वजानामुपरि च पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

मेरूणां श्रीजिनागारेष्वशीतिजिनसद्मसु ।
आरोहयामि सद् भक्त्या मालाचिन्हांकितान् ध्वजान् ।।3।।

ॐ णमो अरहंताणं स्वस्ति भद्रं भवतु सर्वलोकस्य शांतिर्भवतु स्वाहा।

इति ध्वजारोपण मंत्रः।

(इस मंत्र को बोलकर मेरू के 80 मंदिरों पर माला चिन्ह सहित ध्वजा आरोपित करें)[1]

गजदंतजिनागारा विंशतिस्तेषु भक्तितः।
ध्वजान् सिंहांकितान् प्रीत्यारोहयामि महामहे।।4।।

(उपर्युक्त मंत्र बोलकर गजदन्तों के 20 मंदिरों पर सिंहचिन्हयुक्त ध्वजा चढ़ावें।)

त्रिंशत्कुलाचलानां च जिनवेश्मसु हर्षतः ।
आरोपयामि सद्भक्त्या रम्यान् पद्मांकितान् ध्वजान् ।।5।।

(कुलाचलों के 30 मंदिरों पर कमलचिन्हयुक्त ध्वजारोहण करें)

---

1. मंडल के ऊपर सभी मंदिरों के शिखरों पर अथवा स्टैण्ड में लगाकर पहले से ही ध्वजा रख देना चाहिये।प्रत्येक चिन्हों की एक-एक ध्वजा पास में रखना चाहिये जिन्हें कि उपर्युक्त श्लोकों को पढ़कर तथा 'ध्वजारोपणमंत्र' बोलकर मंडल पर चढ़ा देना चाहिये एवं ऊपर रखी हुई ध्वजाओं पर पुष्पांजलि क्षेपण करते जाना चाहिये।

जंब्वादिदशवृक्षाणामंशुकांकितसद्ध्वजान्।
आरोपयामि भक्त्याहं, जिनयज्ञे जिनालये ।।6।।

(जंबू शाल्मलि आदि वृक्षों के 10 मंदिरों पर अंशुकचिन्ह वाली ध्वजा चढ़ावें)

वक्षारपर्वताशीतेः जिनगेहषु मोदतः।
आरोपयामि पूजायां, गरुडांकितसद्ध्वजान् ।।7।।

(वक्षार पर्वतों के 80 मंदिरों पर गरूड़चिन्हयुक्त ध्वजारोहण करें)

इष्वाकृतिचतुर्णां च चतुर्दिङ्मानुषोत्तरे।
ध्वजानारोपयामीह जिनागारे गजांकितान् ।।8।।

(इष्वाकार के चार मंदिर और मानुषोत्तर के चार ऐसे 8 मंदिरों पर गजचिन्ह वाली ध्वजा चढ़ावें।)

रूप्याद्रिजिनगेहानां सुसप्तत्युत्तरं शता-
न्येतेष्वारोपणं कुर्वे, वृषभांकितसद्ध्वजान् ।।9।।

(विजयार्ध के 170 मंदिरों पर बैल चिन्ह वाली ध्वजा चढ़ावें।)

नंदीश्वर जिनागारा द्वापंचाशत्प्रकीर्तिताः।
आरोपयामि तेष्वेनान् रथागचिंहभृद्ध्वजान् ।।10।।

(नंदीश्वर के 52 मंदिरों पर चकवा-चकवी चिन्ह सहित ध्वजायें चढ़ावें।)

कुंडलाद्रौ चतुर्दिक्षु चत्वारश्च जिनालयाः।
आरोहयामि तेष्वेतान् केकीचिन्हांकितान् ध्वजान् ।।11।।

(कुंडलवरपर्वत के 4 मंदिरों पर मयूर चिन्ह वाली ध्वजा चढ़ावें।)

रुचकाद्रौ चतुर्दिक्षु चतुःसंख्ये जिनालये।
आरोपयामि भक्त्याहं, हंसचिन्हैर्युतान् ध्वजान् ।।12।।

(रुचकवरपर्वत के 4 मंदिरों पर हंस चिन्हयुत् ध्वजारोपण करें।)

–बसंततिलकाछंद–

उच्चैर्ध्वजैः सुरपतीनिव चाह्वयन्तः।
सर्वे जिनेंद्रनिलया विलयापदाश्च।।
संपूर्णसौख्यनिलया निजभाक्तिकानाम्।
भूयासुराशु जिनयज्ञमहोत्सवेऽस्मिन् ।।

।इति ध्वजारोपणविधिः।

(पूजा नं.1)

श्री सिद्ध परमेष्ठी पूजा

अथ स्थापना–शंभु छन्दः

(चाल–श्रीपति जिनवर)

सिद्धी के स्वामी सिद्धचक्र, सब जन को सिद्धी देते हैं।
साधक आराधक भव्यों के, भव-भव के दुःख हर लेते हैं।।
निज शुद्धात्मा के अनुरागी, साधूजन उनको ध्याते हैं।
स्वात्मैक सहज आनंद मगन, होकर वे शिव सुख पाते हैं।।1।।

–दोहा–

सिद्धों का नित वास है, लोक शिखर शुचि धाम।
नमूं नमूं सब सिद्ध को, सिद्ध करो मम काम ।।2।।

मनुज लोक भव सिद्धगण, त्रैकालिक सुखदान।
आह्वानन कर मैं जजूं, यहां विराजो आन ।।3।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं ।
ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धसमूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सिन्नधीकरणं।

–अथाष्टकं–गीता छंद–

क्षीरांबुधी का सलिल उज्ज्वल, स्वर्णझारी में भरूँ।
निज कर्म मल प्रक्षालने को, जिन चरण धारा करूँ।।
कर सप्त प्रकृती घात क्षायिक, शुद्ध समकितवान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो।।1।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर चंदन गंध सुरभित स्वर्णद्रव सम लायके।
भव ताप शीतल हेतु जिनवर पाद चर्चूं आयके।।
त्रिभुवन प्रकाशी ज्ञान केवल सूर्य रश्मीवान जो।
नरलोकभव सब सिद्ध त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।2।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि रश्मि सम उज्ज्वल अखंडित शुद्ध अक्षत लाय के।
अक्षय सुपद के हेतु जिनवर, अग्र पुंज चढ़ाय के ।।
जगदर्शि केवल दरश संयुत सिद्ध महिमावान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।3।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्ली चमेली वकुल आदिक, पुष्प सुन्दर लाय के।
भवमल्ल विजयी जिन चरण में हर्ष युक्त चढ़ाय के ।।
जिनराज वीर्य अनंत से युत कर्म अन्तिम हान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।4।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मिष्ठान्न पूरणपोलिका, लाडू इमरती लाय के।
भव भव क्षुधा से दूर जिनवर, पाद अग्र चढ़ाय के।।
सूक्ष्मत्व गुण संयुक्त फिर भी सब जगत का भान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।5।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर दीपक ज्योति जगमग, रत्नदीपक में दिपे।
जिन आरती से निज हृदय में ज्ञान की ज्योती दिपे।।

अवगाहना गुणयुत तथा दें सर्व को स्थान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।6।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दश गंध धूप सुगंध लेकर, अगनि में खेऊँ अबे।
सब अष्ट कर्म प्रजाल हेतू, सिद्ध गुण सेवूँ सबे।।
गुण अगुरुलघु से युक्त भी, लोकाग्र पे नित थान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो।।7।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अमृत फल श्रीफल, सरस अमृत सम लिया।
प्रभु मोक्षफल के हेतु तुम पद, अग्र में अर्पण किया।।
सुख पूर्ण अव्याबाध युत, अतिशय अतीन्द्रियवान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो।।8।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प नेवज, दीप धूप फलादि ले।
अनुपम अनंतानंत गुणयुत, सिद्ध को अर्चूं भले।।
हैं सिद्ध चक्र अनादि अनिधन परम ब्रह्म प्रधान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।9।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

अचिन्त्य महिमा के धनी, परमानंद स्वरूप।
शांतीधारा करत ही, मिले शांति सुखरूप ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी मल्लिका, पुष्प सुगन्धित लाय।
तुम पद पुष्पांजलि करूँ, सुखसंपत्ति अधिकाय ।।11।।

पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

सकल सिद्ध परमात्मा, निकल अमल चिद्रूप।
गाऊँ तुम जयमालिका, सिद्धचक्र शिव भूप ।।1।।

चाल (हे दीन बंधु श्रीपति.....)

जै सिद्धचक्र मध्यलोक से भये सभी।
जै सिद्धचक्र तीन काल के कहे सभी।।
जै जै त्रिलोक अग्रभाग पे विराजते।
जै जै अनादि औ अनंत सिद्ध सासते।।1।।

जो जंबूद्वीप से अनंत सिद्ध हुए हैं।
क्षारोदधी[1] से भी अनंत सिद्ध हुए हैं।।
जो धातकी सुद्वीप से भी सिद्ध अनंता।
कालोदधि से पुष्करार्ध से भी अनंता।।2।।

इन ढाई द्वीप से हुए जो भूतकाल में।
जो हो रहे हैं और होंगे भाविकाल में।।
इस विध अनंतानंत जीव सिद्ध हुए हैं।
जो भव्य को समस्त सिद्धि अर्थ हुए हैं।।3।।

जो घात मोहनीय को सम्यक्त्व लहे हैं।
ज्ञानावरण को घात पूर्ण ज्ञान लहे हैं।।

1. लवणसमुद्र।

कर दर्शनावरण विनाश सर्व दर्शिता।
त्रैलोक्य औ अलोक एक साथ झलकता ।।4।।

होते कभी न श्रांत चूंकि वीर्य अनंता।
ये सिद्ध सभी अंतराय कर्म के हंता।।
आयू करम को नाश गुण अवगाहना धरें।
जो सर्व सिद्ध के लिए अवगाहना करें ।।5।।

अवकाश दान में समर्थ सिद्ध कहाये।
अतएव एक में अनंतानंत समाये।।
फिर भी निजी अस्तित्व लिये सिद्ध सभी हैं।
पर के स्वरूप में विलीन हो न कभी हैं।।6।।

कर नाम कर्म नाश वे सूक्ष्मत्व गुण धरें।
अर गोत्र कर्म नाश अगुरुलघू गुण वरें।।
वे वेदनी विनाश पूर्ण सौख्य भरे हैं।
निर्बाध अव्याबाध नित्यानंद धरे हैं।।7।।

वे आठ कर्म नाश आठ गुण को धारते।
फिर भी अनंत गुण समुद्र नाम धारते।।
चैतन्य चमत्कार चिदानंद स्वरूपी।
चिंतामणी चिन्मात्र चैत्यरूप अरूपी ।।8।।

सौ इंद्र वंद्य हैं त्रिलोक शिखामणी हैं।
सम्पूर्ण विश्व के अपूर्व विभामणी हैं।।
वे जन्म मृत्यु शून्य शुद्ध बुद्ध कहाते।
निर्मुक्त निरंजन सु निराकार कहाते।।9।।

जो सिद्धचक्र की सदा आराधना करें।
संसार चक्र नाश वे शिवसाधना करें ।।
मैं भी अनंत चक्र भ्रमण से उदास हूँ।
हो ''ज्ञानमती'' पूर्ण नाथ आप पास हूँ ।।10।।

–घत्ता–

जय सिद्ध अनंता, शिवतिय कंता।
भव दुख हन्ता तुम ध्याऊँ ।।
जय जय सुख कंदन, नित्य निरंजन।
पूजत ही निज सुख पाऊँ।।11।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकोद्भवसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–गीता छंद–

श्री सिद्धचक्र अनंत की, जो नित्य प्रति पूजा करें।
वे विघ्न संकट नाश के, नित सर्व मंगल विस्तरें।।
इस लोक के सब सौख्य पा, सर्वार्थ सिद्धी को वरें।
फिर 'ज्ञानमति' आर्हंत्यलक्ष्मी, पाय शिवकांता वरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 2)

समुच्चय पूजन

–अथ स्थापना–कुसुमलता छन्द–

(चाल–मेरी भावना)

स्वयं सिद्ध जिन निलय अकृत्रिम, रत्नमयी अनुपम अभिराम।
मध्यलोक के त्रिभुवन वंदित, चार शतक अट्ठावन धाम।।
सुरपति फणपति चक्रपति मिल, पूजन वंदन करें महान।
जिनबिंबों का आह्वानन कर, मैं पूजूँ इह मंगल ठान ।।1।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–शंभु छंद–

गंगा का उज्ज्वल जल लेकर, कंचन झारी भर लाया हूँ।
भव भव की तृषा बुझाने को, त्रय धारा देने आया हूँ।।
जो शाश्वत जिनप्रतिमा राजें, इस मध्य लोक में स्वयंसिद्ध।
उनकी पूजा नित करने से, निज आत्मा होती स्वयं सिद्ध ।।1।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित मलयागिरि चंदन औ, केशर घिस करके लाया हूँ।
भव संभव दाह मिटाने को, जिन चरण चढ़ाने आया हूँ ।।

जो शाश्वत जिनप्रतिमा राजें, इस मध्य लोक में स्वयंसिद्ध।
उनकी पूजा नित करने से, निज आत्मा होती स्वयं सिद्ध ।।2।।

ॐ ह्रीं मध्यलोक संबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि धवल अखंडित वासमती, अक्षत धो करके लाया हूँ।
निज अक्षय पद के पाने को, वसु पुंज चढ़ाने आया हूँ ।।
जो शाश्वत जिनप्रतिमा राजें, इस मध्य लोक में स्वयंसिद्ध।
उनकी पूजा नित करने से, निज आत्मा होती स्वयं सिद्ध ।।3।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पंकज बेला चंपक सुरभित, ये सुमन चढ़ाने आया हूँ।
निज आतम गुणमय सुमनों की, मैं सुरभि पाने आया हूँ।।
जो शाश्वत जिनप्रतिमा राजें, इस मध्य लोक में स्वयंसिद्ध।
उनकी पूजा नित करने से, निज आत्मा होती स्वयं सिद्ध ।।4।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोदक खाजे ताजे लेकर, नैवेद्य चढ़ाने आया हूँ।
समरसयुत अमृतपिंडमयी, निज गुण का इच्छुक आया हूँ।।
जो शाश्वत जिनप्रतिमा राजें, इस मध्य लोक में स्वयंसिद्ध।
उनकी पूजा नित करने से, निज आत्मा होती स्वयं सिद्ध ।।5।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमय दीपक की ज्योति जले, कर्पूर जले जगमग होता।
दीपक से आरति करते ही, निज अंतर ज्ञान प्रगट होता।।
जो शाश्वत जिनप्रतिमा राजें, इस मध्य लोक में स्वयंसिद्ध।
उनकी पूजा नित करने से, निज आत्मा होती स्वयं सिद्ध ।।6।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध सुगंधित धूप लिये, मैं धूपायन में खेता हूँ।
वसु कर्म पूंज को जला जला, निज आतम सौरभ लेता हूँ।।
जो शाश्वत जिनप्रतिमा राजें, इस मध्य लोक में स्वयंसिद्ध।
उनकी पूजा नित्त करने से, निज आत्मा होती स्वयं सिद्ध ।।7।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल बादाम सरस दाडिम, अंगूर फलों को लाया हूँ।
निज मोक्ष महाफल पाने को, तव अर्पण करने आया हूँ।।
जो शाश्वत जिनप्रतिमा राजें, इस मध्य लोक में स्वयंसिद्ध।
उनकी पूजा नित्त करने से, निज आत्मा होती स्वयं सिद्ध ।।8।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध सु अक्षत पुष्प चरू, वर दीप धूप फल ले करके।
प्रभु अर्घ्य समर्पण करता हूँ, संकल्प विकल्प सभी हरके।।
जो शाश्वत जिनप्रतिमा राजें, इस मध्य लोक में स्वयंसिद्ध।
उनकी पूजा नित्त करने से, निज आत्मा होती स्वयं सिद्ध ।।9।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्शाश्वतजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

शाश्वत श्रीजिनबिम्ब, जलधारा से पूजते।
शांति करो जिनराज, शांतीधारा मैं करूँ ।।10।।

शांतये शांतिधारा ।

पारिजात के पुष्प, सुरभित करते दश दिशा।
पुष्पांजलि से पूज, भव भव के दुख को हरूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जयमाला

शंभु छंद–**जय मध्यलोक भव चैत्यालय, जय आदि अंत विरहित दाता।**
जय स्वयं सिद्ध अनुपम अविचल, जय भवभव के दुःख से त्राता।।

जय स्वयं सिद्ध शाश्वत जिनगृह, चिंतामणि चिंतित फलदाता।
जय कामधेनु सुर कल्पवृक्ष, पारसमणि वांछित फलदाता ।।1।।

जय पांच मेरू वक्षारगिरी, गजदन्त कुलाचल के मंदिर।
विजयारध, जम्बू शालमली, तरु के इष्वाकृति के मंदिर।।
मनुजोत्तर नग नंदीश्वर के कुण्डल रूचकाचल के सुन्दर।
ये जिनगृह चउशत अट्ठावन, उनमें जिनवर प्रतिमा मनहर।।2।।

स्वात्मानन्दैक परम अमृत, झरने से झरते समरस को।
जो पीते रहते हैं मुनिगण, वे भी उत्कण्ठित दर्शन को।।
वे ध्यान धुरंधर ध्यान मूर्ति, यतियों को ध्यान सिखाती हैं।
भव्यों को अतिशय पुण्यमयी, अनवधि पीयूष पिलाती हैं।।3।।

ढाई द्वीपों के मंदिर तक, मानव विद्याधर जाते हैं।
आकाश गमन ऋद्धीधारी, ऋषिगण भी दर्शन पाते हैं।।
आवो आवो हम भी पूजें ध्यावें वंदे गुणगान करें।
भव-भव के संचित कर्मपुंज, सब हान, 'ज्ञानमति' प्राप्त करें।।4।।

–घत्ता–

जय जय श्री जिनवर, धर्म कल्पतरू, जय जिनमंदिर सिद्ध मही
जय जय जिनप्रतिमा, सिद्धन उपमा, अनुपम महिमा नित्य सही।।5।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसम्बन्धिचतुःशताष्टपंचाशत् शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिन-बिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.3)

सुदर्शनमेरु जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

मध्यलोक के मध्य में, मेरु सुदर्शन नाम।
जंबूद्वीप विषै कहा, प्रथम गिरीन्द्र प्रधान।।1।।

चारों वन के चार दिश, सोलह जिनवर सद्म।
आह्वानन विधि मैं करूँ, पूजूँ जिनपद पद्म।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टक-चाल-नन्दीश्वर पूजा

शुचि शीतल प्रासुक नीर तीरथ गंग भरा।
चरणों में धारा देय सब आतंक हरा।।
मेरू के श्री जिनगेह सोलह विख्याता।
जो पूजें भक्ति समेत पावें सुख साता।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अलि गुंजत गन्ध सुगन्ध चंदन घिस लाया।
जिनबिंब चरण अरविंद चर्चन को आया ।।मेरू.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ चन्द्र किरण सम श्वेत अक्षत धोय लिया।
मैं अक्षत सुख के हेत, सन्मुख पुंज किया।।
मेरू के श्री जिनगेह सोलह विख्याता।
जो पूजें भक्ति समेत पावें सुख साता।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पंकेरुह हरसिंगार वकुल सुगन्ध भरे।
जिन चरणन देत चढ़ाय भव संताप हरे ।।मेरू.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा

फेनी घेवर पकवान ताजे सरस बने।
जिन सन्मुख-चरु की भेंट भूख पिशाचि हने।।मेरू.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक की ज्योति प्रकाश जगमग ज्योति जले।
दीपक से पूजूं नाथ! हिय अज्ञान टले ।।मेरू.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु धूप सुगन्ध दश दिश वास करें।
जिन सन्मुख अग्नीदाह, करते पाप जरें ।।मेरू.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नारंगी आम अनार केला फल सारे।
जिन सन्मुख फल की भेंट, करते सुख सारे।।मेरू.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादिक वसु द्रव्य लेकर थाल भरा।
प्रभु अर्घ्य समर्पण आज, करता हर्ष भरा।।

मेरू के श्री जिनगेह सोलह विख्याता।
जो पूजें भक्ति समेत पावें सुख साता।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि सम श्वेत।
जिनपद धारा मैं करूं, तिहुँ जग शांती हेत ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्री जिन चरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

सुदर्शनमेरु भद्रसाल जिनालय पूजा

अथ स्थापना–नरेन्द्र छन्द

(चाल – परम परंज्योति.....)

जम्बूद्रुम से लक्षित जम्बू-द्वीप सुसार्थक नामा।
एक लाख योजन विस्तृत सब द्वीपों में परधाना।।
इसके बीचोंबीच नाभिवत मेरू सुदर्शन जानो।
उसके भद्रसाल में जिनगृह आह्वानन विधि ठानो।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरणम् ।

–अथाष्टक–नरेन्द्र छंद–

रेवानदि को तीरथमय जल, पयसम मुनि मनहारी।
जन्म जरा मृति ताप तीन हर, धार करूँ हितकारी।।
सुरगिरि भद्रसाल वन चारों, चैत्यालय सुखकारी।
सुरपति मौलि मणीप्रभ चुंबित, जिन पद धोक हमारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा

कंचनद्रव सम कुंकुम केशर, भ्रमर समूह रमे हैं।
जिन पद पंकज चर्चन करते, भववन में न भ्रमें हैं।।सुर.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

दुग्धसिंधु के फेन सदृश अति अक्षत उज्ज्वल लाये।
अमृत पिंड सदृश पुंजों से जिनपद पूज रचाये।।सुर.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही चमेली मल्लि मालती, सुवरण पुष्प मंगाये।
घ्राण नयन प्रिय काम बाण हर, जिनपद पद्म चढ़ाये ।।सुर.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बरफी पेड़ा खीर मलाई, पूरणपोली लाये।
क्षुधा रोग निज दूर करन को, जिनवर निकट चढ़ाये।।सुर.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमयदीप रतनमय ज्योति, दशदिश तम हरता है।
जिनपद पूजत मोह तिमिर सब, तत्क्षण ही नशता है।।सुर.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कालागरु चंदन मलयागिरि धूप सुगन्धित लेके।
दशदिश सुरभित करूँ धूम से, धूप अगनि में खेके।।
सुरगिरि भद्रसाल वन चारों, चैत्यालय सुखकारी।
सुरपति मौलि मणीप्रभ चुंबित, जिन पद धोक हमारी।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसाल्वनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

एला केला सेव मोसम्बी नासपती फल लाये।
घ्राण नयन मन प्रीणन[1] तुम ढिग शिवफल हेतु चढ़ाये। सुर.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसाल्वनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलफल आदिक अर्घ्य संजोकर उसमें रतन मिलाऊँ।
जिनवर सन्मुख अर्घ्य चढ़ाकर भवभव भ्रमण मिटाऊँ।।सुर.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूभद्रसाल्वनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंधजल, क्षीरोदधि सम श्वेत।
जिनपदधारा मैं करूँ तिहुं जग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

पारिजात के पुष्प ले, श्री जिन चरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–दोहा–

सर्वश्रेष्ठ गिरिराज है, मेरु सुदर्शन नाम।
भद्रसाल वन भूमि के, जिनगृह करूँ प्रणाम।।1।।

इति सुदर्शनमेरुभद्रसालवनस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

1. संतुष्ट करने।

–वीरछंद–

भद्रसाल वन पृथ्वी तल पर, मेरु के चौतरफ कहा।
पूर्वदिशा में जिन चैत्यालय सुर नर खग से पूज्य कहा।।
आत्मसुधारस आस्वादी मुनि, दर्शन वंदन नित करते।
अष्ट द्रव्य से पूजन कर भवि, जन्म मरण दुख को हरते।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रसालवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयस्थ सर्वजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भद्रसाल के दक्षिण दिश में कांचन छवि जिनमंदिर है।
रत्नमयी जिनप्रतिमा राजें अनुपम रूप मनोहर है।। आत्म.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रसालवनस्थितदक्षिणदिग्जिनालयस्थ सर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भद्रसाल वन पश्चिम दिश में, अकृत्रिम जिनधाम कहा।
भवविजयी जिनवर बिंबों से अद्भुत अतिशय धाम रहा।।आत्म.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रसालवनस्थितपश्चिमदिग्जिनालयस्थ सर्वजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भद्रसाल के उत्तर दिश में, जिनवर भुवन अतुल शुभ है।
भव्य मुमुक्षू जन नित पूजे, कोटिबार नित प्रणमत हैं।। आत्म.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रसालवनस्थितउत्तरदिग्जिनालयस्थ सर्वजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-चौबोल–

मेरु सुदर्शन भद्रसाल में, चारों दिश के चार कहे।
त्रिभुवन तिलक जिनेश्वर के गृह, अकृत्रिम अभिराम रहे।।
जल गंधाक्षत पुष्प चरूवर, दीप धूप फल अर्घ्य लिया।
निज शुद्धातम लब्धी हेतू, जिन पद पूरण अर्घ्य दिया।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रसालवनस्थितचतुर्जिनालयस्थ सर्वजिन बिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

सुदर्शनमेरु नन्दनवन जिनालय पूजा

अथ स्थापना–सोरठा

मेरु सुदर्शन माहिं, नंदन वन के जिनभवन।
आह्वानन कर आज, मैं पूजों जिनबिंब को ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथ अष्टक-गीताछंद

(चाल-सम्मेदगढ़ गिरनार.....)

पीयूषसम जल लाय हितकर, नाथ पदधारा करूँ।
जर जन्म मृत्यु तापत्रय के, शांति हित आशा धरूँ।।
श्री मेरू कांचनगिरि दुतिय, नंदन वनी के जिनगृहा।
जिन पूजते संसार संभव, चतुर्गति के दुख दहा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गुंजारते मधुकर सुरभियुत गंध चंदन लायके।
भववन दवानल तापहर, जिनचरण गंध चढ़ायके।।श्री.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यःचंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशिकिरण सम उज्ज्वल कमल, अक्षत लिया भर थाल में।
वसु पुण्य पुंज चढ़ाय, पूजूँ, हर्ष से नत भाल मैं।।श्री.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्ली बकुल अरविंद पाटल, फूल सुरभित ले लिये।
जिनपाद पंकज पूजते, सब काम शर निष्फल किये।।
श्रीमेरू कांचनगिरि दुतिय नंदन वनी के जिनगृहा।
जिन पूजते संसार संभव, चतुर्गति के दुख दहा।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यःपुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मिष्टान्न घृतमय सरस व्यंजन, दिव्य अमृत सम लिया।
जिन पाद पंकज पूज के, क्षुध डाकिनी को वश किया।।श्री.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक शिखा से यज्ञभूमी, में उजाला हो गया।
प्रभु आरती करते तुरत, निज मोहतम सब खो गया।।श्री.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित अगुरु गुरु श्वेत चंदन, धूप धूपायन जले।
बहु गगन में धूमावली उड़ती करम अरि को दले।।श्री.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दाडिम पनस अंगूर केला आम्र अमरख लाइये।
मन नयन भावन सत्फलों से, पूज शिवफल पाइये।।श्री.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत आदि ले भर अर्घ्य कंचन थाल में।
जिन पाद पूजूँ फिर कभी, नहिं फसूँ भ्रम के जाल में।।श्री.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि सम श्वेत।
जिनपद धारा मैं करूं, तिहुंजग शांती हेत ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्री जिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्यं

–सोरठा–

जंबूद्वीप महान् ताके मध्य सुमेरु के ।
नंदन वन जिनधाम पुष्पांजलि कर पूजहूँ।।1।।

इति सुदर्शनमेरु नंदनवनस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलि क्षिपेत्।

–रोला छंद–

मेरु सुदर्शन विषैं, सुभग नंदन वन जानो।
सुरनरगण से पूज्य, पूर्वदिक् जिन गृह मानो।।
जल गंधादि मिलाय, अर्घ्य ले पूजो भाई ।
रोग शोक मिट जाय मिले निज संपति आई।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयस्थ सर्वजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदन वन के मांहि जिनालय दक्षिण दिश हैं।
नित्य महोत्सव साज, देवगण पूजन रत हैं।।
जल गंधादि मिलाय, अर्घ्य ले पूजो भाई ।
रोग शोक मिट जाय मिले निज संपति आई।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनस्थितदक्षिणदिग्जिनालयस्थ सर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश जिननिलय, मनोहर नंदनवन में।
सुर विद्याधर रहें सतत भक्तीरत जिन में ।।

जल गंधादि मिलाय, अर्घ्य ले पूजो भाई ।
रोग शोक मिट जाय मिले निज संपति आई।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनस्थितपश्चिमदिग्जिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दनवन के उत्तर जिन मंदिर सुखकारी।
उसमें जिनवर बिंब, दुरितहर मंगलकारी।।
जल गंधादि मिलाय, अर्घ्य ले पूजो भाई ।
रोग शोक मिट जाय मिले निज संपति आई।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनस्थितउत्तरदिग्जिनालयस्थ सर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं –दोहा

मेरु सुदर्शन में दिपे, नंदन वन सुखकार।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय के, तिनके जिनगृह चार।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिनन्दनवनस्थितचतुर्जिनालयस्थ सर्वजिन-बिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदर्शनमेरु सौमनसवन जिनालय पूजा

अथ स्थापना–अडिल्ल छंद

सुरगिरि में वन तृतिय सौमनस शुभ कहा।
ताके चहुंदिश चार जिनालय हैं महा।।
रत्नमयी जिनबिंब उन्हीं में अघ हरें।
आह्वानन कर पूजें हम शिवतिय वरें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथ अष्टक-द्रतविलम्बित छंद

सुरनदी जल निर्मल लाइया, भवहरण जिनपाद चढ़ाइया।
सुरगिरी के वन सौमनस में, जिन निकेतन पूजें नित नमें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभि कुंकुम चंदन लाइके, पद सरोरुह आप चढ़ाय के।
सुरगिरी के वन सौमनस में, जिन निकेतन पूजें नित नमें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल निष्तुष तंदुल लायके, अमृत पिंड समान चढ़ाय के।
सुरगिरी के वन सौमनस में, जिन निकेतन पूजें नित नमें।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमन की माला सुरभित लिये, सुमनसा मनहर तुम अर्पिये।
सुरगिरी के वन सौमनस में, जिन निकेतन पूजे नित नमें।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृतमयी पकवान चढ़ाइये, निज क्षुधामय रोग मिटाइये।
सुरगिरी के वन सौमनस में, जिन निकेतन पूजें नित नमें।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सकल तामस नाशन दीप ये, पद जजत त्रयलोक विलोकिये।
सुरगिरी के वन सौमनस में, जिन निकेतन पूजे नित नमें।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगरु कृष्णागरु वर धूप ले, अगनि में खेते सब अघ जले।
सुरगिरी के वन सौमनस में, जिन निकेतन पूजे नित नमें।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस आम्र अनार भले भले, तुम जजत ही शिवफल को फलें।
सुरगिरी के वन सौमनस में, जिन निकेतन पूजे नित नमें।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल सुचंदन अक्षत आदि से, करत अर्घ्य छुटें जगजाल से।
सुरगिरी के वन सौमनस में, जिन निकेतन पूजे नित नमें।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगन्ध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुँ जग शांती हेत ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्री जिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।1।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा

कल्पवृक्षसम जान, सुरुगिरि का सौमनस वन।
ताके चउ जिनधाम, पुष्पांजलि कर मैं जजूँ।।1।।

इति सुदर्शनमेरुसौमनसवनस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

–दोहा–

वन सौमनस महान है, मेरु सुदर्शन माहिं।
पूरब दिश में जिनभवन, पूजूँ अर्घ्य चढ़ाहिं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वन सौमनस जिनेश गृह, दक्षिण दिशा मंझार।
वसु विधि अर्घ्य संजोय के, पूजो हो भव पार ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश सौमनस के, स्वर्णमयी जिनधाम।
भक्तिभाव से अर्घ्य ले, पूजो जिनवर धाम।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिश सौमनस में, श्री जिनभवन महान्।
त्रिभुवनतिलक प्रसिद्ध है, जजूं अर्घ्य ले आन ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितउत्तरदिग्जिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

सुरगिरि का सौमनस वन, दिशदिश में जिनगेह।
पूरण अर्घ्य चढ़ाय के, जजूँ हृदय धर नेह।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितचतुर्जिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

सुदर्शनमेरु पाण्डुकवन जिनालय पूजा

अथ स्थापना–दोहा

सुरगिरि पर पांडुकवनी, दिश दिश जिनगृह चार।
स्थापन कर पूजहूँ, जिनप्रतिमा सुखकार।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टक-अडिल्ल छंद

देवसरित को नीर तीर्थ सम लाइये।
पापपंक क्षालन हित नाथ चढ़ाइये।।
कनकदेह सुरपर्वत, वन पांडुक तहां।
कर्मपंक क्षालन हित सुर पूजें वहाँ ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी केशर हरिचंदन घिस लिया।
भव दावानल शांतिहेतु, प्रभु चर्चिया।।कनकदेह.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदन निर्वपामीति स्वाहा।

साठीं चावल चन्द्रकिरण सम धो लिये।
अमृत पिंड समान पुंज तुम ढिंग किये।।कनकदेह.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पारिजात मंदार कुंद मचकुंद ले।
मधुकर चुंबित जजूँ पाद पंकज भले।।कनकदेह।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत शक्करमय घेवर फेनी ले घने।
तुम नैवेद्य चढ़ाय क्षुधा डाकिन हने।।कनकदेह.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमपात्र में घृत कर्पूर जलाइये।
दीपक से जिनपूज अज्ञान नशाइये ।।कनकदेह.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अलि गुंजे चहुँ ओर धूप की गंध तें।
कर्म भगे चहुं ओर पूज पदपद्म तें।।
कनकदेह सुरपर्वत, वन पांडुक तहां।
कर्मपंक क्षालन हित सुर पूजें वहाँ ।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रमुक[1] संतरा सेव आम्र फल लाइये।
जिनपद पंकज पूज, मुक्तिफल पाइये।।कनकदेह.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधाक्षत सुम चरु आदिक अर्घ्य ले।
जिनपद पंकज पूज सकल संपत्ति मिले ।।कनकदेह.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुंजग शांती हेत ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्री जिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य –सोरठा

पांडुकवन जिनगेह सुरतरु सुमन चढ़ायके।
पूजूँ धर वर नेह, फेर न भव वन में भ्रमूँ।।1।।

इति श्रीसुदर्शनमेरुपांडुकवनस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

1. सुपारी।

–शंभु छन्द–

मेरू पर चौथा पांडुकवन, उसके पूरब दिश सुन्दर हैं।
रत्नों की मूर्ती से संयुत, मणिकनकमयी जिनमंदिर हैं।।
जल गंधादिक वसु द्रव्य लिये, नित पूजा करके अर्घ्यं करूँ।
संसार जलधि से तिरने को, जिन भक्ती नौका प्राप्त करुँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपांडुकवनपूर्वदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांडुकवन में दक्षिण दिश का, जिनभवन अनूपम कहलाता।
जो दर्शन वंदन करते हैं, उसको यह अनुपम फलदाता।।
जल गंधादिक वसु द्रव्य लिये, नित पूजा करके अर्घ्यं करूँ।
संसार जलधि से तिरने को, जिन भक्ती नौका प्राप्त करुँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपांडुकवनदक्षिणदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांडुकवन के पश्चिम दिश में, जिन चैत्यालय महिमाशाली।
सुरनर विद्याधर से पूजित, सब ताप हरे गुणमणिमाली।।
जल गंधादिक वसु द्रव्य लिये, नित पूजा करके अर्घ्यकरूँ।
संसार जलधि से तिरने को, जिन भक्ती नौका प्राप्त करुँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपांडुकवनपश्चिमदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांडुकवन के उत्तर दिश में, शुभ त्रिभुवनतिलक जिनालय है।
नामोच्चारण से पाप दहे, भक्तों के लिये सुखालय है।।
जल गंधादिक वसु द्रव्य लिये, नित पूजा करके अर्घ्यं करूँ।
संसार जलधि से तिरने को, जिन भक्ती नौका प्राप्त करुँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपांडुकवनउत्तरदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

श्रीमेरुसुदर्शन पांडुकवन, दिशदिश में जिनमंदिर शोभें।
सब पंचवरणमय रत्नों के, अकृत्रिम भूकायिक शोभें।।
जल गंधादिक वसु द्रव्य लिये, नित पूजा करके अर्घ्यं करूँ।
संसार जलधि से तिरने को, जिन भक्ती नौका प्राप्त करूँ।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा–

मेरु सुदर्शन के सभी, सोलह जिनवर धाम।
वसुविध अर्घ्य संजोय के, मैं पूजूँ इत ठाम।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि

जाप्य–(108 बार (पुष्पों से))

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।

जयमाला

–दोहा–

सर्वोत्तम सर्वोच्च है, प्रथम मेरु गिरिराज।
उसकी यह जयमालिका, हर्षित गाऊँ आज ।।1।।

–शम्भु छन्द–

जय मेरु सुदर्शन है अनुपम, सोलह चैत्यालय से सोहे।
अध्यात्म शिरोमणि योगीजन, उनका भी अतिशय मन मोहे।।
उपवन वापी से कूटों से, परकोटों से सुर भवनों से।
मंडित रमणीक महासुन्दर, कांचन मणिमय शुभ रत्नों से।।2।।

पृथ्वी पर भद्रसाल वन है, चंपक तरु आदिक से भाता।
है पांच शतक योजन ऊपर, नन्दनवन अतिशय सुखदाता।।

इससे साढ़े बासठ हजार, योजन ऊपर सौमनस वनी।
छत्तीस हजार महायोजन, ऊपर पांडुकवन सौख्य घनी।।3।।

चारों वन के चारों दिश में, अकृत्रिम चैत्यालय मानो।
प्रतिमंदिर इक सौ आठ कही, जिनप्रतिमा अतिशययुत जानो।।
इनके दर्शन से घोर महा, मिथ्यात्व तिमिर भी नश जाता।
सम्यग्दर्शन की ज्योति जगे, आत्मा आत्मा को लख पाता।।4।।

भव भव से संचित पाप राशि, इक क्षण में भस्म हुआ करती।
जिनराज चरण की भक्ती ही, भवि के भव-भव दुःख को हरती ॥
पांडुकवन की विदिशाओं में, पांडुक आदिक हैं चार शिला।
तीर्थंकर के अभिषव जल से, वे पूज्य हुईं सुरवंद्य इला।।5।।

जय भद्रसाल के जिनमंदिर, जय नंदनवन के जिनगेहा।
जय सौमनसं पांडुकवन के, जिनभवन जजूँ मैं धर नेहा।।
ये मूर्ति अचेतन होकर भी, चेतन को वांछित फल देतीं।
जो पूजें ध्यावें भक्ति करें, उनके सब संकट हर लेतीं।।6।।

–दोहा–

मेरुसुदर्शन की भविक, पूजा करो पुनीत।
मेरु सदृश उत्तुंग फल, लहो शीघ्र ही मीत ।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.4)

सुदर्शनमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजा

अथ स्थापना–गीताछंद

जगबीच जंबूद्वीप उत्तम, कनक पर्वत मध्य है।
तिस विदिश चारों में कहे, पर्वत सुभग गजदंत हैं।।
उन चार पर हैं चार जिनगृह, यहाँ उनकी अर्चना।
मैं करुँ निर्मल भाव से जिन, भक्ति पूजा वंदना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्विदिशायां चतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्विदिशायां चतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्विदिशायां चतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथ अष्टक-गीताछंद

जल पद्मद्रह का लाय उज्ज्वल कनक झारी में भरा।
दे धार जिन पदपद्म को, आनंद रस मन में भरा।।
मुझ चार गति के दुःखनाशन हेतु चारो मंदिरा।
निज ज्ञान दर्शन सौख्यवीरज दे चतुष्टय इंदिरा[1]।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गोशीर चंदन घिस सुगंधित, भर कटोरी में लिया।
जिन पादपद्म चढ़ाय श्रद्धा भाव से अर्चन किया ।।

1. लक्ष्मी।

मुझ चार गति के दुःखनाशन हेतु चारों मंदिरा।
निज ज्ञान दर्शन सौख्यवीरज दे चतुष्टय इंदिरा।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अति धवल तंदुल चंद्र की कांती सदृश भर थाल में।
जिन चन्द्र सन्मुख पुंज धर, नाऊं खुशी से भाल मैं।।मुझ.।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मचकुंद चंपक औ कदंबक, पुष्प निज कर से चुने।
जिनराज पद अरविंद को, जजतेसभी दुःख को धुने।।मुझ.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

गोक्षीर तंदुल शर्करायुत, फेनि शतछिद्रा[1] बनी।
निज क्षुधारोग विनाश हेतू, पूजहूँ त्रिभुवन धनी।।मुझ.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर कनक दीपक सुरभि घृत, कार्पास बाती जगमगे।
सब दिशा हों उद्योत उससे, जजों जिनपद सुख जगे।।मुझ.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूपदह में धूप दहते, धूम उड़ता दशदिशा।
वसु कर्म जरते देख कर, मोहारि भगता सब दिशा।।मुझ.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल आम्र अमरख सेव केला, और एला थाल भर।
जिनराज सन्मुख भेंट कर, सिद्धिप्रिया तत्काल वर।।मुझ.8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. घेवर।

वर नीर गंधाक्षत सुमन, चरु दीप धूप फलौघ ले।
शुभ अर्घ सों जिनचरण पूजत, पाप अरि सेना टले।।
मुझ चार गति के दुःखनाशन हेतु चारों मंदिरा।
निज ज्ञान दर्शन सौख्यवीरज दे चतुष्टय इंदिरा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यःअर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्रीजिनचरण सरोज, धारा देते भव मिटे ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरतरु के सुम लेय, प्रभुपद में अर्पण करुँ।
कामदेव मद नाश, पाऊँ आनंद धाम मैं।।11।।

दिव्यपुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य-सोरठा–

मेरु सुदर्शन लग्न, विदिशा में गजदंत हैं।
पृथक् पृथक् तिन पूज, जिनगृह अर्घ्य चढ़ायके।।1।।

इति सुदर्शनमेरोर्विदिशायां गजदंतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

–दोहा–

मेरू के आग्नेय दिश, 'महासौमनस' नाम।
रजतमयी गजदंत यह, सातकूट युत जान।।
मेरु निकट जिनराज गृह, सिद्धकूट पर सिद्ध।
मन वच तन से पूजकर, करूँ काल अरि विद्ध ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः आग्नेयविदिशि महासौमनसगजदन्तसम्बन्धि-सिद्धकूट जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरू के नैऋत्यदिश 'विद्युत्प्रभ' गजदन्त।
वर्ण तपाये स्वर्णसम, नव कूटहिं शोभंत।।

मेरु निकट जिनराज गृह, सिद्धकूट पर सिद्ध।
मन वच तन से पूजकर, करूँ काल अरि विद्ध ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः नैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभगजदन्तसम्बन्धिसिद्धकूट जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गन्धमादनाचल' कहा मेरू के वायव्य।
सातकूटयुत स्वर्णसम, पूजे सुर नर भव्य।।मेरुनिकट.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः वायव्यविदिशिगन्धमादनगजदन्तसम्बन्धिसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'माल्यवान गजदन्त' है, मेरू के ईशान।
वर्ण रुचिर वैडूर्यमणि, नवकूटों युत मान।।मेरुनिकट.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः ईशानविदिशि माल्यवानगजदन्तसम्बन्धि-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–सोरठा–

चार कहे गजदंत, इनके चारों जिनभवन।
इनमें जो जिनबिंब, उन सबकी पूजा करूँ।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः चतुर्विदिशायां चतुर्गजदन्तसम्बन्धिचतुः-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

गजदंतों पर जिनभवन, शाश्वत बने विशाल।
जिनपद पंकज भ्रमर जन, पढ़ते तिन जयमाल।।1।।

तोटकछंद–(चाल-जयकेवलभानु.....)

जय मेरु सुदर्शन शैल महा, जय ता विदिशा गजदंत कहा।
जय हस्तिन दंत समान कहे, निषधाचल नील सुपर्श रहे।।

शत पंच सुयोजन तुंग कहे, ढिंग मेरु तने परमाण यहे।
निषधाचल नील तने चउ सौ, वर योजन मान सुतुंग कह्यो।।2।।
विस्तार सुयोजन पांच शते, निषधाचल मेरु तने लंबे।
उत नील सुमेरु तके फैले, नदि सीत सितोद गुफा धर ले।।3।।
जिनमंदिर में जिन की प्रतिमा, जय जय जय सिद्धन की उपमा।
जय इंद्र सदा चामर ढुरते, जय तीन सुछत्र सदा फिरते ।।4।।
जय आसन रत्न जड़ा प्रभु का, द्युतमंडल शोभ रहा प्रभु का।
जय देवरमा मिल नृत्य करें, जय वाद्य मृदंग धुनी विकरें।।5।।
मुनिध्यान धरें समभाव लिये, वसु कर्म कलंक निमूल किये।
सुर खेचर आवत भक्ति भरे, जल गंध फलादिक पूज करें।।6।।
जय जन्म सुधन्य गिने निजके, भव अल्प करें जिन भक्ति थके।
बस आज मिले तव भक्ति प्रभो, मुझ केवल 'ज्ञानमती' वर दो ।।7।।

–घत्ता–

जय जय गुणकारी, सुख संचारी, विपति विदारी यश करणा।
जय मंगलकारी, अधम उधारी, करुणाधारी तुम शरणा।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.5)

सुदर्शनमेरु संबंधी जंबूवृक्ष शाल्मलिवृक्ष जिनालय पूजा

अथ स्थापना–गीताछन्द

गिरि मेरु के उत्तर दिशी उत्तरकुरू शोभे अहा।
उसमें सुदिक् ईशान के जंबूतरू राजे महा।।
दक्षिण दिशा में देवकुरु नैऋत्य कोण सुहावनी।
तरु शाल्मलि शुभरत्नमय, सुन्दर दिखे शाखाघनी।।1।।

–दोहा–

दोनों तरु की शाख पर, दो श्री जिनवर गेह।
आह्वानन कर मैं जजूँ, सदा हृदय धर नेह ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः ईशाननैऋत्यकोणयोः जम्बूशाल्मलिवृक्षसम्बन्धि-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः ईशाननैऋत्यकोणयोः जम्बूशाल्मलिवृक्षसम्बन्धि-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः ईशाननैऋत्यकोणयोः जम्बूशाल्मलिवृक्षसम्बन्धि-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अष्टक-अडिल्लछंद

सुरगंगा को नीर सुरभि प्रासुक किया।
जिनपद धारा देय, सकल मल क्षय किया।।
जंबू शाल्मलि वृक्ष तने जिनधाम को।
जो पूजें धर प्रीति, लहे शिवधाम को ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि घनसार सुकुंकुम गंध ले ।
सिद्धनि के प्रतिबिंब, चरण को चर्च ले।।
जंबू शाल्मलि वृक्ष तने जिनधाम को।
जो पूजे धर प्रीति, लहे शिव धाम को ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जल से धौत सुअक्षत मुक्ताफल समा।
पुंज धरूँ जिनसन्मुख भक्ती अनुपमा।।जंबू.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही चमेली कमल केवड़ा फूल ले।
प्रभु के चरण चढ़ाऊँ भव के दुख टले।।जंबू.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सद्यजात[1] घेवर बावर मोदक घने।
चरु की पूजा नित्य क्षुधा व्याधी हने।।जंबू.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नदीप की ज्योति दशों दिश तम हरे।
अंतर भेद विज्ञान प्रगट हो भ्रम टरे।।जंबू.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप अगनि में खेय धूम दशदिश उड़े।
कर्म पुंज प्रज्वले सतत आनंद बढ़े ।।जंबू.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

1. ताजे।

सुरतरु के परिपक्व सरस फल लाय के।
प्रभु की पूजा करूँ हरष गुण गाय के ।।
जंबू शाल्मलि वृक्ष तने जिनधाम को।
जो पूजें धर प्रीति, लहे शिवधाम को ।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वारि सुचंदन अक्षत फूल चरू मिले।
दीप धूप शुचि उत्तम फल युत अर्घ्य ले।।जंबू.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर, कंचन झारी में भरा।
जिनपद धारा देत, शांति करो सब लोक में ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल कमल अरविंद, सुरभित फूलों को चुने।
जिनपद पंकज अर्घ्य, यश सौरभ चहुँदिश भ्रमें।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य-सोरठा–

जंबू शाल्मलि वृक्ष, तिनके जिनगृह को जजूँ।
पुष्पांजलि कर नित्य, जो पूजें सो शिव लहें।।1।।

इति जम्बूवृक्षशाल्मलिवृक्षस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–गीताछन्द–

'जम्बूतरू' की उत्तरी शाखा विषे जिनधाम है।
सब देव देवी करें अर्चा, मैं जजूँ इह थान है।।
वर नीर चंदन आदि वसुविध द्रव्य थाली में लिया।
संसार रोग निवार स्वामी अर्घ्य से पूजन किया।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजंबूवृक्षस्य उत्तरशाखायां जिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'द्रुम शाल्मलि' की दक्षिणी, शाखा उपरि जिनगेह है।
योगी सदा ध्याते उन्हें, हम भी जजें धर नेह है।।
वर नीर चंदन आदि वसुविध द्रव्य थाली में लिया।
संसार रोग निवार स्वामी अर्घ्य से पूजन किया।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिशाल्मलिवृक्षस्य दक्षिणशाखायां जिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–दोहा–

जंबू शाल्मलि वृक्ष पर, दो जिनमंदिर सिद्ध।
पूर्ण अर्घ्य ले मैं जजूँ, पाऊँ सौख्य समृद्ध।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजंबूशाल्मलिवृक्षस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

तरु की शाखा मांहि, रत्नमयी जिनबिंब हैं।
तिनकी यह जयमाल, भक्ति भाव से मैं पढ़ूँ।।1।।

–नरेन्द्र छंद–

जंबूतरु का स्वर्णिम स्थल, पांच शतक योजन है।
इस थल का परकोटा कांचन-मयी मनो मोहन है।।
पीठ आठ योजन का ऊँचा, मध्य माहिं चांदी का।
इस पर जम्बूवृक्ष अकृत्रिम, पृथ्वीमय रत्नों का।।2।।

यह तरु तुंग आठ योजन है, वज्रमयी जड़ जानो।
मणिमय तना हरित मोटाई, एक कोश परमानो।।

तरु की चार दिशाओं में हैं, चार महाशाखायें।
छह योजन की लंबी इतने, अंतर से लहरायें।।3।।

मरकत कर्केतन मूँगा, कंचन के पत्ते उत्तम।
पांच वर्ण रत्नों के अंकुर, फल अरु पुष्प अनूपम।।
इसमें फल जामुन सदृश हैं, कोमल चिकने दिखते।
रत्नमयी हैं फिर भी अद्भुत पवन लगत ही हिलते।।4।।

उत्तर शाखा पर जिनमंदिर, सुरगृह त्रय शाखा पे।
सम्यक्त्वी आदर व अनादर, व्यंतर रहते उन पे।।
तरु को चारों तरफ घेर कर, बारह पद्म वेदियाँ।
उनके अंतराल में तरु की, परिकर वृक्ष पंक्तियां ।।5।।

एक लाख चालीस हजार इक सौ उन्नीस कहाएं।
इन जंबू परिवार वृक्ष पर, सुर परिवार रहायें।।
मेरु की ईशान दिशा में नीलाचल के दाएं।
माल्यवन्त के पश्चिम में, सीता के पूर्व कहाएं।।6।।

तरु स्थल के चारों तरफे, त्रय वन खंड कहाते।
फल फूलों युत सुरमहलों युत, जल वापी युत भाते।।
इस द्रुम के जिनगृह में इक सौ-आठ जिनेश्वर प्रतिमा।
इसी तरह शाल्मली वृक्ष की जानो सारी रचना ।।7।।

शाल्मलि तरु के अधिपति व्यंतर, वेणु वेणुधारी हैं।
ये सुर सम्यक्त्वी जिनमत के, प्रेमी गुणधारी हैं।।
जितने जंबू शाल्मलि तरु हैं, उतने जिनमंदिर हैं।
क्योंकि सभी पर सुर रहते हैं सबमें जिनमंदिर हैं।।8।।

दो चैत्यालय मुख्य अकृत्रिम, हैं स्वतन्त्र दो तरु के।
उनकी अरु सब जिनप्रतिमा की, करूँ वंदना रुचि से।।
सुर किन्नरियां नित गुण गातीं वीणा की लहरों से।
दर्शन करके नर्तन कीर्तन करतीं भक्ति स्वरों से ।।9।।

–घत्ता–

जय जय जिनप्रतिमा अद्भुत महिमा पढ़े सुने जो जयमाला।
जय 'ज्ञानमती' श्री सिद्धिवधू प्रिय सो नर पावे खुशहाला ।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिजंबूशाल्मलिवृक्षस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.6)

सुदर्शनमेरु संबंधी सोलहवक्षारगिरि जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–शम्भुछन्द–

मेरु सुदर्शन के पूरब दिश, गिरि वक्षार बखाने हैं।
सीता नदि के उत्तर-दक्षिण चार-चार ये माने हैं।।
मेरू के पश्चिम विदेह में, आठ अचल वक्षार कहे।
सीतोदा के दक्षिण-उत्तर, चार-चार हैं शोभ रहे।।1।।

–दोहा–

सोलह गिरि वक्षार के, सोलह जिनगृह सिद्ध।
यहाँ थापना विधि करूँ, पूज वरूँ सुख सिद्ध।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबन्धिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबन्धिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबन्धिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टक-त्रिभंगीछंद

(चाल-तीर्थंकर की धुनि गणधर....)

सीतानदि का जल, सुरभित उज्ज्वल, अमल भाव से मैं लाया।
भरि कंचन कलशा, जिनपद परसा, मन अति हरषागुण गाया।।
वक्षार गिरी पर, सोलह जिन घर, जिनवर प्रतिमा चरण जजों।
प्रभु करुणासागर, सुख रत्नाकर, शरणागत तुअ शरण भजों।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घनसार सुचंदन, षटपद गुंजन, दाह निकन्दन ले आया।
जिनवर पदवन्दन, समरस स्यंदन[1],भव आक्रन्दन छुटवाया।।
वक्षार गिरी पर, सोलह जिन घर, जिनवर प्रतिमा चरण जजों।
प्रभु करुणासागर, सुख रत्नाकर, शरणागत तुअ शरण भजों।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जल से प्रक्षालित तंदुल सुरभित, शशिकर सदृश भरि लीना।
जिनवर पद सन्निध, पुंज समर्पित, धवल सौख्य हित मैं कीना।।वक्षार.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पादिक सुमना, सुमनस प्रियना, सुरभी करना में लाया।
मधुकर गुंजारे, काम विडारे, जिनपद धारे हरषाया ।।वक्षार.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पायस घृत पूआ, फेनी खोवा, ताजे साजे थाल भरे।
जन घ्राण नयन मन, तर्पित व्यंजन, जिनवर सन्निध भेट करें।।वक्षार.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ले दीपक आला, गोघृत डाला, बत्ती ज्वाला ज्योति धरे।
जिनवर की आरति, नित अवतारत, आरत वारत ज्योति करे।।वक्षार.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले धूप सुगंधित, पाप विखंडित, धूपायन में खेय दिया।
दश दिश महकाते, धूम उड़ाते, कर्म जलाते देख लिया।।वक्षार.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

1. झरना।

दाडिम नारंगी, फल मोसम्बी, अनन्नास भी मैं लाया।
जन मन को प्रियकर, मधुर सरस फल, प्रभु ढिग धर कर सुख पाया।।
वक्षार गिरी पर, सोलह जिन घर, जिनवर प्रतिमा चरण जजों।
प्रभु करूणासागर, सुख रत्नाकर, शरणागत तुअ शरण भजों।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन तंदुल, पुष्प चरूवर, दीप धूप फल ले लीना।
प्रभु अर्घ्य चढ़ाकर, पुण्य बढ़ाकर, पाप नशाकर सुख लीना।।वक्षार.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सीता नदी सुनीर जिनपद पंकज धार दे।
वेग हरूँ भवपीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पद अरविंद पूजत ही सुख सम्पदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–दोहा–

प्रथम मेरु पूरब अपर, सोलहगिरि वक्षार।
पुष्पांजलि कर पूजते, नाशे विघ्न हजार।।1।।

इति षोडशवक्षारस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलि क्षिपेत्।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सवैया छन्द–

सीता नदि के उत्तर तट पर, भद्रसाल वेदी के पास।
'चित्रकूट' वक्षार स्वर्णमय, चार कूट से मंडित खास।।
नदी तरफ के सिद्धकूट पर, श्री जिनमंदिर बना विशाल।
जल फल आदिक अर्घ्य बनाकर, पूजन करूँ मिटे जग जाल।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के उत्तर तट पर क्रम से 'पद्मकूट' वक्षार।
स्वर्णवर्णमय चार कूट युत, देव देवियाँ करें विहार ।।
नदी तरफ के सिद्धकूट पर श्री, जिनमंदिर बना विशाल।
जल फल आदिक अर्घ्य बनाकर, पूजन करूँ मिटे जग जाल।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षार-पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिन कूट' पर जैन भवन में, विद्याधर गण करें विहार।
श्री जिनमूर्ती निरख-निरख कर, तृप्त हुए मन हरष अपार।।नदी.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे नलिनकूट-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'एकशैल' वक्षार मनोहर सुर वनितायें करें विनोद।
जिनगृह की मुनि करें वंदना, समरसमय मन भरें प्रमोद।।नदी.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे एकशैलकूट-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के दक्षिण तट पर, देवारण्य वेदिका पास।
अचल 'त्रिकूट' चार कूटों युत, जिनगृह युत वक्षार सनाथ।।नदी.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे त्रिकूट-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रम से फिर 'वैश्रवण' कूट है, देव देवियों से भरपूर।
वापी वन उद्यान मनोहर, मुनिगण करें पाप को दूर।।नदी.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वैश्रवणनाम-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अंजनात्मा' नाम धराता, गिरि वक्षार सदा शुभकार।
सुर विद्याधर गगन गमनचर, ऋषिगण को भी है सुखकार।।नदी.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे अंजनात्मावक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ 'अंजन' वक्षार आठवां, योगीजन करते नित ध्यान।
निज आतम परमानंदामृत, अनुभव कर हो रहे महान।।
नदी तरफ के सिद्धकूट पर, श्री जिनमंदिर बना विशाल।
जल फल आदिक अर्घ्य बनाकर, पूजन करूं मिटे जग जाल।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे अंजनवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–शम्भु छन्द–

पश्चिम विदेह सीतोदा के, दक्षिण में भद्रसाल वेदी।
उस सन्निध 'श्रद्धावान' कहा, वक्षार कनकमय पर्वत ही।।
नदि के सन्निध है सिद्धकूट, उसमें शाश्वत चैत्यालय है।
जल गंधादिक से पूजूँ मैं, मेरे हित सौख्य सुधालय है।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटेश्रद्धावाननाम वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा के दक्षिण तट पर, गिरि 'विजटावान्' कहाता है।
वक्षार सदा चउ कूटों युत, सुर नर सबके मन भाता है।।नदि के.।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटेविजटावान वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आशीविष' है वक्षार कहा, इनपे रत्नों की वेदी है।
परकोटे उपवन वापी से, जिनगृह से कर्मन भेदी है।।नदि के.11।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटेआशीविष वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षार 'सुखावह' अति सुन्दर, सुरललना की क्रीड़ा भूमी।
यतिगण के विहरणसे पावन, सबको आनंदकारी भूमी।।नदि के.।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सुखा-वहवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा के उत्तर तट पर शुभ देवारण्य बनी वेदी।
तसु सन्निध 'चन्द्रमाल' पर्वत, जन मन का मोह तिमिर भेदी।।

नदि के सन्निध है सिद्धकूट, उसमें शाश्वत चैत्यालय है।
जल गंधादिक से पूजूँ मैं, मेरे हित सौख्य सुधालय है।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीउत्तरतटेचंद्रमाल-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षार मनोहर 'सूर्यमाल', रत्नों के भवन सुहाते हैं।
सुरललनाओं की वीणा के तारों से जिन गुण गाते हैं।।नदि के.।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीउत्तरतटे सूर्यमाल-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'नागमाल' वक्षार अचल, अनुपम कांती छिटकाता है।
जिनवर के दर्शन करते ही, सबके अघपुंज नशाता है।।नदि के.।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीउत्तरतटेनागमाल-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षार सोलवां 'देवमाल', रत्नों की कांति लजाता है।
जिनदेवदेव के गृह में नित, देवों का नृत्य कराता है।।नदि के.16।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीउत्तरतटे देवमाल-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-मद अवलिप्त कपोलछन्द

सोलह गिरि वक्षार उन्हों पर सोलह मन्दिर।
वर सामग्री लाय सतत ही जजें पुरंदर।।
मैं इह पूजूँ भक्ति भाव से अर्घ्य चढ़ाऊँ।
आधि व्याधि भय शोक नाश निज सम्पति पाऊँ।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–गीताछन्द–

वक्षार कांचन वर्ण शुभ प्रत्येक पर चउ कूट हैं।
प्रत्येक में जिनभवन अनुपम, शेष त्रय पे सुर रहें।।
ये अचल विस्तृत पांच सौ योजन उदधि तक लम्ब हैं।
कुल अद्रि तक चउ शतक योजन नदि निकट शतपंच हैं।।1।।

–स्रग्विणी छन्द–

जै महामेरु के सोल वक्षार ते।
जै अनादि अनन्ते सदा राजते।।
जै उन्हों पे विराजे जिनेशालया।
जै वहां जैनमूर्ती सुसौख्यालया।।2।।
एक सौ आठ मूर्ती सुप्रत्येक में।
सर्वदा पूजते देव देवी उन्हें।।
कोई तीर्थेश की कीर्ति गाते वहाँ।
कोई धर्मी गुणों को गिनाते वहाँ।।3।।
रत्नमूर्ती मनो मोहनी सोहनी।
सर्व कर्मारिसेना हनी सो घनी।।
देव पूजें बड़ी भक्ति से आय के।
द्रव्य अर्पें सदा स्वर्ग से लाय के।।4।।
जो तुम्हें नाथ पूजें स्व पूजा लहें।
जो तुम्हें माथ नावें नमें सब उन्हें।।
जो तुम्हारे गुणों को सदा गावते।
कीर्ति उनकी सदा देवगण गावते।।5।।
जो तुम्हारे निकट नृत्यते भाव से।
इन्द्र ताकी सभा में नचें चाव से।।
जो तुम्हें चंवर ढोरे बड़े चाव से।
इन्द्र ढोरे सदा चामरे तास के।।6।।

जो धरे शीश पे छत्र थारे प्रभो।
इन्द्र धारें सदा छत्र तापे विभो।।
जो बजावें मृदंगी धुनी झिल्लरी।
इन्द्र बाजे बजावें सदा ता घरी।।7।।
मैं बड़े पुण्य से नाथ पायो तुम्हें।
धन्य है धन्य है या घड़ी धन्य मैं।।
पूजता हूं बड़ी भक्ति श्रद्धा धरे।
केवलज्ञान की नाथ आशा धरे।।8।।

–दोहा–

कनकवर्ण वक्षार की, पूजा रची रसाल।
शाश्वत श्री जिनबिंब को, नितप्रति नाऊँ भाल।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थ सर्वजिनबिम्बेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.7)

सुदर्शनमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

मेरु सुदर्शन पूर्व में, पूर्व विदेह बखान।
उसके ही पश्चिम तरफ, अपर विदेह महान।।1।।
दो विदेह में देश सब, सोलह-सोलह जान।
तामध विजयारध लसें, शुभ बत्तीस प्रमाण।।2।।
भरतैरावत क्षेत्र के, दो भूभृत् विजयार्ध।
इन सबमें चौंतीस हैं, श्री जिनभवन महार्घ।।3।।

–सोरठा–

जिनगृह के जिनराज, सबका आह्वानन करूँ।
सफल होय मम काज, आधि व्याधि विनसे सभी ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहभरतैरावतसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहभरतैरावतसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहभरतैरावतसंबंधिचतुस्त्रिंशत्-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं–चाल छन्द

क्षीरोदधि उज्ज्वल नीर, सुवरण कलश भरा।
जिनवर पद पद्म चढ़ाय, मेटो जन्म जरा।।

पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन केसर घिस लाय, दाह हरे सारी।
पूजों श्री जिनवर पाय, आनंद हो भारी ।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि किरणों सम अवदात, अक्षत लाता हूँ।
प्रभु सन्निध पुंज चढ़ाय, जिन गुण गाता हूँ।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

वर चंपक कंज कदंब, सुमन सुमन प्यारे।
फैले दशदिश सौगन्ध, पूजूँ पद थारे।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पेड़ा बरफी पकवान, हलुआ थाल भरे।
निज क्षुधा नाशने हेतु, चरु से पूज करें।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमय दीपक उद्योत, जगमग ज्योति जले।
आरति करते निज मोह-मय सब ध्वांत टले।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु धूप सुगंध, अग्नी संग जरे।
कर कर्म पुंज को भस्म, दशदिश धूम भरे।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम, चिरौंजी दाख, नींबू आम लिये।
जिनपद के निकट चढ़ाय, मन आनंद किये ।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध प्रभृति सब लेय, अर्घ बनाया है।
जिन चरणों देत चढ़ाय, पुण्य बढ़ाया है।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

गंगानदी को नीर, कंचन झारी में भरा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्व सौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–दोहा–

प्रथम मेरु पूरब अपर, दक्षिण उत्तर जान।
चौंतिस रूपाचल उपरि, जिनगृह पूजूँ आन।।1।।

इति प्रथममेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छन्द–

सीतानदि के उत्तर तट में, भद्रसालवन पासे।
'कच्छा देश' विदेह बीच में, विजयारध गिर भासे।।
नवकूटों में सिद्ध कूट पर, जिनवर भवन महाना।
ऋषिगण वंदन करने जाते, मैं पूजूँ इह थाना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छादेशमध्यस्थित-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु के पश्चिम उस तट पर, देश 'सुकच्छा' सोहै।
तामध रजताचल अतिसुन्दर, सुर किन्नर मन मोहै।।नव.2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महाकच्छा' कहलाता, रूपाचल ता मध्ये।
विद्याधर ललना किन्नरियां, जिनगुण गातीं तथ्ये।।नव.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावती' सुमध्ये रूपाचल सुखकारी।
सुर ललना के वीणा स्वर से, जन जन का मनहारी।।नव.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशमध्य-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश कहा 'आवर्ता' सुन्दर रूपाचल तसु बीचे।
रक्ता-रक्तोदा नदियों से, छह खंड होते नीके।।
नवकूटों में सिद्धकूट पर जिनवर भवन महाना।
ऋषिगण वंदन करने जाते, मैं पूजूँ भवहाना।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे आवर्तादेशमध्यविजयार्ध पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश कहा 'लांगल आवर्ता' ता मध रूपाचल है।
तीनों कटनी पे वनवेदी वापी जल निर्मल है।।नव.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर देश 'पुष्कला' के मधि रूपाचल मन भावे।
उभय तरफ पचपन-पचपन, खग नगरी मन ललचावे।।नव.7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशमध्य-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' सुहाता, उसमें रजत गिरी है।
विद्याधर की कर्म भूमियाँ, मुक्ती मार्ग पुरी हैं।।नव.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेशमध्य-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–नरेन्द्र छन्द–

पूर्व विदेह विषैं सीता के, दक्षिण तट में माना।
देवारण्य वेदिका सन्निध, 'वत्सादेश' बखाना।।
मध्य रजतगिरि सिद्धकूट पर, जिनमंदिर अभिरामा।
जिनवर चरण कमल हम पूजें, मिले सर्वसुख धामा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के दक्षिण तट पर, देश 'सुवत्सा' सोहे।
तीर्थंकर चक्री प्रतिचक्री, हलधर वहँ नित होवें।।

मध्य रजतगिरि सिद्धकूट पर, जिनमंदिर अभिरामा।
जिनवर चरण कमल हम पूजें, मिले सर्वसुख धामा।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रम से देश 'महावत्सा' में रजताचल है जानो।
गंगा सिन्धू नदियों से भी, छह खंड होते मानो ।।मध्य.11।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे महावत्सादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावती' वहां नित, कर्मभूमि मन भावे।
भव्य जीवगण कर्म अरी हन, मुक्तिरमा सुख पावें।।12।।मध्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावतीदेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्यादेशे' आर्यखंड में, असि मषि आदि क्रिया हैं।
क्षत्रिय वैश्य शूद्र त्रयवर्णी, होते सदा जहाँ हैं।।13।।मध्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' शुभविदेह में, देह नाश कर प्राणी।
हो जाते हैं वे विदेह इस, हेतू सार्थक नामी।।14।।मध्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रमणीया' शुभदेश वहाँ पर तीर्थंकर नित होते।
समवशरण में भव्य जीवगण जिनधुनि सुन मल धोते।।15।।मध्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रमणीयादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावती' जहां पर, मुनिगण नित्य विचरते।
चिच्चैतन्य चमत्कारी निज, शुद्धातम में रमते।।

मध्य रजतगिरि सिद्धकूट पर, जिनमंदिर अभिरामा।
जिनवर चरण कमल हम पूजें, मिले सर्वसुख धामा।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे मंगलावतीदेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–अडिल्ल छंद–

अपर विदेह सीतोदहिं इधर में।
भद्रसाल वन पास, जु 'पद्मा' नगरि में।।
मध्य रजतगिरि तापे श्री जिनगेह हैं।
जिनगुण संपत्ति हेतु, जजो धर नेह है।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे पद्मा-देशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर विदेह सुमाहिं, नदी के अवर में।
'देश सुपद्मा' मध्य आरज खंड में।।18।।मध्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुपद्मा-देशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महापद्मा' छहखंडों युत सही।
असि मषि आदिक् छह किरिया वहां नित कहीं।।19।।मध्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे महापद्मादेश स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावती' मनोहर जानिये।
जिन चैत्यालय ठौर ठौर पर मानिये।।20।।मध्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे पद्मकावतीदेश स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' देशविषैं जिनधर्महि एक है।
अन्य धर्म का नाम जहाँ नहिं लेश है।।21।।मध्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे शंखादेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

'नलिनी ' देश विदेह, कर्मभूमी सदा।
मुनिवर आतम ध्याय कर्म से हों जुदा।।
मध्य रजतगिरि तापे श्री जिनगेह हैं।
जिनगुण संपत्ति हेतु, जजो धर नेह है।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे नलिनीदेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुद' देश के माहिं जिनेश्वर नित रहें।
समवसरण में भविक, धर्म अमृत लहें।।23।।मध्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे कुमुददेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरित' देश में सदा मुमुक्षूजन बसें।
मोक्ष प्राप्ति की आश धरे तन को कसें।।24।।मध्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सरितदेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–लोल तरोल छंद–

सीतोदा के उत्तर दिक् में, देवारण्य निकट 'वप्रा' में।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रादेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' आरज खंड में, ईति भीति दुर्भिक्ष न उनमें।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुवप्रादेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावप्रा' सुखदाता, स्वर्ग मोक्ष का सही विधाता।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे महावप्रादेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वप्रकावती' सुहाता, सुर नर किन्नर के मन भाता।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रकावतीदेश स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधादेश' विषैं जिनगेहा, उन्हें जजें सुर नर धर नेहा।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगन्धा' मुक्ति प्रदानी, मुनि तप करें वरें शिवरानी।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुगन्धादेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' में जो जन्मे, पूर्वकोटि आयूवर उनमें।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।31।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधिलादेशस्थित विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' में होते जो, तनु ऊँचे वर धनुष पांच सौ।
बीचों बीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधमालिनीदेश स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–चौपाई छंद–

'भरत क्षेत्र' में हैं छह खंड, विजयाद्रि इस आरज खंड।
सिद्धकूट पर श्री जिनधाम, जिनपद पूजूँ करूँ प्रणाम।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिभरतक्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'ऐरावत' मधि रजतगिरीश, तापर सिद्धकूट जिन ईश।
जल गंधादिक अर्घ्य मिलाय, पूजन करूँ मुदित गुण गाय।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्यं-शम्भु छंद–

कनकाचल के पूर्वापर में, बत्तीस रजतगिरि माने हैं।
इक भरत एक ऐरावत के, दो रूप्याचल परधाने हैं।।
इन चौंतिस के सब सिद्धकूट, मणिमय जिनबिंब विराजे हैं।
जल गंधादिक ले पूजत ही, मेरे सब पातक भाजे हैं।।35।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–शम्भु छन्द–

जय बत्तिस देश विदेहों के, सब रजतमयी विजयार्ध कहें।
जय भरतैरावत के दो हैं, सब तीन कटनियों सहित रहें।।
इक सौ दश नगरी खेचर की, शाश्वत उन सब पर बनी हुईं।
जय नवकूटों युत उन सबमें, इक सिद्धकूट जिनभवन मयी।।1।।

–स्रग्विणी छन्द–

(चाल-नाथ तेरे कभी.....)

देव त्रैलोक्य के पूर्ण चंदा तुम्हें।
मैं नमूँ मैं नमूँ हे जिनन्दा तुम्हें।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।2।।

मैं निगोदी रहा काल आनन्त्य ना।
एक इन्द्रीय भू अग्नि वायू बना।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।3।।

कं वनस्पत्य हूआ सहा दुःख हा।
सूक्ष्म तनधार जन्मा मरा नाथ! हा।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।4।।

केंचुआ शंख चींटी ततैया हुआ।
जन्म धर धर मुआ जन्म धर धर मुआ।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।5।।

मैं पशू योनि में जो महा दुख सहा।
नाथ! कैसे कहूँ आप जानो हहा।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।6।।

देवयोनी मनुजयोनि में भी दुखी।
नारकी जो हुआ तो दुखी ही दुखी।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।7।।

मैं कहूं क्या प्रभो आप हो केवली।
मोह शत्रू मुझे ये भ्रमावे बली।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।8।।

मोह को नाश मैं आपके पास में ।
नाथ आना चहूँ है यही आस में।।

नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।9।।

–घत्ता छंद–

रूपाचल जिनभवन तनी जिनराज कहे हैं।
देव इन्द्र धरणेन्द्र सभी से वन्द्य कहे हैं।।
मन वच काय लगाय सदा उनके गुण गाऊँ।
पूजन अर्चन नमन, करूँ भव से छुट जाऊँ।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालय-स्थसर्वजिनबिंबेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.8)

सुदर्शनमेरु संबंधी षट् कुलाचल जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–शंभु छंद–

छह कुल पर्वत हिमवन आदिक, उनमें छह जिनवर मंदिर हैं।
यमराज व्यथा निरवारणहित, नित पूजा करत पुरंदर हैं।।
गणधर मुनिगण नितप्रति ध्याते, परमानंदामृत पीते हैं।
वे मोहराज यमराज महामृत्यू राजा भी जीते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितजिनालयस्थसर्वजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितजिनालयस्थसर्वजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितजिनालयस्थसर्वजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अडिल्ल छंद–

हिमवन द्रह को नीर लाय प्रासुक किया।
कर्म कालिमा क्षालन हित धारा दिया।।
हिमवन् आदी छह कुल पर्वत मणिमया।
तापर जिनगृह प्रतिमा पूजों सुख भया।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन में कर्पूर मिलाय सुवासिया।
जिनपद पूजों भव्य सकल अघ नाशिया।।हिमवन्.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल अक्षत धोय लिये मन भावने।
पुंज चढ़ाऊँ जिन सन्मुख सुख पावने।।
हिमवन् आदी छह कुल पर्वत मणिमया।
तापर जिनगृह प्रतिमा पूजों सुख भया।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केतकी चंप चमेली लाइया।
मन प्रफुल्ल कर फुल्ल चढ़ा हित चाहिया।।हिमवन्.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बालूसाही रसगुल्ला मोदक लिया।
क्षुधापिशाची नाशो, प्रभु अर्पण किया।।हिमवन्. ।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक में कर्पूर जला आरति करूँ।
मोह ध्वांत निरवार सकल आरत हरूँ।।हिमवन्.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप धूपदह में खेऊँ सुरभित भली।
दश दिश महक उठी, तुरतहि आये अली।।हिमवन्.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्र सेवफल आडू, लीची संतरा।
सरस मधुर फल लाय, पूजहूँ जिनवरा।।हिमवन् ।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु विध अर्घ्य बनाय, थाल भर के लिया।
जिन गुणगाय बजाय, अर्घ्य अर्पण किया।।
हिमवन् आदी छह कुल पर्वत मणिमया।
तापर जिनगृह प्रतिमा पूजों सुख भया।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

पद्म सरोवर नीर, सुवरण झारी में भरूँ।
जिनपद धारा देय, भववारिधि से उत्तरूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुवरण पुष्प मंगाय, प्रभु चरणन अर्पण करूँ।
वर्ण गंधरस फास, विरहितजिन पद को वरूँ।।11।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–सोरठा–

जम्बूद्वीप सुमेरू, दक्षिण उत्तर कुलगिरी।
इनके छह जिनगेह, नितप्रति वंदूँ भाव से।।

इति सुमेरूपर्वतस्य दक्षिणोत्तरकुलगिरिस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

–सुगीतिका छंद–

'हिमवान' पर्वत कनकद्युतिमय द्वय तरफ बहुवर्ण का।
वर कूट ग्यारह में कहा, इक सिद्धकूट जिनिंद का।।
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूसंबंधिहिमवन्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्वत 'महाहिमवान्' चांदी वर्ण का सुन्दर दिखे।
द्वय पार्श्व नाना मणि खचित पे एक जिनमंदिर दिखे।।

जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।2।।

ॐ ह्रींश्रीसुदर्शनमेरूसंबंधिमहाहिमवन्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पवर्त 'निषध' है तप्त स्वर्णिम वर्ण बहुद्वय पार्श्व है।
ह्रद वेदिका वन कूट नव में एक जिन आवास है।।
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूसंबंधिनिषधपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'नीलगिरि' वैडूर्य वर्णी द्वय तरफ पचरंगिमा।
नव कूट में इक जिनभवन, सुर इंद्र पूजे चन्द्रमा।।
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूसंबंधिनीलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रुक्मी' अचल रूपामयी, वर कूट आठों से भरा।
इक कूट में जिनराज गृह, बस दर्श से पातक टरा।।
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूसंबंधिरूक्मिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शिखरी' अचल सोने सदृश शुभ कूट ग्यारह नित्य हैं।
वर सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूजतें सब भव्य हैं।।
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरूसंबंधिशिखरिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

कुल अद्रि छह पे छह सरोवर, कमल भूमय खिल रहे।
क्रम से श्री ह्री धृती कीर्ती, बुद्धि लक्ष्मी महल हैं।।
छह द्रह[1] से गंगा आदि चौदह, आपगा[2] निकली भई।
इन अद्रि[3] पे जिनभवन पूजों, दुरित कीचड़ बह गई।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परि पुष्पांजलिः।

जाप्य–ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।

जयमाला

–दोहा–

षट् कुल पर्वत के कहे, षट् मंदिर सुविशाल।
सुर नर खगपति नित जजें, मैं गाऊँ गुणमाल।।1।।

–पद्धरी–

जय जय कुल पर्वत के जिनेश, तुम हरो सभी मेरे कलेश।
जय मेरु के दक्षिण प्रधान, हिमवन पर्वत शोभे महान।।2।।
जय ताके पूरब दिशा माहिं, जय सिद्धकूट जिन सद्म पाहिं।
नगबीच पद्म सरवर कहात, ता मध्य कमल मणिमय रहात।।3।।
तामें श्रीदेवी को निवास, उन कमलों पर परिवार वास।
इक लाख और चालिस हजार, इक सौ पंद्रह हैं कमल सार।।4।।
सब पृथ्वीकायिक सुरभिमान, उन सबमें जिनमंदिर महान।
द्रह से त्रय नदियों का निकास, तल में गंगादिक कुंड खास।।5।।
गंगा देवी के महल शीश, राजें जिनप्रतिमा महल शीश।
अभिषेक करत इव नदीधार, ऊपर से पड़ती गंगधार।।6।।

---

1. सरोवर 2. नदियाँ 3. पर्वत।

इस विधि ही सब पर्वत मंझार, बहुविध अनुपम रचना अपार।
सबमें जिनबिंब विराजमान, नासाग्र दृष्टि मुख सौम्य जान।।7।।

जय सिंहासन छवि कांतिमान, सुर ढोरें चौंसठ चमर आन।
जय भामंडल द्युतिरवि लजाहिं, जय छत्र तीन शशि द्युति लजाहिं।।8।।

जय जय तुम मंगलकरण देव, जय जय सुख संगम करण देव।
मैं वंदूँ तुमको बार बार, प्रभु जन्म मरण मेरो निवार।।9।।

–घत्ता–

जय मुक्ति निशाना, जिनवर धामा, आनन्द मन जयमाल भणे।
सो मंगल पावे नित हरषावे, फेरि न आवे भव वन में ।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व जिनबिम्बेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परि पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

इति श्रीसुदर्शनमेरु संबंधिअष्टसप्ततिजिनालय पूजा समाप्ताः।

(पूजा नं.9)

विजयमेरु जिनालय पूजा

अथ स्थापना —अडिल्ल छंद

द्वीप धातकी खंड, दूसरो जानिये।
विजयमेरु तामें, पूरब दिश मानिये।।
सहस चुरासी योजन ऊँचा वरणिये।
सोलह जिनवर भवन, जजूँ हर्षित हिये।।1।।

–दोहा–

अकृत्रिम जिनबिंब का, नित्य करूं आह्वान।
यहाँ पधारो नाथ अब, करो सकल कल्याण।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–(चाल–पंचमेरु पूजा...)

हिमगिरि को शीतल जल लाय, श्री जिनवर पदधार कराय।
महा सुखकार, जय जिनराज महा सुखकार।।
विजयमेरु सोलह जिन गेह, पूजूँ मन वच तन धर नेह।
महा सुखकार, जय जय नाथ परम सुखकार।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंकुम हिम घनसार घिसाय, श्री जिनवर पदपद्म चढ़ाय।
महासुखकार, जय जिनराज महासुखकार।।

विजयमेरु सोलह जिन गेह, पूजूँ मन वच तन धर नेह।
महा सुखकार, जय जय नाथ परम सुखकार।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चंद्र किरण सम अक्षत लाय, अव्यय जिनपद पूज रचाय।
महासुखकार, जय जिनराज महासुखकार।।
विजयमेरु सोलह जिन गेह, पूजूँ मन वच तन धर नेह।
महा सुखकार, जय जय नाथ परम सुखकार।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

वकुल मालती पुष्प मंगाय, विपद हरण जिन चरण चढ़ाय।
महासुखकार, जय जिनराज महासुखकार।।
विजयमेरु सोलह जिन गेह, पूजूँ मन वच तन धर नेह।
महा सुखकार, जय जय नाथ परम सुखकार।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट्रस व्यंजन मधुर बनाय, प्रमुदित मना जजूँ जिनराय।
महासुखकार, जय जिनराज महासुखकार।।
विजयमेरु सोलह जिन गेह, पूजूँ मन वच तन धर नेह।
महा सुखकार, जय जय नाथ परम सुखकार।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत दीपक कर्पूर मिलाय, जजूँ सौख्य कर जिनवर पाय।
महासुखकार, जय जिनराज महासुखकार ।।
विजयमेरु सोलह जिन गेह, पूजूँ मन वच तन धर नेह।
महा सुखकार, जय जय नाथ परम सुखकार।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगरयुत धूप बनाय, खेवूँ अगनि माहिं महकाय।
महासुखकार, जय जिनराज महासुखकार।।
विजयमेरु सोलह जिन गेह, पूजूँ मन वच तन धर नेह।
महा सुखकार, जय जय नाथ परम सुखकार।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्र जंभीरी नींबू लाय, शिवफल हेतु जजों जिन पाय।
महासुखकार, जय जिनराज महासुखकार ।।
विजयमेरु सोलह जिन गेह, पूजूँ मन वच तन धर नेह।
महा सुखकार, जय जय नाथ परम सुखकार।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादी वसु द्रव्य सजाय, अर्घ्य चढ़ाऊँ तुम सुखदाय।
महासुखकार, जय जिनराज महासुखकार।।
विजयमेरु सोलह जिन गेह, पूजूँ मन वच तन धर नेह।
महा सुखकार, जय जय नाथ परम सुखकार।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगन्ध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुंजग शांती हेत ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिन चरणसरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

विजयमेरु भद्रसाल जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–नरेन्द्र छंद–

धातकि तरु से लक्षित धातकि द्वीप सुसार्थक नामा।
चार लाख योजन विस्तृत दो भागों में द्वय माना।।
पूर्व धातकी बीच नाभिवत् विजयमेरु तुम जानो।
उसके भद्रसाल में जिनगृह आह्वानन विधि मानो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं–सखी छंद

क्षीरांबुधि सम जल लायो, जिन चरणन धार करायो।
श्री भद्रसाल जिनगेहा, मैं पूजूँ भक्ति सनेहा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर कर्पूर घिसायी, जिनपद अर्चन सुखपायी।।
श्री भद्रसाल जिनगेहा, मैं पूजूँ भक्ति सनेहा।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्तासम अक्षत लाये, प्रभु सन्मुख पुंज चढ़ाये।।
श्री भद्रसाल जिनगेहा, मैं पूजूँ भक्ति सनेहा।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार वकुल वासंती, सुम से अर्चत भव हंती।
श्री भद्रसाल जिनगेहा, मैं पूजूँ भक्ति सनेहा।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मिष्ठान्न सरस भर लाये, चरु से पूजत क्षुध जाये।।
श्री भद्रसाल जिनगेहा, मैं पूजूँ भक्ति सनेहा।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक में ज्योति जले है, प्रभु पूजत मोह टले है।।
श्री भद्रसाल जिनगेहा, मैं पूजूँ भक्ति सनेहा।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूप अग्नि में खेके, अघ दहन करूँ सब नीके।।
श्री भद्रसाल जिनगेहा, मैं पूजूँ भक्ति सनेहा।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री फल अंगूर अनारा, अर्पूं जिन ढिंग फल सारा।।
श्री भद्रसाल जिनगेहा, मैं पूजूँ भक्ति सनेहा।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल आदिक अर्घ बनाऊँ , प्रभु सन्मुख आन चढ़ाऊँ।।
श्री भद्रसाल जिनगेहा, मैं पूजूँ भक्ति सनेहा।।श्री।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगन्ध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिंहु जग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिन चरणसरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

चिन्मय जिनवर बिंब को, नित प्रति करूँ प्रणाम।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, पृथक् पृथक् जिनधाम।।

इति विजयमेरुस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलि क्षिपेत्।

–सोरठा–

विजय मेरु गिरिराज, भद्रसाल पूरब दिशी।
श्री जिन भवन विशाल, अर्घ्य लेय पूजूँ सदा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु सुखकार, भद्रसाल दक्षिण दिशी।
पूजूँ जिनवर बिंब, जिन चैत्यालय के सभी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु जिनगेह, भद्रसाल पश्चिम दिशी।
सुर खेचर गण जाय, तहं पूजें यहाँ मैं जजूँ ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालय-स्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु सुखधाम, भद्रसाल उत्तर दिशा।
जिनमंदिर गुणधाम, मुनिगण वंदित मैं जजूँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–वीरछन्द–

मेरु विजय वन भद्रसाल में, चारों दिश में चार कहे।
त्रिभुवनतिलक जिनेश्वर के गृह, अकृत्रिम अभिराम रहें।।
जल गंधाक्षत पुष्प चरूवर, दीप धूप फल अर्घ्य लिया।
निज शुद्धातम लब्धी हेतू, जिनपद पूरण अर्घ्य दिया।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

विजयमेरु नंदनवन जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

पूर्वधातकी खंड में, विजयमेरु अभिराम।
ताके नंदन वन विषैं, जिनपद करूं प्रणाम।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टक-चौबोल छन्द–(चाल-मेरी भावना...)

कमल रेणु से सुरभित निर्मल कनक पात्र जल पूर्ण भरें।
उभय लोक के ताप हरन को, त्रिभुवन गुरुपद धार करें।।
विजयमेरु के नंदन वन में, शाश्वत जिनवर भवन कहे।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर वंदित, उन पूजत सब करम दहें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचनरस सम पीत सुगंधित, केशर तन की ताप हरे।
यम संताप हरन हेतू प्रभु, तुम पद चर्चूं भक्ति भरे।।
विजयमेरु के नंदन वन में, शाश्वत जिनवर भवन कहे।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर वंदित, उन पूजत सब करम दहें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

देव जीर शाली भर थाली, उदधि फेन सम पुंज करें।
कर्म पुंज के खंड खंड कर, निज अखंड पद शीघ्र वरें।।विजय.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मधुकर चुंबित कुंद कमल ले, कामजयी जिनचरण जजें।
तुम निष्काम कामनापूरक, जजत कामभट तुरत भजे।।विजय.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत बाटी सोहाल समोसे, कुंडलनी[1] ले थाल भरे।
क्षुधानागिनी विष अपहरने, जिन सन्मुख चरु भेंट करें।।विजय.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनकदीप कर्पूर जलाकर, जिनमंदिर उद्योत करें।
मोह निशाचर दूर भगा कर, निज आतम उद्योत करें।।विजय.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप सुगंधित धूपायन में, खेते दशदिश धूम उड़े।
जिनपद सन्मुख दुरित भस्म हो, आतम रस पीयूष झड़े।।विजय.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जलेबी।

श्रीफल पूग[1] कपित्थ आमला, सेव आम्र अंगूर भले।
सरस मधुर निज आतम रसमय, सत्फल पूजन करत फले।।
विजयमेरु के नंदन वन में, शाश्वत जिनवर भवन कहे।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर वंदित, उन पूजत सब करम दहें।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वारि गंध अक्षत कुसुमादिक, सिद्धारथ रत्नादि मिले।
अर्घ्य चढ़ाकर तुम गुण गाऊँ, सम्यग्ज्ञान प्रसून खिले।।
विजयमेरु के नंदन वन में, शाश्वत जिनवर भवन कहे।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर वंदित, उन पूजत सब करम दहें।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुँजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिन चरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

नित्य निरंजन सिद्ध की, जिनप्रतिमा मनहार।
उनके पूजन हेतु मैं, पुष्प चढ़ाऊँ सार।।

इति विजयमेरुस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

चाल छंद (नंदीश्वर पूजा)

श्री विजय मेरुवर शैल, जयते अघ नाशें।
नंदनवन पूरब जैन, मंदिर अति भासे।।

1. सुपारी।

यतिगण जिन ध्यान लगाय आतम शुद्ध करें।
मैं जजूँ सर्व जिनबिंब, कर्म कलंक हरें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस मेरू दक्षिण मांहिं, नंदन वन प्यारा।
जिनभवन अनूपम ताहिं, सब जग में न्यारा।।
यतिगण जिन ध्यान लगाय, आतम शुद्ध करें।
मैं जजूँ सर्व जिनबिंब, कर्म कलंक हरें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदनवन पश्चिम मांहिं, जिनमंदिर भावे।
इस ही मेरू पर इन्द्र, परिकर सह आवें।।
यतिगण जिन ध्यान लगाय आतम शुद्ध करें।
मैं जजूँ सर्व जिनबिंब, कर्म कलंक हरें।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश नंदन रम्य, जिनवर आलय है।
इस विजय मेरु के मध्य, धर्म सुधालय है।।
यतिगण जिन ध्यान लगाय आतम शुद्ध करें।
मैं जजूँ सर्व जिनबिंब, कर्म कलंक हरें।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

नंदन वन के चहुं ओर, जिनगृह रत्नों के।
शिव लक्ष्मी के दातार, पूजूँ रुचि धर के।।

यतिगण जिन ध्यान लगाय आतम शुद्ध करें।
मैं जजूँ सर्व जिनबिंब, कर्म कलंक हरें।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

विजयमेरु सौमनस वन जिनालय पूजा

–अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद–

नंदनवन से साढ़े पचपन, सहस सुयोजन जाके।
वन सौमनस हरे सुमनस मन, दिश दिश जिनगृह पाके।।
उनमें मृत्युंजयि की मणिमय, जिनप्रतिमा गुण गाऊँ।
गणपतिवृंद नमें नित उनको, इत थापूँ हरषाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथाष्टकं-नरेन्द्र छन्द–

नलिन पराग मिलित जल सुरभित, जिनपद कमल चढ़ाऊँ।
भव भव तृषा बुझावन कारण, तुम पद प्रीति लगाऊँ।।
स्वर्णाचल सौमनस वनी के, जिन चैत्यालय भाते।
भव्यकमल दिनकर जिनवर को, पूजत ही अघ जाते।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज चंदन दाह निकंदन, जिनवर चरण चढ़ाऊँ।
हृदय ताप विनिवारण कारण, तुम पद भक्ति बढ़ाऊँ।।

स्वर्णाचल सौमनस वनी के, जिन चैत्यालय भाते।
भव्यकमल दिनकर जिनवर को, पूजत ही अघ जाते।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हार तुषार बर्फ सम तंदुल, श्यामजीर सित लाये।
आतम अनुभव अमृत हेतू, तुम पद पुंज रचाये।।स्वर्णा.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सेवंती वासंती चंपक, माला गूँथ बनाई।
मारविजयि जिनपद पंकज में, निजसुख हेतु चढ़ाई।।स्वर्णा.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

दधि शर्कर केशर एला, मिश्रित श्रीखंड बनाया।
भव भव क्षुधा रोग वारण को, तुम पद नाथ चढ़ाया।।स्वर्णा.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृतदीपक की वर्धमान लौ, जगमग जगमग भासे।
तुम चरणों की पूजा करते, भेद विज्ञान प्रकाशे।।स्वर्णा.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

एला चंदन कर्पूरादिक, मिश्रित धूप सुगंधी।
जिन सन्मुख अग्नी में खेऊँ, धूम उड़े दिश अंधी।।स्वर्णा.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मौसंबी खर्बूजा ककड़ी, खर्जूरादि मंगाये।
शिवरमणी परमानंद हेतू, भर भर थाल चढ़ाये।स्वर्णा.।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सलिल गंध तंदुल माला चरु, दीप धूप फल लाके।
अर्घ्य चढ़ाऊँ बलि बलि जाऊँ जिन सम्यक् निधि पाके।।
स्वर्णाचल सौमनस वनी के, जिन चैत्यालय भाते।
भव्यकमल दिनकर जिनवर को, पूजत ही अघ जाते।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुंजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्री जिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–दोहा–

धर्मतीर्थकरतार हैं, श्री जिनदेव महान।
तिनकी प्रतिमा पूजने, कुसुम चढ़ाऊँ आन।।12।।

इति विजयमेरुस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–कुसुमलता छन्द–

विजयमेरु नंदनवन ऊपर, वन सौमनस कहा सुखकार।
अकृत्रिम जिनभवन पूर्वदिश, सुर किन्नर मन हरत अपार।।
मैं पूजूँ जिनबिंब मनोहर, मन वच तन कर अर्घ्य चढ़ाय।
रोग शोक भय आदि उपाधी, सब भव व्याधी शीघ्र पलाय।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु सौमनस वनी के, दक्षिण दिश जिनभवन विशाल
गर्भालय में मणिमय प्रतिमा, भविजन पूजन करत त्रिकाल।।
मैं पूजूँ जिनबिंब मनोहर, मन वच तन कर अर्घ्य चढ़ाय।
रोग शोक भय आदि उपाधी, सब भव व्याधी शीघ्र पलाय।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश सौमनस वनी में, जिनवर सदन मदन मद हार।
मृत्युंजयि[1] की प्रतिमा उनमें, मुनिगण वंदत मुद मनधार।।
मैं पूजूँ जिनबिंब मनोहर, मन वच तन कर अर्घ्य चढ़ाय।
रोग शोक भय आदि उपाधी, सब भव व्याधी शीघ्र पलाय।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालय-स्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु सौमनस रम्यवन, उसमें उत्तर दिशा मंझार।
श्रीजिनमंदिर में जिनप्रतिमा, नितप्रति वंदूँ बारम्बार।।
मैं पूजूँ जिनबिंब मनोहर, मन वच तन कर अर्घ्य चढ़ाय।
रोग शोक भय आदि उपाधी, सब भव व्याधी शीघ्र पलाय।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

पूर्वधातकी विजयमेरु के, वनसौमनस चतुर्दिक सार।
स्वयंसिद्ध जिनराज निकेतन, सुर नर खगपति वंदित चार।।
मैं पूजूँ जिनबिंब मनोहर, मन वच तन कर अर्घ्य चढ़ाय।
रोग शोक भय आदि उपाधी, सब भव व्याधी शीघ्र पलाय।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आयुकर्म से रहित जिनेश्वर।

विजयमेरु पांडुकवन चैत्यालय पूजा

-अथ स्थापना-वेशरी छन्द-

विजयमेरु सौमनस वनी से, योजन सहस अठाइस लीजे।
पांडुकवन चहुंदिश जिनगेहा, आह्वानन कर जजूँ सनेहा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरणं।

अष्टक-अडिल्लछन्द

गंगानीर सुपावन निर्मल लाइया।
मन संताप मिटावन धार कराइया।।
विजयमेरु पांडुकवन, जिनमंदिर जजूँ।
रत्नत्रय निधि हेतु, भुवनपति जिन भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट गंध कुंकुम कर्पूर घिसाइया।
त्रिभुवन जनता इष्ट जिनांघ्रि चढ़ाइया।।विजयमेरु.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मेघपुष्ट कमलाक्षत, शशिकर सम लिया।
सब अनिष्टहर जिनढिंग पुंज रचित किया।।विजयमेरु.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पाटल जुही प्रसून नयन प्रिय लाइया।
काम दाहहर ईश्वर चरण चढ़ाइया।।
विजयमेरु पांडुकवन, जिनमंदिर जजूँ।
रत्नत्रय निधि हेतु, भुवनपति जिन भजूँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खाजे खुरमा पूरी पुआ सोहाल से।
परम ब्रह्म जिन पूजत, भूख व्यथा नशे।।विजयमेरु.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमदीप घृतबत्ती, ज्वाला जगमगे।
जिनपद पूजा करत, स्वपर अंतर जगे।।विजयमेरु.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशांगी सुरभि, हुताशन में जले।
त्रिजगदेव महदेव, निकट अघरिपु जले।।विजयमेरु.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला जामुन कैथ विजौरा फल लिया।
स्वात्म सुधारस फलहित, तुम अर्पण किया।।विजयमेरु.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उदक गंध अक्षत सुम चरु आदिक मिला।
स्वर्ण पात्र से अर्घ्य चढ़ाकर मन खिला।।विजयमेरु .।।9॥

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुं जग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिन चरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः ।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

वैभव अतुल अनंत युत, अकृत्रिम जिनधाम।
पुष्पाजंलि क्षेपण करुँ, पूजूँ विश्व ललाम।।1।।

इति विजयमेरुस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–चौपाई–छन्द–

विजयमेरु पांडुकवन जानो, पूरब दिश जिनभवन बखानो।
सुरपति खगपति नित्य जजें हैं, हम भी अर्घ्य चढ़ाय भजे हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस पांडुकवन दक्षिण जानो, शाश्वत श्री जिनभवन महानो।
सुरललना जिनवर गुण गावें, हम भी पूजें जिनपद ध्यावें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस वन में पश्चिम दिश माहीं, जिनगृह सम उत्तम कुछ नाहीं।
किन्नरियां वीणा स्वर साजें, हम भी पूजें सब अघ भाजें।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु पांडुकवन सोहे, जिनवर भवन सबन मन मोहे।
देव देवियां जिनपद पूजें, हम भी यहां तुम्हें नित पूजें।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चाल–नंदीश्वर पूजा

वरधात्री खंड सुमेरु, पांडुकवन सोहे।
चहुँदिश चैत्यालय चार, सुरगण मन मोहे।।
चारों विदिशा में चार, पांडुक आदि शिला।
जिन न्हवन हेतु सुखकार, पूजूँ अर्घ्य मिला।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–पूर्णार्घ्य–

श्री विजयमेरु जिनधाम, सोलह सुखकारी।
जिनप्रतिमा इक सौ आठ सबमें मनहारी।।
वसुविध वर द्रव्य संवार, तिन पदपद्म जजों।
कर सर्व अमंगल दूर, मंगल सद्म भजों।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–शम्भु छन्द–

यह विजयमेरु चौरासि सहस, योजन उत्तुंग कहाता है।
वन भद्रसाल से पांच शतक, योजन पर नंदन आता है।।
योजन साढ़े पचपन हजार,ऊपर सौमनस सुहाता है।
योजन अट्ठाइस सहस जाय, पांडुकवन सबको भाता है।।1।।

–दोहा–

इसमें सोलह जिनभवन, त्रिभुवन तिलक महान।
उनमें जिनप्रतिमा विमल, नमूँ नमूँ गुण खान।।2।।

चाल–हे दीनबन्धु

देवाधिदेव श्री जिनेन्द्रदेव हो तुम्हीं।
अनादि औ अनंत स्वयंसिद्ध हो तुम्हीं।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधि पाय, मैं धनवान हो गया।।3।।

रस गंध फरस रूप से मैं शून्य ही कहा।
इस मोह से भी मेरा संबंध ना रहा।।हे नाथ.।।4।।

ये द्रव्यकर्म आत्मा से बद्ध नहीं हैं।
ये भावकर्म तो मुझे छूते भी नहीं हैं।।हे नाथ.।।5।।

मैं एकला हूँ शुद्ध, ज्ञान दरस स्वरूपी।
चैतन्य चमत्कार, ज्योति पुंज अरूपी।।हे नाथ.।।6।।

मैं नित्य हूं अखंड हूँ, आनंद धाम हूँ।
शुद्धात्म हूँ परमात्म हूँ, त्रिभुवनललाम हूँ।। हे नाथ.।।7।।

मैं पूर्ण विमल ज्ञान, दर्श वीर्य स्वभावी।
निज आत्मा से जन्य, परम सौख्य प्रभावी।। हे नाथ.।।8।।

परमार्थ नय से मैं तो सदा शुद्ध कहाता।
ये भावना ही एक सर्वसिद्धि प्रदाता।।हे नाथ.।।9।।

व्यवहारनय से यद्यपी, अशुद्ध हो रहा।
संसार पारावार में ही, डूबता रहा।। हे नाथ.।।10।।

फिर भी तो मुझे आज मिले आप खिवैया।
निज हाथ का अवलम्ब दे, भव पार करैया।।हे नाथ.11।।

मैं आश यही लेके नाथ पास में आया।
अब वेग हरो जन्म व्याधि, खूब सताया।। हे नाथ.।।12।।

हे दीनबंधु शीघ्र ही निज पास लीजिये।
भव सिंधु से निकाल, मुक्तिवास दीजिये।।हे नाथ.।।13।।

–घत्ता–

जय जय सुखकंदा, अमल अखंडा, त्रिभुवन कंदा तुमहि नमूँ।
जय 'ज्ञानमतिय' मम, शिवतियअनुपम, तुरत मिलावो निश्चणमूँ।।14।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थ-सर्वजिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.10)

विजयमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजा

–दोहा–

विजयमेरु विदिशा विषै, कहें चार गजदंत।
तिनमें चारों जिननिलय, कहे अनादि अनंत।।1।।
तिनके श्री जिनबिंब जे, सर्व द्वंद्व हरतार।
मैं विधिवत पूजन करूँ, त्रिजगवंद्य भरतार।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह!अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–चामरछन्द–

(चाल–पार्श्वनाथ देवे सेव.....)

दुग्धसिंधु के समान, स्वच्छ नीर लाइये।
पूजते जिनेन्द्रपाद, दाह को मिटाइये।।
चार गजदंत के, जिनेन्द्र सद्म मैं जजूँ।
सर्व ऋद्धि सिद्धिदायि, जैनबिंब मैं जजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंकुमादि गंध से जिनेन्द्र पाद पूजिये।
सर्व मोहताप नाश, शान्त चित्त हूजिये।।चार.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सोमरश्मि के समान, अक्षतों को लाइये।
अक्षयी अनंददायि, पुंज को चढ़ाइये।।
चार गजदंत के, जिनेन्द्र सद्म मैं जजूँ।
सर्व ऋद्धि सिद्धिदायि, जैनबिंब मैं जजूँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पारिजात मालती, गुलाब पुष्प लाइये।
मार मल्लहारि देव, पूज सौख्य पाइये।।चार.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंजनादि ओदनादि सर्पि से मिलाइये।
आप पूजते क्षुधादि रोग को मिटाइये।।चार.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णदीप में कपूर, ज्योति को जलाइये।
आरती करेय मोह, ध्वांत को भगाइये।। चार.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप ले दशांग अग्नि, संग में जराइये।
अष्ट कर्म भस्म धूम, शीघ्र ही उड़ाइये।।चार.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सेव आम्र निंबुकादि, थाल में भराइये।
आप चर्ण को चढ़ाय, सर्व सौख्य पाइये।।चार.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अंबु गंध अक्षतादि, दिव्य अर्घ्य लीजिये।
चर्ण में चढ़ाय के, अनर्घ्य राज्य कीजिये।।
चार गजदंत के, जिनेन्द्र सद्म मैं जजूँ।
सर्व ऋद्धि सिद्धिदायि, जैनबिंब मैं जजूँ।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्रीजिन चरण सरोज, धारा देते भव मिटे।।10।। शांतये शांतिधारा।

सुरतरु के सुम लेय, प्रभुपद में अर्पण करूँ।
कामदेव मदनाश, पाऊं आनंद धाम मैं।।11।। दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

विजयमेरु चारों विदिश, चार कहे गजदंत।
तिनके जिनमंदिर जजूँ पुष्पांजली करंत।।

इति श्रीविजयमेरुसंबंधिगजदंतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

विजयमेरु आग्नेय कोण में, 'सौमनस्य' गजदंता।
रौप्यमयी वह सातकूट में, सिद्धकूट अघहंता।।
जिनमंदिर में श्रीजिनप्रतिमा, भानु समान विभासें।
अर्घ लेय मैं जजूँ मुदित मन, ज्ञान भानु परकासे।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसगजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु नैऋत्य कोण में, 'विद्युतप्रभ' गजदंता।
तप्तकनक छवि नवकूटों में, सिद्धकूट चमकंता।।जिन.2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिविद्युत्प्रभगजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु वायव्य कोण में 'गंधमादनी' सोहे।
कांचन समद्युति सात कूट युत, सिद्धकूट मन मोहे।।
जिनमंदिर में श्रीजिनप्रतिमा, भानु समान विभासें।
अर्घ लेय मैं जजूँ मुदित मन, ज्ञान भानु परकासे।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिगंधमादनगजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु ईशान कोण में, 'माल्यवान' गजदंता।
नवकूटों युत सिद्धकूट धर, नीलम छवि छलकंता।।जिन.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिमाल्यवानगजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुतियमेरु के चारों विदिशा, गजदंतनि जिनधामा।
इन्द्र चक्रि धरणीन्द्र मुनीन्द्रा, वंदत हैं शिवकामा।।जिन.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिविदिशायां चतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वत जिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

गजदंताचल चार, तिनके श्रीजिनभवन में।
जिनवर बिंब महान, तिनकी गुणमाला कहूँ।।1।।

–पद्धड़ी छन्द–

हे नाथ आप त्रैलोक्य वंद्य, त्रिभुवन के स्वामी इन्द्रवंद्य।
तुम ज्योतिरूप मंगल स्वरूप, तुम निर्विकार परमात्म रूप।।2।।
भविजनमन कुमुद विकास चन्द्र, हे नाथ तुम्हीं भुवनैकचन्द्र।
मुनिगण हृदयाम्बुज सूर्यनाथ, शिवरमणी को कीयो सनाथ।।3।।

तुम दरस ज्ञान सुख वीर्यवान, तुम अतुल अमल अनुपमनिधान।
तुम हो अनंत गुण पुंज ईश, गणधर गुणधर तुम नाय शीश।।।4।।
तुम गुणरत्नाकर देवदेव, तुम करुणा सागर देवदेव।
तुम जन्म मृत्यु अरि जीत लीन, सब रोग शोक बाधा विहीन।।5।।
सब क्षुधा तृषादिक दुःख खान, तुम कर्म शत्रु जीते महान।
तुम मूर्ति रहित भी मूर्तिमान, तुम देहरहित भी कांतिमान।।6।।
तुम शुद्ध बुद्ध ज्ञायक अखंड, भवसिंधु भव्य तारन तरंड।
तुम अविचल आनंद कंद धाम, मेरी भव बाधा हरो आन।।7।।
तुम बिंब अचेतन रत्नसार, फिर भी वांछित फल दे अपार।
उपदेश नहीं देवे कदापि, शिवमार्ग प्रकट करती तथापि।।8।।
ये आदि अन्त से शून्य जान, भविजन को शिव सुख हेतु भानु।
सब वीतराग छविमान बिंब, सब सौम्य मूर्ति द्युतिमान बिंब।।9।।
जिनप्रतिमा वंदों बारबार, सब सिद्धों को नित नमस्कार।
हे नाथ! हरो मेरे कलेश, मुझ को निजपद देवो महेश।।10।।

–घत्ता–

जय गजदंताचल, जिनगृह निरमल, जय जय हे त्रैलोक्यपती।
जय मंगलकारी, कर्मविदारी, जय तुम ध्यावें 'ज्ञानमती'।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरोः गजदन्ताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.11)

विजयमेरु संबंधि धातकी शाल्मलिवृक्ष जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–नरेन्द्र छंद–

विजयमेरु के उत्तरकुरु में, वृक्ष धातकी सोहे।
इसी मेरु के देवकुरू में, शाल्मलि तहँ मन मोहे।।
इनकी एक एक शाखा पर, जिनमंदिर सुखकारी।
इन दो मंदिर की जिनप्रतिमा, पूजो अघतमहारी।।1।।

–दोहा–

तरु के सब जिनराज की, आह्वानन विधि ठान।
आवो आवो नाथ! अब, करो सकल दुःख हान।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ सर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–नाराच छंद–

हिमाद्रि गंगनीर लाय, स्वर्ण भृंग में भरूँ।
जिनेश पादपद्म धार, देत ही तृषा हरूँ।।
तरु तने जिनेन्द्र को, सुरेन्द्र पूजते वहाँ।
महान भक्ति भाव धार, मैं जजूँ उन्हें यहाँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुगंध अष्टगंध लेय, हर्ष भाव ठानिये।
जिनेश पादपद्म चर्च, मोह ताप हानिये।।
तरू तने जिनेन्द्र को सुरेन्द्र पूजते वहां।
महान भक्ति भाव धार मैं जजूं उन्हें यहाँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कमोद जीरिका अखंड, शालि धान्य लाइये।
सुपुंज आप पास दे, अखंड सौख्य पाइये।।तरू तने.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

गुलाब कुन्द पारिजात पुष्प अंजली लिये।
जिनेश पाद पूज कामदेव को हनीजिये।।तरू तने.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमिष्ट फेनि लाडु व्यंजनादि भांति भांति के।
जिनेशपाद पूजते, भगे क्षुधा पिशाचि के।।तरू तने.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अखंड ज्योतिवान दीप स्वर्ण पात्र में जले।
जिनेन्द्र पाद पूजते हि, मोहध्वांत भी टले।।तरू तने.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशांग धूप लेय अग्नि पात्र में सुखेइये।
जिनेश सन्निधी तुरंत कर्म भस्म देखिये।।तरू तने.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

इलायची लवंग दाख औ बदाम लाइये।
जिनेश को चढ़ाय मुक्तिवल्लभा को पाइये।।

तरू तने जिनेन्द्र को सुरेन्द्र पूजते वहां।
महान भक्ति भाव धार मैं जजूं उन्हें यहाँ।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलादि अष्ट द्रव्य लेय अर्घ्य को बनाइये।
अनर्घ्य सौख्य हेतु नित्य नाथ को चढ़ाइये।।तरू तने.।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर कंचन झारी में भरा।
जिनपद धार देय, शांति करो सब लोक में।।10।।शांतये शांतिधारा।

वकुल कमल अरविंद, सुरभित फूलों को चुने।
जिनपद पंकज अर्घ्य, यश सौरभ चहुंदिश प्रेम।।11।।दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

वृक्ष धातकी शाल्मली,पूर्वधातकी माहिं।
उनके जिनगृह नित जजूँ, पुष्पांजली चढ़ाहिं।।1।।

इति विजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छन्द–

विजयमेरु ईशान कोण में, वृक्ष आंवले जैसा।
तरु की उत्तर गत शाखा पर, जिनगृह अनुपम वैसा।।
यतिपति वंदित जिनवर प्रतिमा, कलिमल नाश करे हैं।
पूजन करते भविजन मिलकर, यम का पाश हरे हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु नैऋत्य कोण में, शाल्मली द्रुम भारी।
इसकी दक्षिणगत शाखा पे, जिन मंदिर भवहारी।।

गणधर भी नित ध्याते रहते, मन में उन प्रतिमा को।
जनम जनम अघ नाशन हेतू हम भी पूजे उनको।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **पूर्वधातकी खंड में धातकी शाल्मलि वृक्ष।**
इनके श्री जिनभवन को, पूजूँ कर मन स्वच्छ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्यपुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–नरेन्द्र छंद–

विजयमेरु ईशानदिशा में वृक्ष धातकी सोहे।
नैऋत दिश में वृक्ष शाल्मलि सुरगण का मन मोहे।।
इक इक के परिवार तरू दो, लाख सहस अस्सी हैं।
दो सौ अड़तिस इतने सबमें, प्रतिमा शाश्वतकी हैं।।1।।

–नाराच छंद–

जिनेश बिंब एक सौ सुआठ सर्व वृक्ष में।
प्रमुख्यता धरे महान एक ही तरु इमें।।
नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।2।।

अनादि हो अनन्त हो प्रसिद्ध सिद्ध रूप हो।
दयाल धर्मपाल तीन काल एक रूप हो।।
नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।3।।

अलोक लोक में प्रधान तीन लोक नाथ हो।
अनेक रिद्धि के धनी सुभक्ति के सनाथ हो।।

नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।4।।

महान दीप्तिमान मोहशत्रु को कृपान हो।
प्रसन्न सौम्य आस्य[1] हो पवित्र हो पुमान हो ।।
नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।5।।

दिनेश[2] तें विशेष तेज की महान राशि हो।
कुमोदनी भवीक हेतु वें सुधानिवास[3] हो।।
नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।6।।

भवाब्धि डूबते तिन्हें तुम्हीं सुकर्णधार हो।
गुणौघ[4] रत्न के समुद्र सार में सु सार हो।।
नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।7।।

–दोहा– **तुम गुण गण मणि अगम हैं, को गण पावे पार।**
जो गुण लव कंठहिं धरे, सो उतरे भव पार।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. मुख। 2. सूर्य। 3. चंद्र। 4.गुण समूह।

(पूजा नं.12)

विजयमेरु के सोलह वक्षार पर्वत जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छंद–

श्रीविजयमेरू पूर्व पश्चिम, पूर्व अपर-विदेह हैं।
इनमें कहे वक्षार सोलह, तास में जिनगेह हैं।।
उनमें सुरासुर वंद्य प्रतिमा, भविक कल्मष परिहरें।
थापूँ उन्हें इत आय तिष्ठो, भक्ति से पूजन करें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थितषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थितषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थितषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–सखी छंद–

(चाल–सुनिये जिन अरज.....)

बहु युग से तृषा सतायो, इस हेतू जल ले आयो।
वक्षाराचल जिन प्रतिमा, पूजूँ उन अद्भुत महिमा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मुझको भवताप तपायो, इस कारण गंध घिसायो।
वक्षारगिरी जिन पूजें, सब कर्म शत्रु दल धूजें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोतीसम तंदुल लाये, प्रभु आगे पुंज चढ़ाये।
वक्षार अचल जिनप्रतिमा, पूजूँ सिद्धन की उपमा।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सौगंधित सुमन[1] लिये हैं, जिनवर पद यजन किये हैं।
वक्षार नगन[2] जिन सोहें, पूजूँ मैं सब सुख हो हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत मिश्रीयुत पकवाना, जिनपद पूजन अघ हाना।
वक्षार अचल जिनगेहा, पूजन से हो गतदेहा।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोघृत दीपक में भरके, जिन पूजूँ आरति करके।
वक्षार गिरी जिन देवा, पूजत भ्रम तम हर लेवा।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दश गंध अगनि में डालें, सब क्रूर करम भी हालें।
वक्षार नगों पे प्रतिमा, पूजत होवे फल सुषमा।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बादाम चिरोंजी, फल ले प्रभु पूज करो जी।
वक्षार अचल जिन मूर्ती, पूजत ही शिवफल पूर्ती।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. पुष्प। 2.पर्वत पर ।

जल गंधादिक बहु लाये, सुवरण के थाल भराये।
वक्षार अचल जिनप्रतिमा, पूजत सुख होय अनुपमा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सीतानदी सुनीर जिनपद पंकज धार दे।
वेग हरूँ भव पीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पद अरविंद, पूजत ही सुखसंपदा।।11।।दिव्य पुष्पांजलिः

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

पूर्व धातकी खंड में, पूरब अपर विदेह।
सोलह गिरि वक्षार के, जिनगृह जजूँ सनेह।।1।।

इति श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशवक्षारस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

छन्द जोगीरासा–(चाल–इह विध राज करे नरनायक....)

पूर्व विदेह नदी सीता के, उत्तरतट वक्षारा।
भद्रसाल वेदी सन्निध में, 'चित्रकूट' सुखकारा।।
उस पर जिनमंदिर है सुन्दर, जजत पुरंदर देवा।
मैं भी जिनप्रतिमा को पूजूँ, होवे भव दुःख छेवा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थचित्रकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रम से 'पद्मकूट' नामक है, गिरि वक्षार सुहाना।
मुनिगण उस पर ध्यान धरत हैं, पावत सौख्य महाना।।
उस पर जिनमंदिर है सुन्दर, जजत पुरंदर देवा।
मैं भी जिनप्रतिमा को पूजूँ, होवे भव दुःख छेवा।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपद्मकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिनकूट' वक्षार तीसरा, सब जन मन को प्यारा।
इस पर चार कूट उनमें से,सिद्धकूट अघ हारा।।
उस पर जिनमंदिर है सुन्दर, जजत पुरंदर देवा।
मैं भी जिनप्रतिमा को पूजूँ, होवे भव दुःख छेवा।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थनलिनकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'एकशैल' वक्षार बगीचे बावड़ियों से सोहे।
देव देवियाँ खेचर खेचरनी किन्नर मन मोहे।।
उस पर जिनमंदिर है सुन्दर, जजत पुरंदर देवा।
मैं भी जिनप्रतिमा को पूजूँ, होवे भव दुःख छेवा।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थएकशैलवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई– **सीता नदि के दक्षिण तास, देवारण्य वेदिका पास।**
नाम 'त्रिकूट' कहा वक्षार, तापर जिनगृह पूजूँ सार।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थत्रिकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है 'वैश्रवण' दुतिय वक्षार, तापर सिद्धकूट मनहार।
तामें जिनगृह में जिनबिंब, अर्घ्य चढ़ाय जजूँ तज डिंभ।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवैश्रवणनामवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अंजन' है तीजा वक्षार, वन वेदी सुर महल अपार।
तापर जिनगृह में जिनराज, अर्घ्य चढ़ाय लहूँ शिवराज।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थअंजनवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अञ्जनात्मा' है वक्षार, तापर मुनिगण करत विहार।
इस पर जिनमंदिर अभिराम, जिनमूरति को करूँ प्रणाम।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थांजनात्मावक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–जोगीरासा–

द्वीप धातकी अपरविदेहा, सीतोदा तट दायें।
भद्रसाल सन्निध वक्षारा, 'श्रद्धावान' कहाये।।
उस पर सिद्धकूट में जिनगृह, जिनप्रतिमा मन रीरी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर मैं नित, रोग शोक भयहारी।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थश्रद्धावानवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजटावान' दुतिय वक्षारा, सुर किन्नर चितहारी।
ऋषिगण विचरण करते रहते, परमानंद विहारी।।
उस पर सिद्धकूट में जिनगृह, जिनप्रतिमा मनहारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर मैं नित, रोग शोक भयहारी।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थविजटावानवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आशीविष' वक्षार तीसरा, तापर उपवन वेदी।
सुर गण के प्रासाद मनोहर, मुधर पवन श्रमछेदी।।
उस पर सिद्धकूट में जिनगृह, जिनप्रतिमा मनहारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर मैं नित, रोग शोक भयहारी।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थआशीविषवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ वक्षार'सुखावह' चौथा, अतिरमणीय सुहाता।
चार कूट हैं मन को भाते, त्रय सुरगृह सुखदाता।।
उस पर सिद्धकूट में जिनगृह, जिनप्रतिमा मनहारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर मैं नित, रोग शोक भयहारी।।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुखावहवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–चौपाई–

द्वीप धातकी अपर विदेह, सीतोदा उत्तर तट येह।
देवारण्य निकट वक्षार, 'चंद्रमाल' पर जिनगृह सार।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थचंद्रमालवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सूर्यमाल' दूजा वक्षार, तापर जिनवर गृह सुखकार।
तामें सुरनर नत जिनबिंब, मैं पूजूँ सिद्धन प्रतिबिंब।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसूर्यमालवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नागमाल' तीजा वक्षार, सुर खग मुनिगण करत विहार।
भवविजयी श्री जिनवर धाम, पूजन करूँ लहूँ शिवधाम।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थनागमालवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'देवमाल' चौथा वक्षार, दर्शनीय उत्तम गिरि सार।
तापर मदनजयी जिनगेह, जिनप्रतिमा को जजूँ सनेह।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थदेवमालवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–विष्णुपद छंद–

दीप धातकी में हैं सोलह, पर्वत वक्षारा।
स्वर्णमयी सब चार कूट, युत अनुपम भंडारा।।
तीन कूट पर देव देवियाँ, रहते सुख पाते।
नदी निकट कूटों पर जिनगृह, यजते अघ जाते ।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः ।**

जयमाला

–दोहा–

विजयमेरु पूरब अपर, सोलह गिरि वक्षार।
जयमाला जिनगेह की, पढ़ूँ हरष उर धार।।1।।

रोला छंद–

जय जय गिरि वक्षार, क्षेत्र विदेहनि माहीं।
सब सुवरण द्युतिमान, चउ चउ कूट कहाहीं।।
जय जय श्री सिद्धकूट, सब पे शोभ रहे हैं।
तामें श्री जिनेगह, अनुपम दीप रहे हैं।।2।।
जय जय शाश्वत बिंब, इक सौ आठ सभी में।
जय जय वे उत्तुंग, कर[1] दो सहस सभी में।।
सुर युगलों की मूर्ति, चौंसठ हैं जिनपासी।
चंवर लिये कर माहिं, मानों चंवर ढुरासी।।3।।
तीन छत्र शोभंत, भामंडल छवि भारी।
खर नर नारी आय, जिन पूजें सुखकारी।।
घंटा की ध्वनि होत, घन घन घन प्रिय लागे।
बहु फूलन की माल, लटकें दिश महका के।।4।।
भृंग कलश आदर्श[2], चमर ध्वजा व्यजना[3] है।
छत्र तथा सुप्रतिष्ठ[4], मंगल द्रव्य गिना है।।
मंगल द्रव्य सुआठ, मंगलकारी मानो।
प्रत्येक इक सौ आठ, इक इक प्रभु को जानो।।5।।
श्रीदेवी श्रुतदेवि, ये तो रत्नमयी हैं।
वर सर्वाण्ह सुयक्ष, सनत्कुमार सही हैं।।
ये चारों इक एक, मूर्ती पासे तिष्ठें।
शाश्वत रचना येह, उस श्रद्धा धर नीके।।6।।
जिनमंदिर के माहिं, सुवरण की मालायें।
झारी दर्पण चक्र, चामर आदि बतायें।।

1. दो हजार हाथ। 2. दर्पण। 3. पंखा। 4.ठोना।

मुख्य द्वार द्वय भाग, रत्नन की मालायें।
चार हजार प्रमाण, जिन आगम यह गायें।।7।।
इनके बीच अनादि, सुवरण की मालायें।
बारह सहस प्रमाण, श्री यतिवृषभ[1] बतायें।।
रत्न खचित बत्तीस, सहस सु पूरण कलशे।
चौबिस सहस प्रमाण, धूप सुघट सुवरण से।।8।।
लघु द्वय द्वारे माहिं रत्नन सुवरण माला।
धूप घटों में धूप, खेते सुरगण आला।।
इत्यादिक रमणीय, रचना बहुत कही है।
जिनपद पूजें इन्द्र, चक्री आदि सही है।।9।।
हम भी जिनपद पूज, अतिशय पुण्य कमावें।
जन्म-जन्म के पाप, इक क्षण माहिं गमावें।।
सुरपद वांछा नाहिं, नहिं कुछ फल की वांछा।
निज पद दीजे मोहि, इएक यही मुझ याञ्चा।।10।।

–घता–

जय जय जिनदेवा, करमन छेवा, पढ़े सुने तुम जयमाला।
सो ज्ञानमती धर, हो शिवतिय वर, सुख पावे शाश्वत काला।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. तिलोयपण्णत्ति ग्रन्थकर्त्ता श्री यतिवृषभाचार्य।

(पूजा नं.13)

विजयमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–जोगीरासा छंद–

विजयमेरु के पूर्व अपर में, बत्तिस क्षेत्र विदेहा।
तिनके मध्य रजतगिरि सोहें, तिनपे श्रीजिनगेहा।।
भरतैरावत में जिनगृहयुत, रजत गिरी सरधाना।
चौंतिस रजताचल जिनप्रतिमा, मैं थापूँ इह थाना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–चाल-नंदीश्वर पूजा–

गंगा जल शीतल स्वच्छ कंचन भृंग भरों।
जिनवर पद सरसिज पूज, तृष्णा दाह हरों।।
चौंतिस रजताचल माहिं, जिनगृह मनहारी।
सब रिद्धि सिद्धि सुख देत, पूजों अघ हारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

वर अष्ट गंध घिस लाय, सुरभित भृंग नचें।
मम मोह ताप हर हेतु जिनवर पद चरचें।।चौंतिस.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अति उत्तम उज्ज्वल शालि, तंदुल थाल भरे।
अक्षय अनुपम सुख हेतु, प्रभु ढिग पुंज करें।।
चौंतिस रजताचल माहिं, जिनगृह मनहारी।
सब रिद्धि सिद्धि सुख देत, पूजों अघ हारी।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मचकुंद कदंब गुलाब, नाना वर्ण धरें।
पूजत ही जिनपद पद्म, काम कलंक हरें।।चौंतिस.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खाजे ताजे पकवान, मालपुआ लाये।
जिनपद कमलों को पूज, रोगक्षुधा जाये।।चौंतिस.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत दीप कपूर जलाय जगमग ज्योति जले।
अज्ञान महातम नाथ, तुम पद पूज टले।।चौंतिस.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वरधूप हुताशन संग जलते धूम करे।
जिनवर पद सन्निध पाय, बहुविध कर्म जरें।।चौंतिस.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता किसमिस अंगूर, आम अनार लिये।
जिनपद पूजत ही नित्य, अनुपम सुफल किये।।चौंतिस.।।8।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल वसु द्रव्य सजाय, रत्न मिलाय लिया।
जिनवर पद पूजत आय, सौख्य अनर्घ्य लिया।।
चौंतिस रजताचल माहिं, जिनगृह मनहारी।
सब रिद्धि सिद्धि सुख देत, पूजों अघ हारी।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

गंगनदी को नीर, तुम पद धारा मैं करूँ।
जिनपद धारा देत, शांति करो सब लोक में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल कमल अरविंद, सुरभित फूलों को चुने।
जिनपद पंकज अर्प्य, यश सौरभ चहुंदिश भ्रमें।।11।।

परिपुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–

–दोहा–

विजयमेरु के चार दिश, चौंतिस गिरि विजयार्ध।
उनके चौंतिस जिनभवन, पूजूँ नित्य कृतार्थ।।1।।

इति श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थामण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

चौबोल छंद (चाल–मेरी भावना)

'कच्छा' देश विदेह कहाता, उसके मधि रूपाद्रि रहे।
रक्ता रक्तोदा नदियों से, कच्छा के छहखंड कहे।।
आर्यखंड मधि 'क्षेमा' नगरी जिसमें तीर्थंकर रहते।
रजतगिरी[1] के जिनमंदिर को, अर्घ चढ़ाकर हम यजते।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. विजयार्ध।।

देश 'सुकच्छा' आर्य खंड में, 'क्षेमपुरी' है श्रेष्ठ मही।
तीर्थंकर चक्री आदिक से, जिनमंदिर से शोभ रही।।
देश मध्य के रजतगिरी पर, जिन चैत्यालय धर्म मही।
उसमें सब प्रतिमा को पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति सही।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुकच्छादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महाकच्छा' में रूपाचल नवकूटों सहित कहा।
उसके सिद्धकूट में जिनगृह, प्रतिमा यजते पाप दहा।।
इस विदेह के आर्य खंड के, मध्य 'अरिष्टापुरी' महा।
नितप्रति केवलि श्रुतकेवलि मुनि, ऋषिगण विचरण करे वहाँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहाकच्छादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावती' मध्य में, विजयारधगिरि रजत समा।
तीन कटनियों से खग नगरी, इक सौ दश से श्रेष्ठतमा।।
इस विदेह के आर्य खंड में, कही 'अरिष्टपुरी' सुखदा।
विजयारध के सिद्धकूट को, पूजत नहिं हो दुःख कदा।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छकावतीदेशमध्यविजयार्ध-पर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश रम्य 'आवर्ता' उसमें, रजतगिरी अतिशय महिमा।
उसके सिद्धकूट पर जिनगृह, इक सौ आठ जैन प्रतिमा।।
आर्य खंड 'खड्गा' नगरी के, मुनिगण भी वहाँ दर्श करें।
हम भी अर्घ्य चढ़ाकर पूजें, गर्भवास के दुःख हरें।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थावर्तादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'लांगलावर्ता' उसमें, रजताचल शुभ राज रहा।
इस पर सिद्धकूट मंदिर है, सुर असुरों से पूज्य कहा।।

आर्यखंड 'मंजूषा' नगरी, ताके नर नारी रुचि से।
अकृत्रिम जिनप्रतिमा पूजें, जिनवर गुण गाते मुद से।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थलांगलावर्तादेशमध्यविजयार्ध-पर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कला' में रूपाचल, उस पर शुभ नव कूट कहे।
सिद्धकूट पर जिनमंदिर में, अनुपम प्रतिमा शुद्ध रहे।।
आर्यखंड 'औषधि' नगरी के, सब जग भक्ति सहित भजते।
हम सब अर्घ्य चढ़ाकर जिनपद, पूजा कर सब दुःख तजते।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' मध्य में, रजतगिरी जन मन हरती।
उसके सिद्धकूट जिनगृह की, सुर ललना कीर्तन करती।।
'पुंडरीकिणी' नगरी जन भी, विद्याबल से गमन करें।
हम भी यहीं अर्घ्य अर्पण कर, श्रद्धा से नित नमन करें।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलावतीदेशमध्यविजयार्ध-पर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–जोगीरासा छन्द–

'वत्सादेश' विदेह कहाता, तामधि विजयारध है।
उसपे सिद्धकूट चैत्यालय, जिनवरबिंब अनघ[1] हैं।।
इस विदेह में पुरी 'सुसीमा', आर्यखंड मधि मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवत्सा' के मधि सुन्दर, रजतगिरी शाश्वत है।
सिद्धकूट जिनमंदिर उस पर, मुनिगण नित ध्यावत हैं।।

1. निर्दोष।

इस विदेह में पुरी 'कुंडला' आर्यखंड मधि मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुवत्सादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावत्सा' मधि सुन्दर, रूपाचल नव कूटा।
सिद्धकूट में श्री जिनमंदिर, पूजत ही अघ छूटा।।
इस विदेह में 'अपराजितपुरि' आर्यखंड में मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहावत्सादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावती' मध्य में, रजताचल मन भावें।
सिद्धकूट में जिनचैत्यालय, पूजन कर सुख पावे।।
इस विदेह में 'प्रभंकरापुरि' आर्यखंड में मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सकावतीदेशमध्यविजयार्ध-पर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्यादेश' विदेह तास मधि, रजतगिरी अति सोहे।
सिद्धकूट में जिनप्रतिमा को पूजत ही सुख होहे।।
'अंकावति' नगरी विदेह में, आर्यखंड में मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरम्यादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' तामधि उज्ज्वल' रूपाचल मन भाना।
सिद्धकूट में जिनबिंबों को, जजते पातक हाना।।
'पद्मावती' पुरी क्षेत्तर में, आर्यखंड मधि मानी ।।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुरम्यादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश कहा 'रमणीया' सुन्दर, तामधि रजतगिरी है।
सिद्धकूट की जिनवर प्रतिमा, जजते दुःख हरी हैं।।
इस विदेह में 'शुभापुरी' है, आर्यखंड में मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरमणीयादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावती' अनूपम, रजताचल तामें है।
सिद्धकूट जिनदेव सदा ही, दुख दरिद्र हाने हैं।।
इस विदेह पुरि 'रत्नसंचया' आर्यखंड में मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमंगलावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काव्य छंद–(चाल–अहो जगत गुरुदेव.....)

'पद्मादेश' विदेह, तामधि रजत गिरी है।
उस पर श्रीजिनगेह, पूजत पाप हरी है।।
पद्मा आरजखंड, 'अश्वपुरी' नगरी है।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुपद्मा' माहिं, रजताचल मन भाना।
उस पर जिनवर धाम, पूजत पाप पलाना।।
आरजखंड सुमध्य, 'सिंहपुरी' नगरी है।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है ।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुपद्मादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महापद्मा है देश, रूपाचल ता माहीं।
उसके श्रीजिनबिंब, जजते पाप नशाहीं।।

आरजखंड सुमध्य, 'महापुरी' नगरी हैं।।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहापद्मादेशमध्यविजयार्ध-पर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावति', रूपाचल अभिरामा।
सिद्धकूट के माहिं, पूजत हूँ जिनधामा।।
आरजखंड सुमध्य, 'विजयापुरि' नगरी है।।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मकावतीदेशमध्यविजया-र्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखादेश' विदेह, विजयारध गिरि माना।
सिद्धकूट जिनगेह, पूजत ही सुख दाना।।
आरजखंड सुमध्य, शुभ 'अरजा' नगरी है।।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थशंखादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिनादेश' विदेह, रूपाचल मन भावे।
तापर जिनवरगेह, पूजत शोक नशावे।।
आरजखंड सुमध्य, शुभ 'विरजा' नगरी है।।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थनलिनादेशमध्यविजयार्ध-पर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदादेश' महान, रूपाचल अति सोहे।
तापर श्रीजिनधाम, पूजत ही सुख होवे।।
आरजखंड सुमध्य कही 'अशोकपुरी' है।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थकुमुदादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरिता' देश महान, रूपाचल वर जानो।
ताके जिनगृह माहिं, जिनपद पूजन ठानो।।
आरजखंड सुमध्य, 'वीतशोक' नगरी है।।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसरितादेशमध्यविजयार्ध-पर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–गीता छंद–

'वप्रा' विदेह सुमाहिं सुन्दर, रजतगिरि मनभावना।
नवकूट में इक कूट पर है, जिनभवन अति पावना।।
इस देश आरजखंड में, 'विजयापुरी' अति सोहनी।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुविदेह 'सूवप्रा' मधी है, रजतगिरि उत्तम कहा।
तापे जिनालय में रतनमय, बिंब का अतिशय महा।।
इस देश आरजखंड में, पुरि 'वैजयंती'' सोहनी।।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुवप्रादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ देश 'महवप्रा' सुहाता, तास में विजयार्ध है।
उसपे जिनेश्वर मूर्तियों को, महामुनिगण ध्यात हैं।।
इस देश आरजखंड में नगरी 'जयंती' सोहनी।
ताके जनों से पूज्य, जिनवर मूर्ति पूजूँ मोहनी।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहावप्रादेशमध्यविजयार्ध-पर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ देश 'वप्रीकावती' में, रूप्यगिरि सुन्दर कहा।
ऋषिगण विचरते हैं सदा, जिनवर सदन मनहर रहा।।

इस देश आरजखंड में, 'अपराजिता' पुरि सोहनी।।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रिकावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वरदेश 'गंधा' बीच में, विजयार्ध अनुपम शासता।
किन्नरगणों के गीत से, जिनवर भवन नित भासता।।
इस देश आरजखंड में, 'चक्रापुरी' अति सोहनी।।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ देश 'सूगंधा' मधी है, रजतगिरि रूपामयी।
विद्याधरों की पंक्तियाँ, जिनवर भवन पूजें सही।।
इस देश आरजखंड में, 'खड्गापुरी' है सोहनी।।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुगंधादेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ देश 'गंधीला' मधी है, रजतगिरि अति सोहना।
गंधर्व सुरगण पूजते हैं, जिनभवन मन मोहना।।
इस देश आरजखंड में, नगरी 'अयोध्या' सोहनी।।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।31।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधिलादेशमध्यविजयार्ध पर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ 'गंधमालिनि' देश में, विजयार्ध गिरि सुन्दर कहा।
उस पर जिनेश्वर बिंब को, नित जजेंसुर किन्नर अहा।।
इस देश आरजखंड में, नगरी 'अवध्या' सोहनी।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधमालिनीदेशमध्यविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–नरेन्द्रछंद–

'भरतक्षेत्र' में हिमगिरि से गंगा सिन्धू उदगमतीं।
रूपाचल की गुफा तले से बाहर होकर बहतीं।।
आर्यखंड के मध्य 'अयोध्या' तीर्थंकर जिन होते।
रजताचल के जिनगृह जिनवर, बिंब जजतसुख होते।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभरतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वत स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरी से रक्ता रक्तोदा, नदियाँ निकलें जानो।
विजयारध की गुफा तले से, बाहर आती मानों।।
आर्यखंड के मध्य 'अयोध्या', पुरुष शलाका होते।
विजयारध के जिनमंदिर को, पूजत ही मल धोते ।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

पूरब पश्चिम कहे विदेहा, तिनके बत्तिस जानो।
दक्षिण उत्तर भरतैरावत के, दो रजताचल मानो।।
इन चौंतिस के चौंतिस जिनगृह, रत्नमयी जिनप्रतिमा।
पूरण अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ, इनकी अतिशय महिमा।।35।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

जय जय गिरि विजयार्ध, जय जिनचैत्यालय नमूँ।
जय जय श्री जिनबिंब, नमूँ सदा भव दुःख हरो।।1।।

–शम्भु छंद–

श्री विजयमेरु पूर्वापर में, बत्तिस शुभ क्षेत्र बखाने हैं।
उन सबमें शाश्वत रचना है, नित करमभूमि ही माने हैं।।
इक क्षेत्र में कोटी छ्यानवें हैं, पुर ग्राम रतनगृहयुत माने।
हैं नगर पछत्तर सहस रम्य, सोलह सु हजार खेट माने।।2।।

कर्वट चौंतीस हजार कहे, और चार हजार मटंब कहे।
पत्तन अड़तालिस सहस तथा, निन्यानवे सहस द्रोणमुख हैं।।
संवाहन चौंतिस सहस दुर्ग-अटवी अट्ठाइस सहस कहीं।
हैं छप्पन अंतरद्वीप सात सौ, कुक्षिनिवास प्रसिद्ध सही।।3।।

रत्नाकर छब्बिस सहस सदा, रत्नों की खान बखाने हैं।
नानाविध उपवन खंड तथा, वापी पुष्करिणी माने हैं।।
त्रयवर्णी क्षत्रिय वैश्य शूद्र, वहाँ सतत जनमते रहते हैं।
ईती भीती दुर्भिक्ष महामारी आदिक नहिं कहते हैं।।4।।

अतिवृष्टि अनावृष्टी नहिं है, वहाँ सुखकर मेघ बरसते हैं।
ब्रह्मा विष्णू चंडी मुंडी शिव के मंदिर नहिं दिखते हैं।।
धर्माभासी मिथ्यादृष्टी, पाखंडी वहँ नहिं होते हैं।
कोई कोई जन वहँ पर भी, बस भाव मिथ्यात्वी होते हैं।।5।।

नर नारी की उत्कृष्ट आयु, इक पूर्व कोटि बरसों तक है।
है आयु जघन अंतर्मुहूर्त, मध्यम में बहुविध भेद रहें।।
तन ऊँचाई कर दो हजार, वे कर्मभूमि के वासी हैं।
कोई दीक्षा ले कर्मकाट, होते शिवपुर के वासी हैं।।6।।

कच्छा आदिक सब क्षेत्रों में, बस यही व्यवस्था मानी है।
हैं सभी क्षेत्र में रजतगिरी, दो दो नदियाँ परधानी हैं।।
इन सबमें छह-छह खंड हुए, हैं पाँच खंड नर म्लेच्छों के।
हों आर्यखंड में तीर्थंकर, चक्री हलधर[1] आदिक होते।।7।।

1. बलभद्र ।

रजताचल पर खेचर[1] नगरी, पचपन-पचपन द्वय बाजू में।
खेचर खेचरनी विद्या से, नित गमन करे दिश दासू[2] में।।
सब रूपाचल हैं रजतमयी, त्रयकटनी औ नव कूट कहें।
इक सिद्धकूट नदि के सन्निध, उसमें शाश्वत जिनधाम रहें।।8।।

श्री विजयमेरु के दक्षिण में, है भरत क्षेत्र शुभ नाम धरे।
इसमें रजताचल पूर्व सदृश, इक सिद्धकूट जिनधाम खरे।।
छह खंड बीच आरजखंड में, षट्काल परावर्तन होते।
तीर्थंकर आदिक महापुरुष, त्रेसठ चौथे युग में होते।।9।।

श्री विजयमेरु उत्तरदिश में, ऐरावत क्षेत्र कहा जाता।
इसके मधि रजताचल ऊपर, इक शाश्वत जिनगृह सुखदाता।।
इसमें भी काल परावर्तन, बस चौथे में तीर्थंकर हों।
चक्री आदिक त्रेसठ जन सब, चौथे युग में जगमान अहो।।10।।

–घत्ता–

जय जय रूपागिरि, चौंतिस मंदिर, जय जिनवर तुम जयमाला।
जो पढ़े पढ़ावे सो जन पावे, 'ज्ञानमती' श्री गुणमाला।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्रजताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ सर्वजिनबिंबेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. विद्याधर। 2. दशों।

(पूजा नं.14)

विजयमेरु संबंधी षट्कुलाचल जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छंद–

श्री विजयमेरु दक्षिणोत्तर, षट् कुलाचल जानिये।
तिन पूर्व दिश में षट् जिनालय, जैनप्रतिमा मानिये।।
सम्यक्त्व निर्मल हेतु मैं, प्रभु आपको थापूँ यहाँ।
हे नाथ! भक्तों पर कृपा, करके तुरत आवो यहाँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–अडिल्ल छंद–

सुरगंगा को उज्ज्वल नीर भराइये।
आप पूज जन्मादिक ताप मिटाइये।।
षट् कुलपर्वत के जिनगृह जिनबिंब को।
रत्नत्रय निधि हेतु जजों जगवंद्य को।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट गंध वर गंध सुगंधित लाइये।
आप पूज शोकादिक ताप मिटाइये।।षट्.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखंडित सुरभित तंदुल लाइये।
पाप पुंज क्षय हेतू, पुंज चढ़ाइये।।
षट् कुलपर्वत के जिनगृह जिनबिंब को।
रत्नत्रय निधि हेतु जजों जगवंद्य को।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

वकुल केतकी कमल पुष्प बहु लाइये।
भवहर जिनपद पूज, कामशर दाहिये।।षट्.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मालपुआ सोहाल गिंदोड़ा लाइये।
आप चरण को पूज, स्वात्मसुख पाइये।।षट्.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णदीप तम हारि वर्तिका ज्वालिये।
मोहध्वांत नश जाय दीप अवतारिये।।षट्.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सित चंदन मिल धूप, हुताशन में जले।
आप निकट ही दुष्ट, कर्म शत्रू जलें।।षट्.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम बिजौरा श्रीफल पिस्ता थाल में।
फल तुम चरण चढ़ाकर नाऊँ भाल मैं।।षट्.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत सुम चरु दीपक सजे।
धूप फलों में रत्न मिला तुम पद जजें।।
षट् कुलपर्वत के जिनगृह जिनबिंब को।
रत्नत्रय निधि हेतु जजों जगवंद्य को।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

पद्म सरोवर नीर कंचन झारी में भरूँ।
जिनपद धारा देय, भव वारिधि से उत्तरूं।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुवरण पुष्प मंगाय, प्रभु चरणन अर्पण करूँ।
वर्ण गंधरस फास, विरहित निजपद को वरूँ ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

द्वीप धातकी पूर्व में, षट् कुलगिरि जिनधाम।
पूजन हेतू मैं करूं, पुष्पांजलि इत ठाम।।1।।

इति श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

द्वीपधातकी में 'हिमवन गिरि' कांचन कांती धारे।
बीच सरोवर पद्म तास में, कमल मणीमय सारे।।
मध्य कमल पर 'श्रीदेवी' हैं, नग पर कूट सुग्यारे।
पूर्व दिशागत सिद्धकूट पर, जिनपद पूजों सारे।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिहिमवत्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु दक्षिण 'महहिमवन' रजत वर्ण तामें हैं।
महापद्मद्रह मध्य कमल में, 'ह्रीदेवी' यामें हैं।।

नग पर आठ कूट में इक पर, चैत्यालय सुखकारी।
अर्घ्य चढ़ाकर जिनपद पूजें, गुण गावे नर नारी ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिमहाहिमवत्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु दक्षिण 'निषधाचल', तप्त स्वर्ण छवि मोहे।
द्रह तिगिञ्छ तामध्य कमल में, 'धृतिदेवी' अति सोहे।।
गिरि पर हैं नवकूट एक के, सिद्धकूट मंदिर में।
मृत्युजयी श्री जिनप्रतिमा को, पूजत ही सुख क्षण में।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनिषधकुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु उत्तर 'नीलाचल', छवि वैडूर्यमणी है।
बीच केसरी द्रह कमलों में, मध्य 'कीर्तिदेवी' है।।
नवकूटों में सिद्धकूट पर, जिनगृह में जिनप्रतिमा।
अर्घ्य चढ़ाकर जजूँ निरन्तर, भवविजयी जिनप्रतिमा।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिनीलकुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु उत्तर 'रूक्मीगिरि', रजतवर्ण छवि छाजे।
पुण्डरीक द्रह मध्य कमल में, 'बुद्धीदेवी' राजे।।
कूट आठ में सिद्धकूट पर जिनमंदिर मन भावे।
कामजयी जिनप्रतिमा पूजे, इन्द्र देवगण आवें।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिरूक्मिकुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु के उत्तर 'शिखरी', पर्वत कांचन छवि है।
महापुण्डरीकहिं ह्रद कमलों, में, 'लक्ष्मी' निवसत हैं।।
ग्यारह कूट उन्हों में इक पर, जिनवरनिलय बखानो।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, पूजूँ मैं दुःख हानो।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिशिखरिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

षट् कुलगिरि के जिनभवन, रत्नमयी जिनबिंब।
पूर्ण अर्घ्य ले पूजिये, हरो करम अरिदंभ।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिन-बिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबभ्यो नमः।**

जयमाला

–त्रिभंगी छंद–

षट्कुलगिरि मनहर, सबमें सरवर, सरवर में बहु कमल खिले।
कमलनि में सुरगृह, उनमें जिनगृह, पूजत ही मन कमल खिले।।
जय जय जिनप्रतिमा, अंतक हरना, पाप पुंज अंधेर टले।
पाई मैं साता, मेटि असाता, हुआ पुण्य बहु ढ़ेर भले।।1।।

–नाराच छंद–

नमो नमो जिनेश तो पदारविंद भक्ति तें।
मुनीन्द्रवृन्द तोहि ध्याय कर्म कालिमा हने।।
अनाथनाथ! भक्त की सदा सहाय कीजिये।
प्रभो मुझे भवाब्धि तें अबे निकाल लीजिये।।2।।

अनंत ज्ञान दर्श वीर्य सौख्य से सनाथ हो।
अनादि हो अनंत हो प्रसिद्धि सिद्धि नाथ हो।।अनाथ.।।3।।

अनादि मोह वृक्ष के लिये तुम्हीं कुठार हो।
प्रधान राग द्वेष शत्रु के लिये प्रहार हो।।अनाथ.।।4।।

महान रोग शोक कष्ट को महौषधी तुम्हीं।
अनिष्ट योग इष्ट का वियोग दुख हरो तुम्हीं।।अनाथ.।।5।।

तुम्हीं अनेक व्याधि हेतु सर्व श्रेष्ठ वैद्य हो।
तुम्हीं विषापहार मन्त्र हो मणी विशेष हो।।
अनाथनाथ! भक्त की सदा सहाय कीजिये।
प्रभो मुझे भवाब्धि तें अबे निकाल लीजिये।।6।।

महान तेज पुंज हो अनंत सौख्य धाम हो।
असंख्य जीव सौख्य हेतु एक ही प्रधान हो।।अनाथ.।।7।।

हुआ जु कष्ट भक्त पे तबे सहाय तूँ करी।
प्रभो! अबेर क्यों अबे, बताइये इसी घरी ।।अनाथ.।।8।।

मुनीश मानतुंग ने जिनेश! भक्ति तें किया।
तुम्हीं तो नाथ! यतिपपी कि काट दीनि बेड़ियाँ।अनाथ.।।9।।

तुम्हें हि ध्याय अग्नि कुण्ड में गिरी थी जानकी।
हुआ अपार नीर औ खिले सरोज भी तभी।।अनाथ.।।10।।

तुम्हें सुध्याय लाख गेह माहिं पांडवा सभी।
सुरंग मार्ग से बचे न अग्नि भी जला सकी।।अनाथ.।।11।।

मनोवती जु आप ध्याय आप दर्श पा लिया।
तुम्हें ही ध्याय द्रौपदी ने शील रत्न राखिया।।अनाथ.।।12।।

मनोरमा ने आप ध्याय वज्र द्वार खोलिया।
तुम्हें हि ध्याय अंजना ने सर्व कष्ट धो लिया।।अनाथ.।।13।।

गिनाऊँ मैं कहाँ तके अनन्त जीव राशि को।
सु आपके प्रताप वे तिरे भवाम्बु राशि को।।अनाथ.।।14।।

अनंत तीर्थ आप पाद के तले कहें मुनी।
इसी निमित्त आप की सहाय चाहते मुनी।।अनाथ.।।15।।

सुज्ञानमती मो करो निजैक संपदा भरो।
अनंत दुःख सिंधु से निकाल मुक्ति में धरो।। अनाथ.।।16।।

–घत्ता–

अकृत्रिम जिननाथ तनी यह वर जयमाला।
मन वच काय लगाय पढ़ें जो भव्य त्रिकाला।।
ऋद्धि सिद्धि भरपूर रहे ताके घर माहीं।
'ज्ञानमती' वर बुद्धि भरें नव निद्धि सदा ही।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलसंस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.15)

अचलमेरु जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–रोला छंद–

(चाल-अहो जगत गुरुदेव....)

द्वीपधातकी खंड, अपर दिश मध्य सुहानो।
मेरु अचल महान, सोलह जिनगृह मानो।।
चउरासी सुहजार, योजन तुंग कहा है।
जिनवर के अभिषेक, जल से शुद्ध कहा है।।1।।

–सोरठा–

सोलह मंदिर माहिं , जिनप्रतिमा को पूजने।
आह्वानन विधि सार, करके मैं थापूं यहाँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–चाल–

जिन पूजो रे भाई, भला, जिन पूजो रे भाई।
यह नर भव उत्तम पाय के, जिन पूजो रे भाई।।टेक.।।

सुर सरिता को उज्ज्वल जल ले, मणिमय झारी भरिये।
जन्म जरा मृत्यू त्रय दुख हर जिनपद धारा करिये।।
अचलमेरु सोलह जिनमंदिर, जिनवर पूजन करिये।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुःखों को हरिये।।अचल.।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी केशर चंदन घिस, लाय कटोरी भरिये।
जिनपद पंकज चर्चन करते, भव भव ताप कुं हरिये।अचल.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

श्यामजीर तंदुल मुक्तासम, सुन्दर धोय सु लावो।
पाप पुंज के नाशन हेतू, जिन ढिग पुंज रचावो।।अचल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

हरसिंगार चमेली चंपा, सुरतरु सुमन सु लीजे।
कामबाण के नाश करन को, जिन पद पूजन कीजे।।अचल.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खुरमा खाजे पूड़ी पापड़, हलुआ खीर सु लाओ।
क्षुधा पिशाची नाशन हेतू, जिनवर पूज रचावो।।अचल.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप प्रकाशे भ्रमतम नाशे, ज्योति उद्योत करे है।
दीपक से जिनपद पूजत ही, मोह अंधेर टरे है।।अचल.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर कृष्णागरु चंदन, मिश्रित धूप बनावो।
धूपायन में खेवत प्रभु ढिग, कर्मन राशि जलावो।।अचल.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सेव संतरा कमरख किसमिस, लवंग सुपारी लावो।
वीतराग जिनबिंब जजत ही, शिवरमणी को पावो।।अचल.।।8।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत सुम चरुवर, दीप धूप फल लाके।
सुर नर वंदित जिनप्रतिमा को, अर्घ्य चढ़ाऊँ आके।अचल.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुंजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अचलमेरु के भद्रसाल वन जिनालय पूजा

–सोरठा–

अचल मेरु भूभाग, भद्रसाल वन सोहना।
ताके चउ दिश चार, जिनगृह पूजूँ भाव सो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनचैत्यालयस्थजिनबिंब समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनचैत्यालयस्थजिनबिंब समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनचैत्यालयस्थजिनबिंब समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–सोरठा–

प्रासुक नीर सुलेय, जिनपद पंकज धार दे।
अचलमेरु के चार, भद्रशाल जिनगेह में।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर गंध घिसाय, जिनपद पंकज पूजहूँ।
अचलमेरु के चार, भद्रसाल जिनगेह में ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ताफल उन्मान, अक्षत पुंज रचाइये।
अचलमेरु के चार, भद्रसाल जिनगेह में ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित पुष्प गुलाब, लाय जजों जिनपद कमल।
अचलमेरु के चार, भद्रसाल जिनगेह में ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पायस मोदक आदि, लेकर जिनपद पूजहूँ।
अचलमेरु के चार, भद्रसाल जिनगेह में ।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर कर्पूर जलाय, दीपक से जिन पूजहों।
अचलमेरु के चार, भद्रसाल जिनगेह में ।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशविध धूप बनाय, अग्नि माहिं खेऊँ सदा।
अचलमेरु के चार, भद्रसाल जिनगेह में ।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नींबू आम अनार, फल लें जिनवर पद जजों।
अचलमेरु के चार, भद्रसाल जिनगेह में ।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसुविध अर्घ्य बनाय, जिनपद पूजूँ भाव सों।
अचलमेरु के चार, भद्रसाल जिनगेह में ।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुंजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्री जिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

स्वपर भेद विज्ञान को, कारण वारण मोह।
जिनपद पुष्पांजलि करूँ, पूजत सुख संदोह।।1।।

इति श्रीअचलमेरुस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–अडिल्ल छंद–

अचलमेरु पूरब दिश, जिनगृह जानिये।
इंद्रादिक से पूज्य, जिनेश्वर मानिये।।
भद्रसाल जिनगृह को, अर्घ्य चढ़ाय के।
संयम लब्धी हेतु जजों गुण गाय के।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनपूर्वदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु दक्षिण दिश, जिन आलय कहा।
सुरपति अर्चा करें सदा जाकर वहाँ ।।भद्रशाल.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनदक्षिणदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु पश्चिम दिश, मंदिर मन हरे।
चारण ऋषिगण जाय, अतुल भक्ती करें।।

भद्रसाल जिनगृह को, अर्घ्य चढ़ाय के।
संयम लब्धी हेतु जजों गुण गायके।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनपश्चिमदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु उत्तर दिश जिनगृह सासता[1]।
रत्नों की प्रतिमा, से अनुपम भासता।।भद्रशाल.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनउत्तरदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–दोहा–

अचलमेरु के जिनभवन, भद्रसाल में चार।
पूर्ण अर्घ्य से पूजहूँ, चहुँगति दुख को टार।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के नंदनवन की पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

अचलमेरु नंदनवनी, चउ दिश में जिनगेह।
जिनवर प्रतिमा थापहूँ, यहाँ भक्ति वर नेह।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनन्दनवनस्थितसर्वजिनालयस्थजिनबिंब-समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनन्दनवनस्थितसर्वजिनालयस्थजिनबिंब-समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनन्दनवनस्थितसर्वजिनालयस्थजिनबिंब-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

1. अनादि अनंत।

–अथाष्टकं–सुन्दरी छन्द–

पद्म सरवर को जल लाइये।
जिन पदांबुज धार कराइये।।
अचलमेरू नंदनवन मही।
चउ दिशी जिनगृह पूजो यहीं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभि केशर चंदन घिस लिया।
जिन पदांबुज को चर्चन किया।।अचल.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशिकिरण सम अक्षत लाय के।
जिन पदांबुज पूज रचाय के।।अचल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभि चंपक बेला चुन लिये।
जिन पदांबुज में अर्पण किये।।अचल.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृतमयी पकवान बनाय के।
चरु जिनेश्वर पाद चढ़ाय के।।अचल.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत भरे दीपक जगमग जले।
जिन पदांबुज पूजत अघ टले।।अचल.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभि धूप सुकृष्णागरु महा।
धूप दह में खेवत अघ दहा।।
अचलमेरू नंदनवन मही।
चउ दिशी जिनगृह पूजो यहीं।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल अनार बिजौरा लाय के।
जिन जजों शिव आश लगाय के।।अचल.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलफलादिक अर्घ्य बनाय के।
फल अनूपम हेतु चढ़ाय के।।अचल.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुँजग शांतीहेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

भव अनंत अघराशि को, क्षण में भस्म करंत।
अग्नि कणी सम जिनयजन[1], पूजो भव्य तुरंत।।1।।

इति श्रीअचलमेरुनंदनवनस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलि क्षिपेत्।

1. जिनपूजा।

–नरेन्द्र छंद–

अचलमेरु के नंदनवन में, पूर्व दिशी जिन गेहा।
निज आतम अनुभव रस स्वादी, मुनिगण नमत सनेहा।।
नीरादिक वसुद्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाऊँ आके।
निज आतम समरस जल पीकर, बसूँ मोक्षपुर जाके।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयस्थसर्वजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु नंदनवन दक्षिण, सुरवंदित जिनधामा।
इंद्रिय सुख त्यागी वैरागी, यति वंदें निष्कामा[1]।।नीरादिक.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनदक्षिणदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धातम ध्यानी मुनि ज्ञानी, जिन का ध्यान धरे हैं।
अचलमेरु नंदन पश्चिम दिश, जिनगृह पाप हरे हैं।। नीरादिक.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनपश्चिमदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के नंदनवन में, उत्तर दिश जिनगृह हैं।
समरस निर्झर जल अवगाही, गणधरगण वंदत हैं।।नीरादिक.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनउत्तरदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

अचलमेरु नंदनवन चउदिश, चार जिनालय सोहें।
रतनमयी जिनबिंब मनोहर सुरनर खग मन मोहें।।नीरादिक.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

1. इच्छारहित।

अचलमेरु की सौमनसवन पूजा

अथ स्थापना

–दोहा–

अचलमेरु वन सौमनस, चार जिनालय सिद्ध।
आह्वानन विधि से यहाँ, पूजूँ शाश्वत सिद्ध।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सिन्नधीकरणम्।

–अडिल्ल छन्द–

काल अनादी से, तृष्णा दुख देत है।
तास निवारण हेतु, नीर शुचि लेत हैं।।
अचलमेरु सौमनस चार जिनधाम हैं।
अकृत्रिम जिनबिंब, जजूँ सुख धाम हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भव के संताप, निवारण कारने।
मलयागिरि घनसार सुचंदन पावने।।अचलमेरु.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

देवजीर तंदुल मोती सम धवल हैं।
मुनिवर शुक्ल ध्यान सम, अतिशय अमल हैं।।अचलमेरु.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण वर्ण के सुवरण, पुष्प मंगायके।
कामबाण नश जाय, चढ़ाऊं आय के।।
अचलमेरु सौमनस चार जिनधाम हैं।
अकृत्रिम जिनबिंब, जजूँ सुख धाम हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

फेनी गूझा मधुर इमरती लाय के।
क्षुधारोग हर जिनवर, निकट चढ़ाय के।। अचलमेरु.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण पात्र में घृत भर दीप जलाइया।
चहुंदिश करें प्रकाश आप ढिग लाइया।।अचलमेरु.6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशांगी अग्नि संग में जारिया।
दश दिश सुरभित करें, दुष्ट अघ जारिया।।अचलमेरु.।।7।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता काजू किसमिस, खारिक ले भले।
आप चरण को पूजत, सब कलिमल दले।।अचलमेरु.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलफल आदिक द्रव्य, मिलाकर ले लिये।
जिनपद अर्पूं अर्घ्य, अनघपद[1] के लिये।।अचलमेरु.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. निर्दोष पद

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुँजग शांतीहेत।।10।।

शांतेय शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–

–सोरठा–

शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, जिनवर प्रतिमा मैं जजूँ।
निज आतम कर शुद्ध, पाऊँ परमानंद मैं।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–दोहा–

अचलमेरु वन सौमनस, पूरब दिश जिनधाम।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं जजूँ, सिद्ध करो सब काम।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु सौमनस के, दक्षिण दिश जिनगेह।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजहूँ, करो हमें गतदेह[1]।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनदक्षिणदिशिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु सौमनस के, पश्चिम जिनगृह सिद्ध।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं जजूँ, करूँ मोह अरि बिद्ध।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनपश्चिमदिशिजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. अशरीरी सिद्ध पद।

अचलमेरु सौमनस के, उत्तर जिनगृह सार।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजहूँ, होऊँ भवदधि पार।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनउत्तरदिशिजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–सोरठा–

चार जिनेश्वर गेह, अचलमेरु सौमनस के।
पूरण अर्घ्य चढ़ाय, मैं नित प्रति पूजा करुँ।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

अचलमेरु पांडुकवन पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

अचलमेरु पांडुक वनी चार जिनालय जान।
थापूँ जिनप्रतिमा सकल, करे सकल दुख हान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथाष्टक–नरेन्द्र छन्द–

पद्म सरोवर को जल उज्ज्वल, सुवरण भृंग भरावो।
पांडुकवन की जिनप्रतिमा को, पूजत पाप नशावो।।
अचलमेरु के पांडुकवन में, चार भवन मनहारी।
मनपर्यय ज्ञानी मुनि वंदें, तिनको धोक हमारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी केशर घिस चंदन, दाह निवारण काजे।
जिनवर पद की पूजन करते कर्म अरी डर भाजें।।
अचलमेरु के पांडुकवन में, चार भवन मनहारी।
मनपर्यय ज्ञानी मुनि वंदें, तिनको धोक हमारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

देवजीर सुखदास अखण्डित, अक्षत धोकर लाये।
ज्ञान अखंड करन के हेतू, जिनपद पुंज रचाये।।अचल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरतरु सम सुरभित फूलों से, जिनपद पूजो भाई।
आनंद कंद चिदानंद अनुपम, सुख पावो अधिकाई।।अचल.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कुण्डलनी[1] बरफी रसगुल्ला, दालमोठ भर थाली।
जिनवर चरणों पूजन करते, रोग क्षुधा परिहारी।।अचल.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग जगमग दीपशिखा यह पाप तिमिर हरणारी।
जिनवर सन्मुख करत आरती, भव आरत परिहारी।।अचल.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप सुगंधित खेय अग्नि में, महक उठी चहुं दिश में।
आतमगुण की सौरभ फैली, जिन पूजत दश दिश में।।अचल.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जलेबी।

एला केला अनन्नास औ, श्रीफल सरस मंगाये।
मोक्ष महाफल पावन हेतू, जिनपद निकट चढ़ाये।।
अचलमेरु के पांडुकवन में, चार भवन मनहारी।
मनपर्यय ज्ञानी मुनि वंदें, तिनको धोक हमारी।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत माला चरु, दीप धूप फल लाके।
अर्घ्य चढ़ाऊँ वाद्य बजाऊँ, पुनि वंदूँ शिर नाके।।अचल.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यःअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगन्ध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुंजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

रागद्वेष मद मोह को, नाशे जिनवर भक्ति।
पुष्पांजलि कर पूजते, मिले निजातम शक्ति।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–चौपाई–छंद–

अचलमेरु पांडुकवन जान, पूरब दिश जिननिलय[1] महान।
अकृत्रिम जिनबिंब महान, अर्घ्य चढ़ाय करूँ गुणगान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जिनमंदिर।

अचलमेरु पांडुकवन नाम, दक्षिण दिशि अनुपम जिनधाम।
अकृत्रिम जिनबिंब महान, अर्घ्य चढ़ाय करूँ गुणगान।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितदक्षिणदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु पांडुकवन कहा, पश्चिम दिश जिनमंदिर रहा।
अकृत्रिम जिनबिंब महान, अर्घ्य चढ़ाय करूँ गुणगान।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितपश्चिमदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु पांडुकवन सही, उत्तर दिशि जिनगृह सुख मही।
अकृत्रिम जिनबिंब महान, अर्घ्य चढ़ाय करूँ गुणगान।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितउत्तरदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

अचलमेरु पांडुकवन माहिं, चारों दिश जिनभवन कहाहिं।
अकृत्रिम जिनबिंब महान, पूर्ण अर्घ्य ले अर्पूं आन।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपांडुकवनसर्वजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

जय जय श्री जिन गेह, स्वयं सिद्ध जिनबिंब सब।
जय जय मंगल देह, गाऊँ तुम जयमालिका।।1।।

–रोलाछंद–

श्री जिनभवन विशाल, लंबे चउ सौ कोसा।
चौड़े दो सौ कोस, तुंग तीन सौ कोसा।।

दोय कोस की नींव, ऐसे श्री जिनधामा।
आदि अंत से शून्य, सुख देते अभिरामा।।2।।

पूर्व दिशा मुख द्वार, चौंसठ कोस ऊँचाई।
विस्तृत बत्तिस कोस, तोरण संयुत भाई।।
उत्तर दक्षिण द्वार, इनसे आधे जानो।
मरकत मणिमय द्वार, रत्नन खंभ बखानो।।3।।

स्फटिकमणी दीवाल, चित्र विचित्र सुहावें।
चंद्रोपक चंवरादि, मोतीमाल रहावें।।
गर्भगेह के माहिं, देवच्छन्द बखाना।
ऊँचा बत्तिस कोस, विस्तर सोलह माना।।4।।

भद्रसाल जिनगेह, अरु नंदन के जानो।
यही कहा परिमाण, जिन आगम सरधानो।।
इससे आधा मान, सौमनसं जिनगेहा।
उससे आधा जान, पांडुकवन जिनगेहा।।5।।

लटकें फूलन माल, रतनमयी मालायें।
दर्पण झारी कुंभ, बहुविध वर्ण ध्वजायें।।
देवछन्द के मध्य, सिंहासन मनहारी।
इक सौ आठ महान, स्फटिकमणी के भारी।।6।।

उन पर श्री जिनबिंब, अकृत्रिम अविनाशी।
दो हजार वर हाथ, ऊँचे अनुपम भासी।।
इंद्र नीलमणि केश, सिर पर शोभ रहे हैं।
फटिक नीलमणि नेत्र, धवल रु कृष्ण कहे हैं।।7।।

पल्लव सम अधरोष्ठ, दंत सु वज्रमयी हैं।
हीरे की नखपंक्ति, कर पग शोभ रही हैं।।
कमल फूल सम लाल, हाथ रु पैर सुशोभें।
एक हजार सु आठ, व्यंजन तन में शोभें।।8।।

बत्तिस लक्षण युक्त, जिनवरबिंब अनूपा।
उनके गुण का गान, कर न सके सुरभूपा।।
जिह्वा युगल हजार, धर करके धरणीन्द्रा।
लाखों कोड़ाकोड़ि, मिलकर सभी फणीन्द्रा।।9।।

जिनप्रतिमा गुण रूप, वर्णन नहिं कर पावें।
शक्ति बुद्धि से हीन, हम किस विध गुण गावें।।
तुम स्तुति की शक्ति, मुझमें किंचित नाहीं।
यही कथन ही नाथ! तव स्तुती कहाहीं।।10।।

पांडुक विदिशा माहिं, पांडुक आदि शिलायें।
तीर्थंकर अभिषेक, जल से तीर्थ कहायें।।
द्वीप धातकी अपर, जन्में जे तीर्थेशा।
तिनका ही अभिषेक, करते देव सुरेशा।।11।।

–दोहा–

तुम गुण गरिमा अगम है, कोई न पावें पार।
फिर भी गुण लव कहत ही, 'ज्ञानमती' भव पार।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.16)

अचलमेरु सम्बंधि गजदंत जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–शम्भु छंद–

श्री अचलमेरु की विदिशा में, चारों गजदंत बखाने हैं।
उन पर श्रीजिनमंदिर अनुपम, श्री जिनप्रतिमा युत माने हैं।।
निज चिच्चैतन्य सुधारस के, आस्वादी उनको वंदे हैं।
उन प्रतिमा का आह्वानन कर, हम नित पूजें आनंदे हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–

सुर सरिता का उज्ज्वल जल ले, कंचन झारी भर लाया हूँ।
भव भव की तृषा बुझाने को, त्रय धारा देने आया हूँ।।
श्री अचलमेरु गजदंताचल, जिनवर गृह में जिनप्रतिमा हैं।
जो जन मन से पूजें ध्यावें वे पावें मुक्ति अनुपमा हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

वर अष्टगंध सुरभित लेकर, तुम चरण चढ़ाने आया हूँ।
भव भव संताप मिटाने औ, समतारस पीने आया हूँ।।श्री.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि किरणों सम उज्ज्वल तंदुल, धोकर थाली भर लाया हूँ।
निज आतम गुण के पुंज हेतु, यहँ पुंज चढ़ाने आया हूँ ।।
श्री अचलमेरु गजदंताचल, जिनवर गृह में जिनप्रतिमा हैं।
जो जन मन से पूजें ध्यावें, वे पावें मुक्ति अनुपमा हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुवलय[1] बेला वर मौलसिरी, मचकुंद कमल ले आया हूँ।
शृंगारहार कामारिजयी, जिनवरपद यजने आया हूँ।।श्री.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोदकफेनी घेवर ताजे पकवान बनाकर लाया हूँ।
निज आतम अनुभव चखने को, नैवेद्य चढ़ाने आया हूँ।।श्री.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक ज्योती के जलते ही, अज्ञान अंधेरा भगता है।
इस हेतू से दीपक पूजा, करते ही ज्ञान चमकता है।।श्री.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन में वर धूप खेय, दशदिश में धूम उठे भारी।
बहु जनम जनम के संचित भी, दुखकर सब कर्म जलें भारी।।श्री.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर आम्र बिजौरा नींबू औ, गन्ना मीठा ले आया हूं।
शिवकांता सत्वर वरने की, बस आशा लेकर आया हूं।।श्री.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1.लाल कमल।

जल चंदन अक्षत फूल चरू, वर दीप धूप फल लाया हूँ।
तुम चरणन अर्घ्य चढ़ाकर के, भव संकट हरने आया हूँ।।
श्री अचलमेरु गजदंताचल, जिनवर गृह में जिनप्रतिमा हैं।
जो जन मन से पूजें ध्यावें, वे पावें मुक्ति अनुपमा हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्रीजिनचरण सरोज, धारा देते भव मिटे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरतरु के सुम लेय, प्रभु पद में अर्पण करूँ।
कामदेव मद नाश, पाऊँ आनंद धाम मैं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

अचलमेरु विदिशा विषे, कहे चार गजदंत।
तिनके चारों जिनभवन, पूजन हेतु नमंत।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसंबंधिगजदंतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

राग भरतरी (ते गुरु मेरे मन बसो)

मैं नित पूजूँ भाव सो, अचलमेरु गजदंत।
भव वारिधि नौका कहें, तिनपे श्री भगवंत।।टेक.।।
मेरु दिशा आग्नेय में, सौमनस्य शुभ नाम।
सात कूट युत रौप्यमय, इक में श्री जिनधाम।।मैं नित.।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिआग्नेयदिक्सौमनस्यगजदन्तसिद्धकूटजिना-लयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर गिरि नैऋत्य कोण में, विद्युत्प्रभ शुभजान।
इक जिनगृह नव कूट में, तप्त कनक छवि मान।।

मैं नित पूजूँ भाव सो, अचलमेरु गजदंत।
भव वारिधि नौका कहें, तिन पे श्री भगवंत।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनैऋत्यदिग्विद्युत्प्रभगजदन्तसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध मादनाचल कहा, मेरु तने वायव्य।
सात कूटयुत कनकद्युति, जिनगृह पूजें भव्य।।मैं नित.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिवायव्यदिग्गंधमादनगजदन्तसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर नग कोण इशान में, माल्यवान नीलाभ।
नव कूटों में एक है, जिनमंदिर रत्नाभ ।।मैं नित.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिईशानदिग्माल्यवंतगजदन्तसिद्धकूटजिनालयस्थ जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्यं–

अचलमेरु के चार हैं, नागदंत अभिराम।
चारों के जिनगेह को, मैं नित करूँ प्रणाम।।मैं नित.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–*ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।

जयमाला

जय जय शाश्वत श्री सिद्धकूट, गजदंताचल पर सुन्दर हैं।
जय जय उन सब में रत्नमयी, जिनप्रतिमा जजत पुरंदर हैं।।
जय जय जन जिनका नाम मंत्र, लेकर भव वारिधि तिरते हैं।
जय जय उन अकृत्रिम जिन की, अब हम जयमाला करते हैं।।1।।

नग सौमनस्य अरु विद्युत्प्रभ, मेरू निषधाचल छूते हैं।
तीजे चौथे गजदंत अचल, मेरू नीलाचल छूते हैं।।
नग माल्यवान के बीच गुफा, उससे सीता नदि आती है।
विद्युत्प्रभ गिरि की गुफा द्वार से, सीतोदा नदि जाती है।।2।।

इन गिरि के तल औ ऊपर में, चउ तरफ कही तट वेदी हैं।
प्रत्येक कूट औ मंदिर के, चारों तरफी तट वेदी हैं ।।
तट वेदी में सुन्दर उपवन, बहुविध फल फूल खिले उनमें।
पक्षीगण कल कलरव करते, बहु सुरभित पवन चले उनमें।।3।।

बावड़ियां कमल सहित शोभें, बहु रत्नों के सुरभवन बने।
सुर अप्सरियां खग खेचरनी, क्रीड़ा करतीं मन मुदित घने।।
पर्वत पर चारण ऋषिगण भी, नित विहरण करते दीखे हैं।
शुद्धातम ध्यानारूढ़ कहीं, समरसमय अमृत पीते हैं।।4।।

वर्णादि सहित यह पुद्गल है, इससे सम्बन्ध नहीं मेरा।
यह तन भी मुझसे पृथक् कहा, इससे संश्लेष नहीं मेरा।।
इक मोहराज ही इस जग में, बहुविध के नाच नचाता है।
जो पर से निज को पृथक् किये, उसका जग में क्या नाता है।।5।।

इन मिथ्या भ्रांति अविद्या ने, मुझको इस तन में घेरा है।
सम्यक् विद्या के होते ही, मिटता भव भव का फेरा है।।
रागादि भाव भी औपाधिक, वे भी जब मुझसे भिन्न कहे।
फिर धन गृह सुत मित्रादिकजन, वे तो बिल्कुल ही पृथक् रहें।।6।।

हे नाथ! आपकी भक्ती से, मुझमें वह शक्ती आ जावे।
मैं पर से निज को भिन्न करूँ, यह सम्यक् युक्ती आ जावे।।
चैतन्य चमत्कारी आत्मा चिंतामणि कल्पतरू निधि ही।
मैं उसमें ही बस रम जाऊँ, समरस पीयूष पिऊँ नित ही।।7।।

दुख इष्ट वियोग अनिष्ट योग, भय शोकादिक का भान न हो।
केवल सुख दर्शन ज्ञानवीर्य धारी आत्मा का ध्यान रहो।।

परमानंदामृत निर्झर में, स्नान करूँ मल धो डालूँ।
अपने अनन्तगुण पुंजरूप, शिवपद साम्राज्य तुरत पालूँ।।8।।

इतनी ही आशा लेकर मैं, हे नाथ! शरण में आया हूँ।
अब किंचित् भी ना देर करो, भव भव दुख से अकुलाया हूँ।।
बहु जन्म अनंतों में संचित, अब संचय शीघ्र समाप्त करो।
भगवन् ! 'सुज्ञानमती' लक्ष्मी, देकर अब मुझे कृतार्थ करो।।9।।

–दोहा–

सिद्ध सदृश निज को समझ, जो मन करे विशुद्ध।
निश्चय को व्यवहार से, साध्य करें पुन शुद्ध।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थसर्वजिनबिबेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.17)

अचलमेरु सम्बंधि धातकी वृक्ष शाल्मली वृक्ष जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–हरिगीतिका छंद–

(चाल–सम्मेदगढ़ गिरनार....)

वरद्वीप धातकि में अपरदिश, बीच सुरगिरि अचल है।
ताके विदिश ईशान में, शुभ धातकी द्रुम अतुल है।।
सुरगिरी के नैऋत्य शाश्वत, शाल्मली द्रुम सोहना।
द्वय वृक्ष शाखा पर जिनालय, पूजहूँ मन मोहना ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीद्वयवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीद्वयवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीद्वयवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–

जय अमल ले जिनपाद पूजूँ, कर्म मल धुल जायेगा।
आत्मीक समता रस विमल, आनंद अनुभव आयेगा।।
पृथ्वीमयी दो वृक्ष के, जिनगेह मणिमय मूर्तियाँ।
जयवंत होवें नित्य ही, चिन्तामणी जिनमूर्तियाँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन सुगंधित ले जिनेश्वर, पद जजूँ आनन्द से।
स्वात्मानुभव आल्हाद पाकर, छूटहूँ जग द्वन्द से।।

पृथ्वीमयी दो वृक्ष के, जिनगेह मणिमय मूर्तियां।
जयवंत होवें नित्य ही, चिंतामणी जिनमूर्तियां।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदाकिरण सम धवल तंदुल, पुंज जिन आगे धरूँ।
वर धर्म शुक्ल सुध्यान निर्मल, पाय आतम निधि वरूँ।।पृथ्वी.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार चंपक पुष्प सुरभित, लाय जिनपद पूजते।
निज आत्मगुण कलिका खिले, जन भ्रमर तापे गूंजते।।पृथ्वी.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोदक पुआ बरफी इमरती, लाय जिन सन्मुख धरें।
आत्मैकरस पीयूष मिश्रित, अतुल आनंद भव हरे।।पृथ्वी.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक शिखा उद्योतकारी, जिन चरण में वारना।
अज्ञान तिमिर हटाय अंतर, ज्ञानज्योती धारना।।पृथ्वी.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध धूप मंगाय स्वाहा[1] नाथ को अर्पण किया।
वसु कर्म स्वाहा हेतु ही, निज आत्म को तर्पण किया।।पृथ्वी.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर आम अनार गन्ना, लाय जिन पूजा करूँ।
वर मोक्ष फल की आश लेकर, कर्म कंटक परिहरूं।।

1. अग्नि।

पृथ्वीमयी दो वृक्ष के, जिनगेह मणिमय मूर्तियां।
जयवंत होवें नित्य ही, चिंतामणी जिनमूर्तियां।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प नेवज, दीप धूप फलादि ले।
जिन कल्पतरु पूजत मनोवांछित सकल फल झट मिलें।।पृथ्वी.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर, कंचन झारी में भरा।
जिनपद धारा देत, शांति करो सब लोक में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल वकुल अरविंद, सुरभित फूलों को चुने।
जिनपद पंकज अर्प्य, यश सौरभ चहुंदिश भ्रमे।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

अचलमेरु ईशान, वृक्ष आंवले सम कहा।
नैऋत शाल्मलि जान, जिनगृह पूजूँ पुष्प ले।।1।।

इति श्रीअचलमेरुधातकीशाल्मलिवृक्षस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–हरिगीतिका–

इस धातकी तरु उत्तरी, शाखा विषे जिनगृह महा।
देवाधिदेव जिनेन्द्र की, प्रतिमा रतनमयि है वहां।।
सुरभित पवन प्रेरित जिनालय, मणि ध्वजा नित फरहरें।
वर अर्घ्य लेकर पूजते ही, कर्म शत्रू थर हरें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरोरीशानकोणे धातकीवृक्षजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तरु शाल्मली की दक्षिणी, शाखा उपरि जिन धाम है।
मृत्युंजयी जिनदेव की, प्रतिमा वहां अभिराम है।।
सुरभित पवन प्रेरित करें, जिनगृह ध्वजा नित फरहरें।
वर अर्घ्य लेकर पूजते ही, कर्म शत्रू थर हरें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरोर्नैऋत्यकोणेशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य दोहा–

अचलमेरु के द्वय तरू, धातकि शाल्मलि जान।
दोनों के जिनगेह को, अर्घ्य चढ़ाऊँ आन।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

जय जय अकृत्रिम जिनभवन, अघहरण जग चूड़ामणी।
जय जय अकृत्रिम जिनप्रतिम, सब मूर्तियां चिन्तामणी।।
जय जय अनादि अनन्त अनुपम, त्रिभुवनैक शिखामणी।
जय मोह अहि के विष प्रहारण, नाथ! तुम गारुत्मणी।।1।।
सुरगिरि अचल उत्तर दिशी, उत्तर कुरू है भोगभू।
तहँ धातकी तरु थल वृहत् , पे वेदिका अरु पीठ जू।।
राजत उतुङ्ग महा मनोहर, मणिमयी ये तरु हरे।
उन पे अकृत्रिम जिनसदन, मेरे सकल कलिमल हरें।।2।।

तरु चार दिश की चार शाखा, मुख्य हैं उन एक में।
जिनगृह अकृत्रिम शोभता, सुरगृह बने हैं तीन में।।

1. सर्प के विष को दूर करने वाली गरूड़मणी।

इनमें सदा व्यंतर रहें, सम्यक्त्व रत्नों युत भने।
परिवार तरु अगणित कहे परिवार सुर उन पे घने।।3।।

फल मणिमयी है आंवले सम पत्तियाँ मरकतमणी।
कोंपल पदममणि के बने, बहु फूल नाना वर्णनी।।
सब देवगृह में भी सदा, जिनधाम अनुपम राजते।
उनकी करें जो वन्दना, सब पाप क्षण में नाशते।।4।।

जिनराज सिंहासन रतन मणियों जडित अति सोहना।
त्रय छत्र में मोती लटकते, शशिकिरण सम मोहना।।
चौंसठ युगल सुर हाथ में, चामर लिये हैं भाव से।
वर आठ मंगल द्रव्य सब, जिनराज सन्निध भासते।।5।।

बहु देव देवी अप्सरायें, इन्द्रगण भी आवते।
जिनवन्दना गुणगान पूजत, करत शीश नवावते।।
संगीत बाजें विविध बजते, किंकणी घंटा घने।
वीणा बजाते नृत्य करते, ताल दे देकर घने।।6।।

खेचर युगलिया भक्ति से, जिनवंदना करते वहां।
नर नारियां भूचर सदा, विद्या के बल फिरते वहां।।
आकाशगामी ऋद्धि से, ऋषिगण वहां विचरण करें।
जिनवंदना से बहु जनम के, पाप तत्क्षण परिहरें।7।।

गणधर सुव्रतधर चक्रधर, हलधर गदाधर सर्वदा।
श्रुतधर अशनिधर कुलधरा, जिनभक्ति करते शर्मदा।।
अध्यात्म योगी वीतरागी, शुद्ध आतम ध्यावते।
वर निर्विकल्प समाधिरत, हो परम आनन्द पावते।।8।।

मैं भक्ति श्रद्धा भाव से, हे नाथ! तुम शरणा लिया।
बस मृत्यु मल्ल पछाड़ने को, तुम निकट धरना दिया।।
हे भक्त वत्सल ! दीनबन्धू! कृपा मुझ पर कीजिये।
हे नाथ! अब तो मुझे, केवल 'ज्ञानमति' श्री दीजिये।।9।।

–दोहा–

शाश्वत श्री जिनगेह के, स्वयं सिद्ध जिनबिंब।
मन वच तन से पूजहूँ, झड़े कर्म कटु निंब।।10।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ जिनबिंबेभ्यो जलमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.18)

अचलमेरु सम्बंधि षोडश वक्षारगिरि जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–अडिल्ल छंद–

अचलमेरु के पूर्व, अपर दिश जानिये।
सोलह गिरि वक्षार, कनकमयि मानिये।।
इनके सोलह जिनगृह, शाश्वत सोहने।
जिनप्रतिमा को यहां, जजूँ अघ को हने।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टक–(चाल-नंदीश्वर पूजा)

गंगादिक निर्मल नीर, बाहर मल धोवे।
जिन चरणों धारा देत, अंतर मल धोवे।।
सोलह वक्षार गिरीन्द्र, तिन पर जिनधामा।
उनमें श्री जिनबर बिंब, पूजूँ तज कामा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर कर्पूर घिसाय तन की ताप हरे।
जिनपद में गंध चढ़ाय, भव आताप हरे ।।

सोलह वक्षार गिरीन्द्र, तिन पर जिनधामा।
उनमें श्री जिनबर बिंब, पूजूँ तज कामा।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोती सम अक्षत श्वेत, बहु मंगलकारी।
जिन सन्मुख पुंज चढ़ाय, अक्षय सुखकारी।।सोलह.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला मचकुंद गुलाब, दशदिश गंध भरे।
जिनचरणन पुष्प चढ़ाय, भव शर नष्ट करें।।सोलह.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पायस ओदन वटकादि, कुछ क्षण भूख हरे।
चरु से जिनवर पद पूज, भूख समूल हरे।।सोलह.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नन के दीप प्रकाश, बाहर तम नाशें।
दीपक से जिनपद पूज, निज अंतर भासे।।सोलह.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध विमिश्रित धूप, अग्नी संग जले।
जिन सन्मुख खेवत आय, बहुविध कर्म जले।।सोलह.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला दाडिम खर्बूज, मन की तुष्टि करें।
जिन सन्मुख पूज रचाय, आतम पुष्टि करें।।

सोलह वक्षार गिरीन्द्र, तिन पर जिनधामा
उनमें श्री जिनबर बिंब, पूजूँ तज कामा।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन आदिक लाय, अर्घ्य चढ़ावत हैं।
जिन पद में अर्घ्य चढ़ाय, निजपद पावत हैं।। सोलह.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सीता नदी सुनीर, जिनपद पंकजधार दे।
वेग हरुं भवपीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पर अरविंद, पूजत ही सुख संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

अचलमेरु के पूर्व, पश्चिम दोनों तट विषें।
सोलह गिरि वक्षार, पुष्पांजलि कर पूजहूँ।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

राग भरतरी (ते गुरु मेरे उर बसो.....)

मैं जिनपद पूजूँ सदा, मन वच काय लगाय।
वंदत नव निधि संपदा, अतिशय मंगल थाय।।टेक।।
सीतानदि उत्तर तटे, 'चित्रकूट' वक्षार।
ता गिरि पे इक जिनभवन, अविनाशी अविकार।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पद्मकूट' वक्षार है, कांचन की द्युति जान।
ताके जिनमंदिर विषे, जिनवर बिंब महान।।मैं जिनपद.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिनकूट' वक्षार है, ता गिरि पे चउ कूट।
सिद्धकूट में जिनसदन, पूजत पुण्य अटूट।।मै जिनपद.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'एकशैल' वक्षार है, भूभृत अविचल मान।
ताके जिनमंदिर विषें, अकृत्रिम भगवान।। मैं जिनपद.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे एकशैलकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(राग भरतरी)

मैं पूजूँ जिनबिंब को, भक्ति भाव उर धार।
जे नर वदें भाव से, ते उतरें भव पार।।
देवारण्य समीप से, है 'त्रिकूट' वक्षार।
ताके श्री जिनवेश्म को, पूजें इन्द्र अपार।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे त्रिकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षाराचल ''वैश्रवण', अनुपम रत्न भंडार।
ताका जिनमंदिर कहा, मोक्षमहल का द्वार।।मैं पूजूँ.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे वैश्रवणवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आत्मांजन' वक्षार पे, खेचरगण आवन्त।
ताके श्री जिनगेह को, मुनिगण नित्य नमंत।मैं पूजूँ.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे आत्मांजनवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजन नग वक्षार है, पूरे सुरगण आश।
ताके जिनगृह पूजते, होते कर्म विनाश।।
मैं पूजूँ जिनबिंब को, भक्ति भाव उर धार।
जे नर वंदें भाव से, ते उतरें भव पार।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे अंजनवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–अडिल्ल छंद–

'श्रद्धावान' वक्षार, कनकमय मानिये।
भद्रसाल वन वेदी, निकट बखानिये।।
तापे श्री जिनभवन विषें, जिनबिंब को।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, हरूँ जग द्वंद को।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे श्रद्धावान्वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजटावान्' कहा, वक्षार गिरीश पे।
कूट कहे हैं चार, रहे सुर तीन पे।।
इक में श्री जिनभवन, विषें जिनबिंब को।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय,हरूं जग द्वन्द को।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे विजटावान्वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आशीविष' वक्षार, गिरी अनुपम जहाँ।
सुर किन्नरगण, जिनवर यश गाते वहाँ।।
तापे श्री जिनभवन, विषें जिनबिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे आशीविषवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नग वक्षार 'सुखावह', सुखदातार है।
ताके जिनगृह जजत, भविक भव पार है।।

तापे श्री जिनभवन विषें जिनबिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे सुखावहवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'चंद्रमाल' वक्षार, गिरी सुखकार है।
भूतारण्य समीप, कनकमयि सार है।।
तापे श्री जिनभवन विषें जिनबिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे चंद्रमालवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सूर्यमाल' वक्षार, जिनेश्वर गेह से।
भविजन मन तम हरें, छुड़ा तन नेह से।।
जिनवर गृह के सभी, जिनेश्वर बिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमालवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नागमाल' वक्षार, अतुल जिनगृह तहां।
नागेन्द्रादिक देव, करें पूजन वहां।।
जिनवरगृह के सभी, जिनेश्वर बिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानद्युत्तरतटे नागमालवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'देवमाल' वक्षार मनोहर जानिये।
देव पूज्य जिनगेह, वहां पर मानिये।।
सुर नर पूजित, सर्वजिनेश्वर बिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानद्युत्तरतटे देवमालवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

अचलमेरु के पूर्व अरु, पश्चिम के वक्षार।
तिनके सोलह जिनभवन, अर्चूं बारंबार।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

चौपाई (चाल –रची नगरी छहमास)

जयो वक्षार अचल अभिराम, जयो तिन पे जिनधाम ललाम।
जयो जिनबिंब अकृत्रिम सार, जयो जिन पुंगव बारंबार।।1।।
सभी वक्षार गिरी कनकाभ, सभी पे चार कूट रत्नाभ।
सभी पे नदि के तरफ महान, सुशोभित सिद्धकूट परधान।।2।।
गणीश्वर ध्यान धरें तुम नाथ, मुनीश्वर गण वंदें नत माथ।
सुरेश्वर मिल पूजें जिनदेव, खगेश्वर आ नमते स्वयमेव।।3।।
नरेश्वर स्तुति करें उदार, नचें सुर अपसरियां रुचि धार।
सुरासुर किन्नरगण बहु आय, बजाते वीणा जिनगुण गाय।।4।।
प्रभो तुम शिवतिय कांत महान, प्रभो तुम अनुपम शांत प्रधान।
प्रभो तुम त्रिभुवन ईश जिनेश, प्रभो तुम तारन तरन महेश।।5।।
हरो मेरे भव क्लेश अबार, करो मुझको भवदधि से पार।
नहीं हो भव में आना फेर, करो ऐसी मति नाथ अबेर।।6।।
तुम्हीं मोहारिजयी जिननाथ! तुम्हीं मृत्युंजयि मुक्ति सनाथ।
तुम्हीं मणि औषधि मंत्र अभेद्य, तुम्हीं भवरोग हरन को वैद्य।।7।।
तुम्हीं मुनि जन मन कमल दिनेश, तुम्हीं भवि कुमुदाकर तारेश।
तुम्हीं हो अघतम हर भास्वान, तुम्हीं पुण्यांकुर हित घन जान।।8।।

प्रभो तुम दर्शन ज्ञान प्रपूर्ण, तुम्हीं अनवधि सुख वीरज पूर्ण।
तुम्हीं हो शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, तुम्हीं हो चिच्चैतन्य समृद्ध।।9।।
तुम्हीं चिन्तामणि चिन्तित देत, तुम्हीं हो कल्पतरू अभिप्रेत।
तुम्हीं तो कामधेनु महिमान, तुम्हीं पारसमणि में परधान।।10।।
प्रभो तुम नाम सकल सुख देत, वही इक भवदधि शोषण हेत।
हृदय में मेरे बसो हमेश,यही है चाह मुझे परमेश।।11।।
प्रभो जिनगुणसंपतिका दान, करो मुझको निज भाक्तिक जान।
नमूँ तुम पद को बारम्बार, करो सुख 'ज्ञानमती' सुखकार।।12।

–घत्ता–

जय जय शिवभर्ता, भव दुखहर्ता, तुम जयमाला जो गावे।
सो मंगल सुखकर, शिवसुंदरि वर, 'ज्ञानमती' लक्ष्मी पावे।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिंबेभ्यः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.19)

अचलमेरु सम्बंधि चौंतिस विजयार्ध जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–नरेन्द्र छंद–

अचलमेरु के पूरब पश्चिम, क्षेत्र विदेह बखाने।
तिनके बीचन बीच रजतगिरि है बत्तीस प्रमाने।।
इसी मेरु के दक्षिण-उत्तर, भरतैरावत जानो।
इन दोनों के बीच रजतगिरि, शोभत हैं दो मानो।।1।।

–दोहा–

इन चौंतिस विजयार्ध के, चौंतिस श्री जिनधाम।
आह्वानन विधि से यहाँ, पूजूँ करूँ प्रणाम।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिना-लयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिन-लयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

व्योम[1] गंग सम उज्ज्वल पानी, मणिमय झारी भरिये।
श्रीजिनचरण सरोरुह पूजत, भव भव तृष्णा हरिये।।
अचलमेरु के चौंतिस सुन्दर, रजताचल सरधानो।
तिनके चौंतिस जिनगृह के, जिनबिंब जजत अघ हानो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिन-लयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आकाश गंगा।

मलयज चंदन केशर कुंकुम, घिस कर्पूर मिलावो।
श्री जिनचरण सरोरुह चर्चत, भव भव ताप नशावो।।
अचलमेरु के चौंतिस सुन्दर, रजताचल सरधानो।
तिनके चौंतिस जिनगृह के, जिनबिंब जजत अघ हानो।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रकिरण सम धवल अखंडित, शाली धोकर लीजे।
जिनवर चरण सरोरुह सन्मुख, सुंदर पुञ्ज धरीजे।।अचल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत कमल कल्हार मनोहर, खूब सुगंधित लाये।
जिनवरचरण सरोरुह पूजत, कामबाण नश जाये।।अचल.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुआ अन्दरसा सेमई पायस, फेनी लाडू लाये।
श्रीजिनचरण सरोरुह पूजत, क्षुधा रोग नश जाये।।अचल.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनक दीप कर्पूर जलाकर, झिलमिल ज्योति करंता।
श्री जिनवर की करूँ आरती, मोह अन्धेर हरंता।।अचल.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर कृष्णागरु मिश्रित, धूप सुगंधित लेऊँ।
दुष्ट कर्म को भस्म करो प्रभु, तुम सन्मुख मैं खेऊँ।।अचल.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दाडिम केला पनस बिजौरा,नींबू थाल भरा के।
श्री जिनचरण सरोरुह पूजूँ, शिवफल आश धरा के।।
अचलमेरु के चौंतिस सुन्दर, रजताचल सरधानो।
तिनके चौंतिस जिनगृह के, जिनबिंब जजत अघ हानो।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन आदिक सब लेकर, उसमें रत्न मिलाया।
श्री जिनचरण सरोरुह सन्निध, उत्तम अर्घ्य चढ़ाया।।
अचलमेरु के चौंतिस सुन्दर, रजताचल सरधानो।
तिनके चौंतिस जिनगृह के, जिनबिंब जजत अघ हानो।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

गंगनदी की नीर, तुम पद धारा मैं करूँ।
शांति करो जिनराज, चउसंघ को सबको सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्वसौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

अचलमेरु पूरब अपर, दक्षिण उत्तर जान।
चौंतिस रूपाचल उपरि, जिनगृह जजूँ महान।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसम्बंधिचतुस्त्रिंशत् विजयार्धपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–अडिल्ल छन्द–

अचलमेरु के पूर्व, विदेह बखानिये।
सीता उत्तर 'कच्छा', देश सुमानिये।।
ताके मधि रूपाचल पे, जिनधाम को।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, तजूँ दुःख थान को।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीउत्तरतटे कच्छादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुकच्छा' अपर धातकी माहिं है।
अचलमेरु के पूर्व, विदेहन माहिं है।।
मध्य रजतगिरि के, श्री जिनगृह को जजूँ।
अर्घ्य चढ़ाकर जिनप्रतिमा को नित भजूँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीउत्तरतटे सुकच्छादेशस्थितविजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर धातकी मध्य, अचल सुरगिरि कहा।
ताके पूरब देश, 'महाकच्छा' लहा।।
ताके मधि रजताचल, पर जिनगृह सदा।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भजूँ सुख संपदा ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशस्थितविजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावती' मध्य विजयार्ध है।
ताके जिनगृह को, नित पूजें भव्य हैं।।
तिनके श्री जिनबिंब, अकृत्रिम सोहते।
अर्घ्य चढ़ाय जजूँ, सुर नर मन मोहते।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आवर्ता' है देश, मध्य विजयार्ध है।
तापे नव कूटों में, इक विख्यात है।।
सिद्धकूट में जिनप्रतिमा को पूजते।
अर्घ्य चढ़ाय जजें, नर दुःख से छूटते।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे आवर्तादेशस्थितविजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'लांगलावर्ता', मधि रूपाद्रि है।
तापे सिद्धायतन, माहिं जिननाथ हैं।।
मुनिपति से नित पूज्य, अकृत्रिम चैत्य हैं।
अर्घ्य चढ़ाय जजूँ मैं, भवरुज[1] वैद्य हैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कला' मध्य, रजतगिरि सोहना।
सिद्धकूट जिनगृह से, जन मन मोहना।।
तिनकी जिनप्रतिमा को, पूजूँ भाव से।
अर्घ्य चढ़ाय जजूँ मैं अतिशय भाव से।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' मध्य विजयार्ध है।
तापे जिनगृह पूजत, भव्य कृतार्थ हैं।।
तिनकी मणिमय जिनप्रतिमा को मैं जजूँ।
अर्घ्य चढ़ाय सदा मनवच तन से भजूँ।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. भव रोग

–रोला छंद–

अपरधातकी द्वीप अचल सुरगिरि पूरब में।
देवारण्य समीप देश 'वत्सा' के मधि में।।
रजतगिरी पर सिद्धकूट में मणिमय प्रतिमा।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, उन्हीं की अतिशय महिमा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के पूर्व, 'सुवत्सा' देश विदेहा।
तिस के बीचोंबीच, रजतगिरि रमत सदेहा।।
नवकूटों में सिद्धकूट पर, मणिमय प्रतिमा।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, उन्हीं की अतिशय महिमा।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के पूर्व 'महावत्सा' वर देशा।
तिसके मधि विजयार्ध बसे नित तास खगेशा।।नवकूटों.।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे महावत्सादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावती' अचल सुरगिरि के पूर्वा।
रूपाचल ता मध्य, रमें तापे गंधर्वा।।नवकूटों.।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावतीदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के पूरब 'रम्या' देश कहाता।
ताके बीचोंबीच रजतगिरि शोभा पाता।।नवकूटों.।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' कहा, सुपूर्व अचलमेरु के।
ताके मध्य रजतगिरि, पे नव कूट सुनीके।।
नव कूटों में सिद्धकूट पर मणिमय प्रतिमा।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, उन्हीं की अतिशय महिमा।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश कहा 'रमणीया' अपर धातकी खंड में।
तिनके बीच रजतनग, त्रय कटनी हैं उसमें।।नवकूटों.।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे रमणीयादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुमंगलावती' अचलमेरू पूरब में।
तिसके मधि रूप्यादि तथा छहखंड उसी में।।नवकूटों.।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे मंगलावतीदेशस्थितविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–चौबोल–

अपरधातकी मेरु अचल के पश्चिम सीतोदा दायें।
भद्रसाल वन वेदी सन्निध, 'पद्मा' देश कहा जाये।।
तामध रूपाचल मनहारी, सिद्धकूट में जिनगेहा।
रोग शोक दुख दारिद नाशे, जो जन पूजें धर नेहा।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मादेशस्थितविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु की अपर दिशा में, सीतोदा नदि के दायें।
देश 'सुपद्मा' शोभा पाता, उसमें छहों खंड गायें ।।तामध.।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे सुपद्मादेशस्थितविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर धातकी खंड द्वीप में, सीतोदा के दक्षिण में।
देश 'महापद्मा' आरज खंड, कर्मभूमि शाश्वत उसमें।।
तामध रूपाचल मनहारी, सिद्धकूट में जिनगेहा।
रोग शोक दुख दारिद नाशे, जो जन पूजें धर नेहा।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे महापद्मादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के पश्चिम दिश में, देश 'पद्मकावती' कहा।
तीर्थंकर श्रुतकेवलि गणपति, मुनिगण से नित पूर्ण रहा।।
तामध रूपाचल मनहारी, सिद्धकूट में जिनगेहा।
रोग शोक दुख दारिद नाशे, जो जन पूजें धर नेहा।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मकावतीदेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के पश्चिम दिश में, 'शंखा' देश विदेह कहा।
रूपाचल है मध्य उसी के, तीन कटनियों सहित रहा।।
नव कूटों में नदि के सन्निध, सिद्धकूट पर जिनगेहा।
रोग शोक दुख दारिद नाशे, जो जन पूजें धर नेहा।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे शंखादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु की पश्चिम दिश में, 'नलिना' देश कहा जाता।
ताके बीच रूप्यगिरि सुन्दर, विद्याधर के मन भाता।।
नव कूटों में नदि के सन्निध, सिद्धकूट पर जिनगेहा।
रोग शोक दुख दारिद नाशे, जो जन पूजें धर नेहा।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे नलिनीदेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु की पश्चिम दिश में, 'कुमुद' देश अतिरम्य कहा।
ताके मध्य रजतगिरि सुन्दर, ऋषिगण विचरें नित्य वहां।।

नव कूटों में नदि के सन्निध, सिद्धकूट पे जिनगेहा।
रोग शोक दुख दारिद नाशे, जो जन पूजें धर नेहा।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे कुमुददेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर धातकी सीतोदा के, दायें 'सरिता' देश कहा।
ताके मध्य रूप्यगिरि है नित, इंद्रादिकगण रमें वहाँ।।
नव कूटों में नदि के सन्निध, सिद्धकूट पे जिनगेहा।
रोग शोक दुख दारिद नाशे, जो जन पूजें धर नेहा।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे सरितादेशस्थितविजयार्धपर्वत सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रोला छंद– **'वप्रा' देश विदेह, अपर धातकी माहीं।**
तामधि रजत गिरीन्द्र, सीतोदा तट ताहीं।।
सिद्धकूट जिनवेश्म, पूजूँ अर्घ्य चढ़ाई।
इक सौ अठ जिनबिंब, सब विध मंगल दाई।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे वप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' रम्य, अचलमेरु पर आगे।
रूप्याचल ता मध्य, नदि के निकट सुतापे।। सिद्धकूट.।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे सुवप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महावप्रा' सुविदेह, अपर धातकी तामें।
रजताचल ता मध्य, तीन कटनियां तामें।।सिद्धकूट.।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे महावप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वप्रकावती' विदेह, ता मधि रजतगिरि है।
नवकूटों में एक, कूट सुसौख्य भरी है।।सिद्धकूट.।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे वप्रकावतीदेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' देश विदेह, अपर धातकी द्वीपे।
विजयारध ता मध्य, नव कूटों से दीपे।।
सिद्धकूट जिनवेश्म, पूजूँ अर्घ्य चढ़ाई।
इक सौ अठ जिनबिंब, सब विध मंगल दाई।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे गंधादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगंधा' माहिं, रजतगिरी अमलाना।
मुकुट सदृश नवकूट, सुर नर रमत सुथाना।।सिद्धकूट.।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे सुगंधादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' मध्य, रूपाचल अति सोहे।
तापे यतिगण नित्य, आतम समरस जोहे।।सिद्धकूट.।।31।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे गंधिलादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' देश, विजयारध ता बीचे।
तापे सुरगण आय, क्रीड़ा करत सुनीके।।सिद्धकूट.।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे गंधमालिनीदेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–शंभुछंद–

शुभ अपर धातकी दक्षिण में इक 'भरत' सुक्षेत्र कहाता है।
गंगा सिन्धू नदि विजयारध इनसे छह खंड धराता है।।
रूपाचल के नवकूटों में श्री सिद्धकूट मन भाता है।
मैं पूजूं अर्घ्य चढ़ाकर के, वह आतम सिद्धि कराता है।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिदक्षिणदिशि भरतक्षेत्रस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ अपर धातकी उत्तर में, 'ऐरावत' क्षेत्र सुहाना है।
रक्ता रक्तोदा रजतगिरी, इनमें छह खंड युत माना है।।
रजताचल के नव कूटों में, श्री सिद्धकूट मन भाता है।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ा करके, वह आतम सिद्धि कराता है।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिउत्तरदिशि ऐरावतक्षेत्रस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-हरिगीतिका छंद–

वर धातकी के मध्य सुरगिरि, अचलमेरू नाम है।
ताके सुपूरब अपर दिग्, सुविदेह बत्तिस मान हैं।।
इस मेरु के दक्षिण भरत, ऐरावता उत्तर दिशी।
इन सर्व के मधि रूप्यगिरि, पे जिनभवन हैं चौंतिसी।।

–दोहा–

ये चौंतिस जिनवेश्म[1] हैं, अकृत्रिम सुखधाम।
तिनके सब जिनबिंब को, नित प्रति करूँ प्रणाम।।35।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

चौंतिस गिरि विजयार्ध, तिनके जिनमंदिर कहे।
गाऊँ अब जयमाल, श्रद्धा से जिननाथ की।।1।।

–त्रिभंगी छंद–

जय अचलमेरु पूरब विदेह, सूरिप्रभ जिन नदि उत्तर में।
सीता के दक्षिण जो विदेह, तीर्थेश विशालकीर्ति उसमें।।

1. जिनमंदिर।

जय मेरु अपर में नदि के दक्षिण, जिन तीर्थंकर वज्रधरा।
जय सीतोदा के उत्तर में हैं, चन्द्रानन जिनराज वरा।।2।।

राग–(हे दीनबन्धु श्रीपति...)

हे देव! तुम्हें होत कभी जन्म रोग ना।
स्व इष्ट का वियोग औ अनिष्ट योग ना।।
हे नाथ! मेरी पूरिये बस एक कामना।
ना होवे फेर फेर यहाँ भव में आवना।।3।।

आनंत्य काल नाथ! मैं निगोद में रहा।
फिर पंचपरावर्त में ही घूमता रहा।।हे नाथ.।।4।।

त्रैलोक्य में जो कर्म योग्य वर्गणा कही।
उन सबको ग्रहण कर चुका उच्छिष्ट सम रहीं।।हे नाथ.।।5।।

इस तीन लोक क्षेत्र में सर्वत्र ही भ्रमा।
ना एक भी प्रदेश बचा ना जहाँ जनमा।। हे नाथ.।।6।।

अवसर्पिणी उत्सर्पिणी के चक्र अनन्ते।
प्रत्येक को पूरा किया मैं जन्म मरण से।।हे नाथ.।।7।।

तिर्यंच की जघन्य आयु पाय मैं मरा।
जितने समय उसी में उतने ही जनम धरा।। हे नाथ.।।8।।

एकेक समय वृद्धि करके जन्मता रहा।
उत्कृष्ट आयु तीन पल्य तक भ्रमण रहा।। हे नाथ.।।9।।

नारक में जघन आयु दश हजार वर्ष की।
जितने समय थे उतनी बार हुआ नारकी।। हे नाथ.।।10।।

फिर आयु बढ़ाते हुए तैंतीस सागरा।
सप्तम नरक में उच्च आयु धार के मरा।। हे नाथ.।।11।।

नरगति में क्षुद्र आयु है अंतर्मुहूर्त की।
जितने समय इस आयु में उतने ही बार भी।। हे नाथ.।।12।

लघु आयु को धरा मरा फिर इक समय बढ़ा।
ऐसे ही समय एक एक वृद्धि कर बढ़ा।।
हे नाथ! मेरी पूरिये बस एक कामना।
ना होवे फेर फेर यहाँ भव में आवना।।13।।

उत्कृष्ट आयु तीन पल्य तक वहाँ गया।
इस विधि से मनुष योनि में मैं घूमता रहा।। हे नाथ.।।14।।

देवायु क्षुद्र दश हजार वर्ष की अरे।
जितने समय उसी में उतने सुर जनम धरे।। हे नाथ.।।15।।

लघु आयु से उतने जनम को पूर्ण जब किया।
तब आगे एक-एक समय बढ़ते ही गया ।। हे नाथ.।।16।।

जब तक हुई इकत्तीस सागरा तक स्थिती।
तब तक समय की वृद्धि से ली देव की गती।। हे नाथ.।।17।।

इस विध से चार गति में ही मैं पर्यटन किया।
हे नाथ! मैंने मुक्ति का तो मार्ग ना लिया।। हे नाथ.।।18।।

नाना विभाव भाव जो मिथ्यात्व सहित हैं।
मैं उन असंख्य लोकमात्र भाव धरे हैं ।। हे नाथ.।।19।।

ना कोई भाव शेष रहा जो नहीं किया।
बस एक मात्र जो अपूर्व भावना लिया।। हे नाथ.।।20।।

हे देव! आज शुद्ध आत्मतत्व जान के।
मैं सिद्ध के समान हूँ श्रद्धान ठान के।। हे नाथ.।।21।।

हे नाथ! तुम्हें पाय मैं निहाल हो गया।
बस तीन रत्न से ही मालामाल हो गया।। हे नाथ.।।22।।

मैं याचना करूँ मुझे वरदान दीजिये।
भव भव में रहे भक्ति तेरी ध्यान दीजिये।। हे नाथ.।।23।।

विदेह पूर्व अपर की जो आर्य भूमियाँ।
शाश्वत हैं कर्मभूमि वहाँ तीर्थभूमियाँ।।
हे नाथ! मेरी पूरिये बस एक कामना।
ना होवे फेर फेर यहाँ भव में आवना।।24।।

तीर्थंकरों के जन्म वहाँ नित्य ही रहते।
तीर्थेश चार आज भी हैं वहाँ विहरते।। हे नाथ.।।25।।

षट् काल भरत क्षेत्र ऐरावत विषे होते।
तीर्थेश चौथे काल में हो पाप को धोते।। हे नाथ.।।26।।

इन सबको मेरा बार बार नमस्कार हो।
यह नाव तेरी भक्ति से भवदधि से पार हो।। हे नाथ.।।27।।

–दोहा–

जो नर श्रद्धा भाव से, पढ़ें सुने जयमाल।
'ज्ञानमती' सुख सम्पदा, सो पावे तत्काल।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत् विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.20)

अचलमेरु सम्बंधी षट्कुलाचल जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीताछंद–

सुरगिरि अचल के दक्षिणोत्तर, में कुलाचल षट् कहे।
हिमवन महाहिमवन निषध, नीलाद्रि रुक्मी शिखरि हैं।।
इन भूभृतों के पूर्व दिश में, श्री जिनालय सोहने।
थापूँ यहाँ उनके जिनेश्वर, बिंब को मन मोहने।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–

भागीरथी का मिष्ट शीतल, नीर झारी में भरूँ।
निज आतमा की शुद्धि हेतू, नाथ पद धारा करूँ।।
श्री अचलमेरू के कुलाचल, हिमवदादिक जानिये।
षट् जैनमंदिर पूज के, निज आत्म सिद्धी मानिये।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर चंदन घिस सुगंधित, भर कटोरी लाइया।
निज आत्म पद की सुरभि हेतू, नाथ पाद चढ़ाइया।।श्री.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

वर देवजीर कमोद शाली, धोय अक्षत ले लिये।
निज आत्म गुण के पुंज हेतू, पुंज तुम सन्मुख दिये।।
श्री अचलमेरू के कुलाचल, हिमवदादिक जानिये।
षट् जैनमंदिर पूज के, निज आत्म सिद्धी मानिये।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला चमेली केवड़ा, कुवलय सुगन्धित पुष्प ले।
निज आत्म यश सद्गंध हेतू, नाथ पद अर्पूं भले।।श्री.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सोहाल पूरण पोलिका, लड्डू अंदरसे लाय के।
निज आत्म तुष्टी हेतु, जिनवर पाद पास चढ़ाय के।।श्री.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर बत्ती ज्वलत ज्योती, दीप कर में ले लिया।
निज मोह ध्वांत समूह नाशन, हेतु जिनपद पूजिया।।श्री.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिश्वेत चन्दन लाल चंदन, सुरभि धूप मिलाय के।
निजकर्म जालन हेतु प्रभु ढिग, अग्नि माहिं जलाय के।।श्री.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल सुपारी लौंग पिस्ता, नाशपाती सेब ले।
निज आत्मा के मोक्ष हेतू, नाथ पद पूजूँ भले।।श्री.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत आदि लेकर, द्रव्य से थाली भरूँ।
त्रैलोक्यपति जिनपाद पूजूँ, अर्घ को अर्पण करूँ।।
श्री अचलमेरू के कुलाचल, हिमवदादिक जानिये।
षट् जैनमंदिर पूज के, निज आत्म सिद्धी मानिये।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

पद्म सरोवर नीर, सुवरण झारी में भरूँ।
जिनपद धारा देय, भव वारिधि से उत्तरूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

सुवरण पुष्प मंगाय, प्रभु चरणन अर्पण करूँ।
वर्ण गंध रस फास, विरहित जिनपद को वरूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

अपर धातकी द्वीप, दक्षिण उत्तर तास के।
षट् कुलपर्वत नित्य, तिन पे जिनगृह पूजहूँ।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

अचलमेरु के दक्षिण दिश में, 'हिमवन' रजतमयी है।
ग्यारह कूट सहित पर्वत मधि, पदम सरोवर भी है।।
द्रह बिच कमल कमल बिच देवी, 'श्री' का भवन बखाना।
शाश्वत है इक सिद्धकूट, जिनगेह जजूँ अघ हाना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिहिमवत्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुतिय 'महाहिमवन' कुलनग है, रजतमयी अठकूटा।
महापद्म द्रह के कमलों बिच, 'ह्री सुरि'[1] गेह अनूठा।।

1. ह्री देवी।

शाश्वत अनुपम सिद्धकूट पर, श्री जिनभवन सुहावे।
ऋषिगण नित वंदन करते हैं, हम भी अर्घ चढ़ावें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिमहाहिमवत्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'निषधगिरी' वर तप्त कनक छवि, नव कूटन सुर सेवी।
मध्य तिगिंछ सरोवर के बिच, कमल मध्य 'धृति' देवी।।
शाश्वत अनुपम सिद्धकूट पर श्री जिनभवन सुहावे।
ऋषिगण नित वंदन करते हैं, हम भी अर्घ चढ़ावें।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनिषधपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नीलाचल'[1] वैडूर्यमणी द्युति, नव कूटों से मनहर।
केसरि द्रह में कमल बीच, 'कीर्ती ' देवी अति सुन्दर।।
शाश्वत अनुपम सिद्धकूट पर श्री जिनभवन सुहावे।
ऋषिगण नित वंदन करते हैं, हम भी अर्घ चढ़ावें।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनीलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रूक्मी' नग रूपा छवि कूटों, आठ सहित मन मोहे।
पुंडरीक द्रह मध्य कमल में, 'बुद्धी' देवी सोहे।।
शाश्वत अनुपम सिद्धकूट पर श्री जिनभवन सुहावे।
ऋषिगण नित वंदन करते हैं, हम भी अर्घ चढ़ावें।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिरुक्मिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शिखरी' नग स्वर्णाभ बीच मह-पुंडरीक सरवर है।
मध्य कमल बिच 'लक्ष्मी' देवी, ग्यारह कूट उपरि है।।
शाश्वत अनुपम सिद्धकूट पर श्री जिनभवन सुहावे।
ऋषिगण नित वंदन करते हैं, हम भी अर्घ चढ़ावें।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिशिखरिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. नील पर्वत।

–पूर्णार्घ्य–

अपर धातकी मध्य अचल सुरगिरि के दक्षिण-उत्तर।
षट् कुलपर्वत ऊपर जिनगृह, वे अनुपम लोकोत्तर।।
मणिमय जिनप्रतिमा को ध्याते, योगीश्वर नित आके।
मैं भी अर्घ्यं चढ़ाकर पूजूँ, जिन गुण मंगल गाके।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरोःदक्षिणोत्तरषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शातिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

अकृत्रिम जिनबिंब, स्वयंसिद्ध उपमारहित।
तिनकी यह जयमाल, गाऊँ अति उल्लास से।।1।।

–स्रग्विणी छंद–

जैन के वैश्म की लोक में श्रेष्ठता।
इन्द्र पावे न गाके कभी पूर्णता।।
गर्भ आलय महा देवछंदादि हैं।
रत्नमय वेदिका तोरणों युक्त हैं।।2।।

घंटिका किंकणी मणिमयी बाजती।
धूप घट में जले धूम दिश व्यापती।।
भृङ्ग दर्पण व्यजन, कुंभ ध्वज चामरा।
छत्र ठोना दरब मंगली अठ वरा।।3।।

पूर्ण कलशे रतन भृत रजत स्वर्ण के।
रत्नमाला कुसुम मालिका लंबते।।
रत्नदीपक धरें ज्योति से जगमगे।
रत्न सिंहासनों से तिमिर सब भगे।।4।।

रत्न के स्तूप हैं उच्चता को लिये।
सिद्धमूर्ती सहित शाश्वता को लिये।।
चैत्यद्रुम है अनादी निधन भूमयी।
चार जिन चार सिद्धों की मूर्ती वहीं।।5।।

वृक्ष सिद्धार्थ ये सिद्धि देवें सदा।
जो नमें नित्य वे सिद्धि लेवें स्वता।।
वेदियाँ तोरणों गोपुरों युत कहीं।
मध्य में पीठ पे स्वर्ण खम्भे सही।।6।।

स्वर्णमय खम्भ में शोभती महाध्वजा।
रत्नमयि ये अनेकों वरण की ध्वजा।।
महाध्वज अग्र में चार वापी भरी।
जन्तु से हीन कल्हार कमलों भरी।।7।।

ये जिनालय सभी तीन कोटों घिरे।
मध्य में पंक्तियाँ ध्वजा की मनहरें।।
कोट के मध्य में कल्पतरु शोभते।
चार दिशि चार मानसतम्भ शोभते।।8।।

जैन चैत्यालयों की न तुलना कहीं।
देव देवी सदा भक्ति करते वहीं।।
एक सौ आठ जिनबिंब रत्नोंमयी।
सर्व जिनगेह में राजते मणिमयी।।9।।

मैं नमूं मैं नमूं मैं नमूं नित्य ही।
मृत्यु को जीत के पाऊँ शिव की मही।।
धन्य मैं धन्य मैं हो गया आज ही।
धन्य मेरे नयन धन्य जीवन सही ।।10।।

नाथ! को पाय के तृप्त मैं हो गया।
याचना एक भव भव मिले भक्ति या।।
अन्य कुछ भी न मुझको रही चाहना।
पूरिये नाथ! मेरी मनोकामना।।11।।

–घत्ता–

जय जय कुलपर्वत, जिनमंदिर युत, तुम जयमाला जो भणहीं।
जय 'ज्ञानमती' युत, जिनगुणसंपत, सो जन तत्क्षण ही वरहीं।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिन-बिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.21)

अचलमेरु के दक्षिण उत्तर द्वयइष्वाकार जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–शंभुछंद–

वर द्वीप धातकी के दक्षिण, उत्तर में इष्वाकार कहे।
ये द्वीप धातकी को पूरब, पश्चिम दो खंड में बांट रहे।।
इन पर्वत पर दो जिनमंदिर, जिनप्रतिमा का आह्वान करूँ।
सुरपति खगपति चक्री पूजित, जिनप्रतिमा का गुणगान करूँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरद्वयइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरद्वयइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरद्वयइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–

क्षीरोदधि का पयसम[1] जल ले, कंचन कलशा भर लाया हूँ।
निज आत्म करम मल धोने को, प्रभु धारा देने आया हूँ।।
इष्वाकाराचल के दो हैं, जिनमंदिर अतिशय गुणधारी।
इनको पूजत ही परमानंद, आतम अनुभव हो सुखकारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज चंदन केशर घिस के, तुम चरण चढ़ाने आया हूँ।
आत्यंतिक शांति हेतू मैं, भवज्वाल बुझाने आया हूँ।।

1. दूध समान।

इष्वाकाराचल के दो हैं, जिनमंदिर अतिशय गुणधारी।
इनको पूजत ही परमानंद, आतम अनुभव हो सुखकारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कामोद श्यामजीरी तंदुल, कलमों को धोकर लाया हूँ।
अक्षय सुखमय शुद्धात्म हेतु, प्रभुपुंज चढ़ाने आया हूँ।।इष्वा.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरतरु के सुरभित विविध सुमन, सुमनस मनहर मैं लाया हूँ।
प्रभु काम बाण विध्वंस हेतु, तुम चरण चढ़ाने आया हूँ।।इष्वा.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरणपोली पूरी खाजे, नुकती लड्डू मैं लाता हूँ।
निजक्षुधा व्याधि के नाश हेतु, चरणों के निकट चढ़ाता हूँ।।इष्वा.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोघृत भर कंचन दीपशिखा, दश दिश अंधेर भगा देती।
दीपक ज्योती से यजते ही, अज्ञान अंधेर मिटा देती।।इष्वा.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु धूप सुगंधित ले, अग्नी में खेने आया हूँ।
कर्मों को जला जला करके, दश दिश में धूम उड़ाया हूँ।।इष्वा.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

एला केला अंगूर आम, पिस्ता किसमिस बादाम लिया।
शिवफल की आशा से जिनवर, तुम सन्मुख में फल चढ़ा दिया।।

इष्वाकाराचल के दो हैं, जिनमंदिर अतिशय गुणधारी।
इनको पूजत ही परमानंद, आतम अनुभव हो सुखकारी।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुष्प चरू, वरदीप धूप फल लाता हूँ।
वर हेमपात्र में अर्घ्य सजा, प्रभु निकट चढ़ाने आता हूँ।।इष्वा.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

कनक भृंग में मिष्ट जल, सुरगंगा समश्वेत।
जिनपद धारा देत ही, भव भव को जल देत।।10।।

शांतेय शांतिधारा।

वकुल सरोरुह मालती, पुष्प सुगंधित लाय।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, सुख संपति अधिकाय।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

दुतिय धातकी द्वीप, दक्षिण उत्तरदिश विषें।
इष्वाकृति नग दोय, ताके जिनगृह पूजहूँ।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसंबंधिइष्वाकारनगस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–शम्भु छंद–

वर द्वीप धातकी के दक्षिण, लवणोदधि कालोदधि छूता।
नग इष्वाकार सहस योजन, विस्तृत अरु चार शतक ऊँचा।।
यह लंबा चार लाख योजन, कनकाभ[1] कूट चउ इस पे हैं।
इस सिद्धकूट में जिनमंदिर, हम अर्घ्य चढ़ाकर जजते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिदक्षिणदिग्इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. सुवर्णमयी।

वर द्वीप धातकी उत्तर में, लवणोदधि कालोदधि छूता।
गिरि इष्वाकृति योजन हजार, विस्तृत अरु चार शतक ऊँचा।।
यह चार लाख योजन लंबा, स्वर्णाभ चार कूटों युत है।
इक सिद्धकूट में जिनमंदिर, हम अर्घ्य चढ़ाकर पूजत हैं।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिउत्तरदिग्इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

*–पूर्णार्घ्य–*दोहा–

द्वीप धातकी खंड में, दक्षिण उत्तर माहिं।
इष्वाकृति गिरि के युगल, जिनगृह पूज रचाहिं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिग्संस्थितइष्वाकारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

इष्वाकार गिरीन्द्र, इन पे जिनगृह शाश्वते।
तिनमें श्री जिनबिंब, मैं गाऊँ गुणमालिका।।1।।

जय जय श्री जिन सिद्धायतनं, भविजन को सिद्धि प्रदाता हो।
जय स्वयं सिद्ध शाश्वत भगवन्, मुनिजन के मुक्ति विधाता हो।।
जय जय गुणरत्नाकर स्वामी, जो तुमको नित प्रति ध्याते हैं।
वे तुम भक्ती नौका चढ़कर, भववारिधि से तिर जाते हैं।।2।।
इष्वाकृतिनग पर सिद्धकूट, उनमें जिनप्रतिमा राजे हैं।
जो उनकी पूजा भक्ति करें, वे भववल्ली को काटे हैं।।
पर्वत के दोनों भागों में, तट वेदी वन पंक्ती शोभें।
धनु पांच शतक विस्तृत स्वर्णिम, ऊँची दो कोस बहुत शोभें।।3।।
इन भित्ति सदृश वेदी के द्वय, भागों में वनखंड शोभ रहे।
जो तोरण पुष्करिणी वापी-युत जिनभवनों से रम्य कहें।।

वन खंडों में सुरमहल बने, तोरण रत्नों से शोभित हैं।
ऐसे ही पर्वत के ऊपर, तट वेदी औ वन पंक्ती हैं।।4।।
ये पर्वत अतिशय रम्य कहे, सुवरण कांती से चमके हैं।
इन पर जो चार कूट माने, त्रय में व्यंतर सुर बसते हैं।।
इक सिद्धकूट में जिनमंदिर, जो अकृत्रिम कहलाता है।
कांचन मणि रत्नों से निर्मित ध्वज पंक्ती को लहराता है।।5।।
जिनगृह को घेरे परकोटे, हैं तीन कनकमय रत्न जड़े।
उनके अंतर में दशविध ध्वज, अरु कल्पतरू रमणीय बड़े।।
वर मानस्तम्भ रतन निर्मित, सिद्धों की प्रतिमा वंद्य वहाँ।
मानस्तम्भों के दर्शन से, सच मान गलित हो जाय वहाँ।।6।।
ये जिनमंदिर शिवललना के, शृंगार विलाससदन[1]माने।
भविजन हेतू कल्याण भवन, पुण्यांकुर सिंचन घन[2] माने।।
इनमें हैं इक सौ आठ कहीं, जिनप्रतिमा रतनमयी जानो।
मुझ 'ज्ञानमती' को रत्नत्रय, सम्पत्ति देवें यह सरधानो।।7।।

–धत्ता–

जय जय जिनचंदा, सुख के कंदा, शिवतियकंता नाथ तुम्हीं।
जय तुम गुण गाऊँ, दुरित नशाऊँ, फेर न आऊँ चहुंगति ही।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्स्थितेष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1.घर। 2. मेघ।

(पूजा नं.22)

मंदरमेरु जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीताछंद–

पुष्कर द्रुमांकित तृतिय पुष्कर, द्वीप अतिशय रम्य है।
मधि मानुषोत्तर नग अतः, रचना कही इस अर्घ है।।
दिक् पूर्व इसके मध्य मेरू, नाम 'मंदर' सोहना।
जिनगेह सोलह हैं वहाँ, हो जजत जिनपद मोहना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टक-नरेन्द्र छंद–

पद्म सरोवर के पवित्र जल में कर्पूर मिलाया।
जन्म जरा मृत्यू निरवारण, जिनवर चरण चढ़ाया।।
मंदरमेरु जिनालय सोलह, भविजन मनरथ पूरे।
जो इन पूजें भक्ति भाव से, यम की समरथ चूरें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी केशर चंदन घिस, जिनवर चरण चढ़ायो।
रोग शोक संताप मिटाने, तुम पद पूजन आयो।।मंदर.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. वृक्ष से चिन्हित।

धवल अखंडित षष्ठी[1] तंदुल, सोम किरण सम लायो।
अमल निजातम प्राप्ती हेतू, प्रभु ढिग पुंज चढ़ाओ।।
मंदरमेरु जिनालय सोलह, भविजन मनरथ पूरें।
जो इन पूजें भक्ति भाव से, यम की समरथ चूरें।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जपाकुसुम मंदार कुंद बहु, सुवरण पुष्प मंगायो।
मनोकामना पूरण हेतू, जिनपद पद्म चढ़ायो ।।मंदर.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कलाकंद मैसूरपाक, श्रीखंड मलाई लायो।
आशा तरुणी तृप्त करन को, तुम पद निकट चढ़ायो।।मंदर.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनकदीप कर्पूर शिखा सब, दिश उद्योत करे है।
दीपक से जिन पूजा अंतर, ज्ञान उद्योत करे है।।मंदर.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशांगी अग्नी संग में, खेवत कर्म जरे हैं।
मोह महीभृत चूर चूर हो, तत्क्षण दूर टरे हैं।।मंदर.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जंबू आम्र जंभीरी नींबू, दाख खजूर मंगायो।
ईप्सित फलप्रद मुक्ति रमापति, पद पंकेज चढ़ायो।।मंदर.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. साठी ।

सलिल गंध अक्षत सुम आदिक, कनक पात्र भर लायो।
मैं सर्वार्थसिद्धि हेतू प्रभु, अर्घ्य चढ़ा सुख पायो।।।
मंदरमेरु जिनालय सोलह, भविजन मनरथ पूरें।
जो इन पूजें भक्ति भाव से यम की समरथ चूरें।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि सम श्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ,तिहुँ जग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिन चरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

मंदरमेरु भद्रसाल वन पूजा

–सोरठा–

मंदरमेरु चतुर्थ, पूरब पुष्कर अर्ध में।
भद्रसाल जिनगेह, आह्वानन कर पूजहूँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

रेवानदी को नीर पावन, नाथ पद धारा करूँ।
संसार रोग निवार भगवन् , तुम चरण आशा धरूँ।।

सौ इंद्र मिल मस्तक झुकाकर, तुम चरण वंदन करें।
हम भक्ति श्रद्धा भाव से, प्रभु तुम चरण अर्चन करें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरि केशर गंध वर, कर्पूर मिश्रित लाइये।
जिनपाद गंध चढ़ाय के, सब रोग शोक नशाइये।।सौ.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सित देवजीर अखंड गंधित, धोय अक्षत लाइये।
निजपद अखंडित ज्ञानमंडित, हेतु पुंज चढ़ाइये।।सौ.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार कुंद कदंब चंपक, पुष्प नाना लाय के।
शृंगार हार प्रसून बाण, निवार चरण चढ़ाइये।।सौ.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम बरफी मुद्ग[1] मोदक, घृतमयी पकवान ले।
चरु से जिनेश्वर अर्चना, सब भूख व्याधी दलमले।।सौ.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यःनैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर ज्वाला ज्वलित दीपक, बाह्य तन नाशन करे।
तुम अर्चना करते तुरत, अंतर तिमिर कल्मष[2] हरे।।सौ.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध धूप सुगन्ध स्वाहा[3] नाथ को अर्पण करें।
तुम निकट पाके शीघ्र ही, सम्पूर्ण कल्मष परिहरें।।

1. मूंग के लड्डू । 2. पाप। 3. अग्नि ।

सौ इंद्र मिल मस्तक झुकाकर, तुम चरण वंदन करें।
हम भक्ति श्रद्धा भाव से, प्रभु तुम चरण अर्चन करें।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नारंग दाडिम आम्र अमरख, थाल भर भर लाइये।
अनुपम निजातम पद सुफल-हित नाथ चरण चढ़ाइये।।सौ.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत आदि वसु विध, अर्घ्य कंचन थाल में।
निज गुण अतुल हित अर्घ्य से, पूजूँ नवाऊं भाल मैं।।सौ.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि सम श्वेत।
जिनपद धारा मैं करूं, तिहुँजग शांतीहेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिन चरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ-प्रत्येक-अर्घ्य–सोरठा–

तीन भुवन में श्रेष्ठ, निज सुख परमानंदमय।
तन्मय श्री जिनबिंब, पुष्पांजलि कर मैं जजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

विष्णुपद छंद–(चाल–कहाँ गये चक्री.....)

पुष्करार्ध मंदरमेरू वन, भद्रसाल जानो।
पूरब दिश में जिनमंदिर को, पूजत सुख मानो।।

जल गंधादिक अर्घ्य चढ़ाकर, जिनवर गुण गावें।
मोक्ष महल सीढ़ी जिनभक्ती, चढ़ शिवतिय पावें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनपूर्वदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदरमेरू भद्रसाल वन, दक्षिण जिनधामा।
सुर किन्नर गंधर्व गान से , भविजन सुखधामा।।जल.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनदक्षिणदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदरमेरू भद्रसाल के, पश्चिम जिनगेहा।
हरि[1] प्रतिहरिं हलधर[2] चक्रेश्वर, पूजें धर नेहा।।जल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनपश्चिमदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्करार्ध मंदरमेरू वन, भद्रसाल सोहे।
उत्तरदिक् में जिनचैत्यालय, सुर नर मन मोहे।।जल.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनउत्तरदिक्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

भद्रसाल के दिश दिश जिनगृह, पूजूँ मन लाके।
सकल सिद्धि कर जिनप्रतिमा यश, गाऊँ हर्षाके।।
शुद्ध भावना हेतु निरन्तर, तुम पद अनुरागी।
पूरण अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ, तुम गुण मन पागी।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

1. नारायण। 2. प्रतिनारायण। 3. बलदेव।

मंदरमेरु नंदनवन जिनालय पूजा

–अथ स्थापना-दोहा–

पूरब पुष्कर अर्ध में, मंदरमेरु महान।
नंदनवन के जिनभवन, पूजूँ कर आह्वान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

–अथाष्टक–अडिल्ल छंद–

भागीरथि सरिता को जल पावन सही।
स्वर्ण भृंग में धार प्रभू पद पूज ही।।
मंदरमेरू नंदनवन जिनगृह जजों।
इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्र वंद्य जिनपद भजों।।1।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंकुम चंदन रस कंचनद्रव[1] सम दिपे।
जिनपद पंकज पूज सकल आतप मिटे।।मंदरमेरु.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

साठी तंदुल चंद्र किरण सम सोहने।
जिनपद सन्मुख पुंज देय मन मोहने।।मंदरमेरु.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

1.पिघले हुए सुवर्ण।

पाटल चंपक वकुल केतकी लायके।
भवशर[1] नाशन हेतु, जजों गुण गायके।।
मंदरमेरू नंदनवन जिनगृह जजों।
इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्र वंद्य जिनपद भजों।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरी फेनी गुझिया, व्यंजन घृत भरे।
तुम पद पूजन भव भव रोग क्षुधा हरे।।मंदरमेरु.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनकदीप सब तिमिर पुंज नाशन करे।
जिनपद पंकज पूजत अघ तम क्षय करे।।मंदरमेरु.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर वर मिश्रित धूप जलायते।
जिनपद पूजन करते, पाप पलायते।।मंदरमेरु.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मातुलिंग[2] फल नींबू कर्कटिका[3] लिये।
सरस मधुर फल लाय, चढ़ाऊँ नित नये।।मंदरमेरु.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सलिल गंध तंदुल सुम चरु दीपक लिये।
धूप फलों से युक्त अर्घ अर्पण किये।।मंदरमेरु.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1.कामवाण। 2.बिंजौरा। 3. ककड़ी।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करुँ, तिहुँजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिन चरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–

–दोहा–

परम अतीन्द्रिय ज्ञानमय, परमसिद्ध भगवान।
तिनके श्रीप्रतिबिंब को, नितप्रति करुँ प्रणाम।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–गीता छन्द–

वर द्वीप पुष्कर अर्ध में, मंदरगिरी कनकाभ है।
जिनवर न्हवन से पूज्य उत्तम, सुरगिरी विख्यात है।।
नंदन विपिन[1] पूरब दिशी, जिनगेह अनुपम मणिमयी।
पूजूँ सकल जिनबिंब को, जो वीतरागी छविमयी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज और पर का करे अंतर, जो निरन्तर मुनिवरा।
विचरण करें जिनवंदना हित, वे सदैव दिगंबरा।।
नंदन विपिन दक्षिण दिशी, जिनगेह अनुपम मणिमयी।।
पूजूँ सकल जिनबिंब को, जो वीतरागी छविमयी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनदक्षिणदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. वन।

यमराज का भय नाशते, सब कामना पूरी करें।
शुद्धात्म रस प्यासे मुनी की, भावना पूरी करें।।
नंदन विपिन पश्चिमदिशी, जिनगेह अनुपम मणिमयी।
पूजूँ सकल जिनबिंब को, जो वीतरागी छविमयी।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनपश्चिमदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव राग आग बुझावने, तुम भक्ति गंगा नीर है।
स्नान जो इसमें करें, उनकी हरे सब पीर हैं।।
नंदन विपिन उत्तर दिशी, जिनगेह अनुपम मणिमयी।
पूजूँ सकल जिनबिंब को, जो वीतरागी छविमयी।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनउत्तरदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

भव भ्रमण चक्र समाप्त हेतू नाथ! तव शरणा लिया।
पूरी करो आशा सकल, पूर्णार्घ्य तव चरणा दिया।।
नंदन विपिन चारों दिशी जिनगेह अनुपम मणिमयी।
पूजूँ सभी जिनबिंब को, वे वीतरागी छविमयी।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनन्दनवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

मंदरमेरु सौमनस वन जिनालय पूजा

–स्थापना-रोला छंद–

मंदरमेरु चतुर्थ, वन सौमनस कहा है।
ताके चउदिश चार, जिनवर भवन तहां हैं।।
अकृत्रिम जिनबिंब, महिमा कौन बखाने।
आह्वानन विधि ठान, पूजत पाप पलाने।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथाष्टक–छंद त्रिभंगी–

(चाल-क्षीरोदधि गङ्गा....)

गंगा तीरथ जल, निर्मल शीतल, वासित परिमल भर लायो।
तुम पद त्रयधारा, कर सुखकारा, अघ मलहारा सुख पायो।।
सुरगिरि मंदरवर, सौमनसं कर, जिनवर मंदर नित ध्याऊँ।
गणधर नित वंदें, कर्म निकंदे, मन आनंदे गुण गाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

वर कुंकुम चंदन, भव दुख भंजन, तुम पद चर्चन हित आयो।
अलि[1] गण नित चुंबित, गंध सुगंधित, मन आनंदित घिस लायो।।सुर.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सित[2] कलम अखंडित, दुरित विहंडित, शशिकर लज्जित भर लायो।
जिनवर पद सरसिज, पुंज सुविरचित, यममद तर्जित करवायो।।

1. भौंरा। 2. सफेद ।

सुरगिरि मंदरवर, सौमनसं कर, जिनवर मंदर नित ध्याऊँ।
गणधर नित वंदें, कर्म निकंदे, मन आनंदे गुण गाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार प्रसूनं, मनहर रूपं, गंध सुगंधित दश दिक्कं।
जिनचरण सरोजं, हरत मनोजं[1], चर्चत नाशे भव दिक्कं।।सुर.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शर्कर घृत पूपं, वटक अनूपं, पायसरूपं चरु लायो।
क्षुध व्याधि हरंता, अमृत संता, स्वात्मसुधारस छलकायो।।सुर.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिदीपक दीपे, भ्रम तम छीजे, सकल भुवन उद्योत करे।
निजघट परकासे, निजसुख भासे, मन मंदिर प्रद्योत करे।।सुर.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध सुगंधी, दशदिश गंधी, अग्नी संग कर नित ज्वाले।
अतिधूम उड़ंता, कर्म जलंता, शिवपद पंथा उजियाले।।सुर.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर मोसम्बी, निंबु नरंगी, सेब श्रीफल भर थारी।
जिनपद पंकेजं, कल्पतरूसम, पूजूँ इच्छित फलकारी।।सुर.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत, फूल सुनेवज, दीप धूप फल ले आयो।
वर अर्घ्य सजायो, मन उमगायो, तुमहिं चढ़ायो गुण गायो।।

1. कामदेव।

सुरगिरि मंदरवर, सौमनसं कर, जिनवर मंदर नित ध्याऊँ।
गणधर नित वंदें, कर्म निकंदे, मन आनंदे गुण गाऊँ।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि सम श्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुँ जगशांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

विमल ध्यानमय सौम्य छवि, जिनवर बिंब अनूप।
पुष्प समर्पण कर जजूँ, मिले निजातम रूप।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

मंदरमेरू माहिं, वन सौमनस सुहावे।
पूरब दिश जिनगेह, पूजत सौख्य उपावे।।
राग द्वेष अर मोह, शत्रु महा दुःख देते।
तुम भक्ती परसाद, तुरत नशे त्रय एते।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनपूर्वदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु चतुर्थ महान, वन सौमनस बखाना।
दक्षिण दिश जिनधाम, मृत्युंजय परधाना।।राग द्वेष.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनदक्षिणदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदरमेरु अनूप, वन सौमनस विशाला।
पश्चिम दिश जिनवेश्म, देता सौख्य रसाला।।
राग द्वेष अर मोह, शत्रु महा दुःख देते।
तुम भक्ती परसाद, तुरत नशे त्रय एते।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनपश्चिमदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदरमेरू माहिं, वन सौमनस कहा है।
उत्तर दिश जिनधाम, शाश्वत शोभ रहा है।।राग द्वेष.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनउत्तरदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

चारों दिश जिनगेह, अकृत्रिम अविनाशी।
मृत्युंजयि जिनबिंब, अतुल अमल गुणराशी।।
पूरण अर्घ्य संजोय, श्रद्धा भाव बढ़ायो।
पूरण निजपद हेतु, तुम पद कमल चढ़ायो।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परि पुष्पांजलिः।

मंदर मेरु पांडुकवन जिनालय पूजा

–स्थापना –गीता छन्द–

पूर्वार्ध पुष्कर द्वीप में, मंदर सुमेरू सुर नमें।
पांडुकवनी के चार दिश, जिन सद्म अनुपम परिणमें।।
चहुँगति भ्रमण भयभीत जन, जिन सद्म की पूजा करें।
मैं उन जिनेश्वर बिंब को, थापूं यहां श्रद्धा भरे।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थसर्वजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थसर्वजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थसर्वजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टक–(चाल–नंदीश्वर पूजन की)

यमुना का शीतल नीर, पावन जग ख्याता।
भव भव तृष्णा मिट जाय, पूजत सुख साता।।
मंदरमेरू जिनगेह, पांडुक उपवन में।
पूजूँ फिर फिर के नाहिं, आऊँ भव वन में।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर विमिश्रित गंध, सब दिश गंध करे।
पूजत जिनवर पद पद्म, कर्म कलंक हरे।।मंदरमेरू.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ता[1] फल सम सित शालि, अक्षत पुंज धरे।
उज्ज्वल आतम निधि पाय, भव भव पंक हरें।।

---

1. मोतीसम।

मंदरमेरू जिनगेह, पांडुक उपवन में।
पूजूँ फिर फिर के नाहिं, आऊँ भव वन में।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चंपक सुम हरसिंगार, सुरभित अलि आवें।
प्रभु पूजत काम निवार, अविचल सुख पावें।।मंदरमेरू.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शतछिद्रा[1] मोतीचूर, मोदक भर लायो।
निज भूख पिशाची दूर, करके प्रभु आयो।।मंदरमेरू.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक ज्वाला सब ध्वांत, क्षण में दूर करे।
तुम पूजत ज्ञान प्रकाश, भ्रमतम पूर हरे।।मंदरमेरू.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध अग्नि में ज्वाल, धूम्र सुगंधि करे।
भव भव के कर्म प्रजाल, सब जग द्वंद्व हरे।।मंदरमेरू.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला ककड़ी खर्बूज, आम्र अनार लिये।
उत्तम फल से जिन पूज, सम्यक् सार लिये।।मंदरमेरू.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादिक द्रव्य मिलाय, अर्घ्य भरूँ थाली।
सर्वारथ सिद्धी हेतु, अर्पूं गुणमाली।।मंदरमेरू.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. फेनी ।

–पूर्णार्घ्य–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि सम श्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुँजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिन चरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

*–अथ प्रत्येक अर्घ्य–*सोरठा–

नित्य निरंजन सिद्ध, परमाल्हाद निमग्न हैं।
तिनके श्री प्रतिबिंब, मैं नित पूजों भाव सो।।1।।

इति श्री मंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

नाराच छन्द–(चाल–पार्श्वनाथ देव सेव)

पुष्करार्ध पूर्व खंड द्वीप में सुमेरु है।
तास पांडुके वनी, सुपूर्व दिक्क में रहे।।
जैन वेश्म शासता जिनेश बिंब सोहने।
पूजहूँ चढ़ाय अर्घ्य कर्म कीच धोवने।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदराद्रि पांडुकेसु दक्षिणी दिशा तहाँ।
साधु वृंद वंदना जिनेश की करे वहाँ।।जैन वेश्म.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनदक्षिणदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु जो चतुर्थ है चतुर्थ रम्य जो बनी।
पश्चिमी दिशी सकल्प वृक्ष पंक्तियाँ घनी।।

जैन वेश्म शासता जिनेश बिंब सोहने।
पूजहूँ चढ़ाय अर्घ्य कर्म कीच धोवने।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनपश्चिमदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदराचले चतुर्थ, जो वनी प्रसिद्ध है।
उत्तरी दिशा तहाँ मनोज्ञता विशिष्ट है।।जैन वेश्म.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनउत्तरदिग्जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

मंदर गिरि पांडुकवनी श्री जिनभवन विशाल।
पूरण अर्घ्य चढ़ायहूँ, मिटे सकल जंजाल।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

कानन चार विशाल, मंदरमेरू चार दिश।
षोडश जिनगृह पूज, अब गाऊँ जयमालिका।।1।।

चाल– शेर (हे दीनबन्धु...)

जय पुष्करार्ध द्वीप पूर्व खंड भाग में।
जय मंदराद्रि क्षुद्र मेरु मध्य भाग में।।
जय मेरु तुंग योजनों से सहस चुरासी।
जय भूमि पे ही भद्रसाल रम्य विभासी।।2।।

उसके चतुर्दिशा में, जैन गेह चार हैं।
जिनमें रतनमयी सभी, रचना अपार हैं।।
बस पाँस सौ योजन हि जाय, नंदनाख्य वन।
चारों दिशा में चार, जैन सद्म को वंदन।।3।।

इस पे से साढ़े पचपनी, हजार योजना।
ऊपर में जाके सौमनस्य वन अतुल घना।।
इसकी चतुर्दिशा में चार जैन सद्म हैं।
जो इन्द्र चक्रवर्ति औ फणीन्द्र वंद्य हैं।।4।।

इस वन से अट्ठाईस सहस योजनों जाके।
पांडुक वनी में चार जैन भवन बता के।।
इस वन की चार विदिश में हैं चार शिलायें।
जिन जन्म न्हवन से पवित्र पुण्य मिलायें।।5।।

इक भरत क्षेत्र और ऐरावत सुक्षेत्र के।
अरु पूर्व अपर के सभी बत्तिस विदेह के।।
जो तीर्थ चलाते सदा तीर्थेश वही हैं।
उनके सदा जन्माभिषेक की जो मही हैं।।6।।

इन पुण्य शिलाओं की सदा वंदना करें।
भव पंक क्षालने को सदा अर्चना करें।।
सोलह जिनालयों के सर्व जैनबिंब को।
है बार बार वंदना त्रिलोक वंद्य को।।7।।

जिनबिंब एक सौ सुआठ सर्व भवन में।
वे पांच सौ धनुष उतुंग जैन भवन में।।
रत्नों के सिंहविष्टरों[1] पे राजते सदा।
पद्मासनों से पूर्ण अचल भासते सदा।।8।।

है वीतराग सौम्य छवि चित्त मोहनी।
नासाग्र दृष्टि ध्यानमग्न शांत सोहनी।।

1. सिंहासन ।

मणि मोतियों के छत्र फिरे दुर रहे चंवर।
नित भक्ति करे आन वहां अप्सरा अमर।।9।।

संसार विपिन के लिये पावक प्रचंड हो।
हे नाथ! भव समुद्र हेतु तुम तरंड हो।।
चैतन्य सुधाकर के लिये चंद्रमा तुम्हीं।
मोहांधकार नाश हेतु अर्यमा[1] तुम्हीं।।10।।

त्रैलोक्य नाथ! आज तेरी शरण में आया।
करूणा करो हे देव! मैं मोहारि सताया।।
अब दीनबंधु! शीघ्र ही सहाय कीजिये।
बस आपके ही पास में बुलाय लीजिये।।11।।

–घत्ता–

जो जिनपद पूजें, सब अरि धूजें, कर्मबली बलहीन बने।
सो 'ज्ञानमती' कर मुक्तिवधू वर, फेर न भव कांतार भ्रमें।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. सूर्य।

(पूजा नं.23)

मन्दरमेरु संबंधि चार गजदंत जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–अडिल्ल छंद–

मंदरमेरू विदिश चार गजदंत हैं।
तापे शाश्वत जैनभवन विलसंत हैं।।
इन्द्रादिक नित आय, झुकाते माथ को।
आह्वानन कर पूजूँ, शिवतिय नाथ को।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टक–रोला छंद–(अहो जगत गुरुदेव)

रेवा नदी सुतीर्थ, सलिल भर कंचन झारी।
जन्म जरा अरु मरण, ताप नाशो गुणधारी।।
मंदरमेरू पास, चार गजदंत कहे हैं।
ताके जिनगृह पूज, समकित रतन गहे हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि घनसार, सौरभ अति गुंजारे।
रोग शोक हर नाथ, पदयुग जजूँ तुम्हारे।।

मंदरमेरू पास, चार गजदंत कहे हैं।
ताके जिनगृह पूज, समकित रतन गहे हैं।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र किरण समश्वेत, तंदुल धोय चढ़ाए।
रत्नत्रय निधि हेतु, पूजूँ मन हरषाए।।मंदरमेरू.।।3।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

परिजात अरविंद, कुंद प्रसून चढ़ाऊँ।
मकरकेतुजितनाथ[1], हरष हरष गुण गाऊं।।मंदरमेरू.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत शर्कर क्षीरान्न, घेवर मोदक लीने।
शक्ति अनंत जिनेश, तुम पद पूजन कीने।।मंदरमेरू.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमपात्र घृतपूर, ज्योति उद्योत करे है।
मन मंदिर का मोह, नाश उद्योत करे है।।मंदरमेरू.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर वर धूप, चहुँदिश धूम करे है।
कर्म कलंक जलाय, क्षण में सौख्य भरे है।।मंदरमेरू.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जंभीरी नारंग, दाडिम आम्र मंगाये।
उत्तम शिवफल हेत, जिनवर चरण चढ़ाये।।

1.कामदेव

मंदरमेरू पास, चार गजदंत कहे हैं।
ताके जिनगृह पूज, समकित रतन गहे हैं।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधाक्षत फूल, नेवज दीप जलाके।
धूप फलों से पूर्ण, अर्घ्य चढ़ाऊं आके।।मंदरमेरु. 9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्री जिनचरण सरोज, धारा देते भव मिटे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरतरु के सुम लेय, प्रभु पद में अर्पण करूँ।
कामदेव मद नाश, पाऊँ आनंद धाम मैं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

पूर्व सुपुष्कर द्वीप, चारों में विदिशा कहे।
चार गिरी गजदंत, तिनके जिनमंदिर जजूं।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–अडिल्ल छंद–

मंदरमेरु महान विदिश आग्नेय है।
हस्तिदंत सौमनस रजत छवि देय है।।
मीनकेतु जितनाथ जिनालय मणिमयी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय चहूँ गुण शिवमयी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिआग्नेयदिक्स्थितसौमनसगजदन्तपर्वत-सिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरगिरि चौथे भूमि विदिश नैऋत्य है।
विद्युत्प्रभ गजदंत कनक छवि देय है।।
मीनकेतु जितनाथ जिनालय मणिमयी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय चहूँ गुण शिवमयी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनैऋत्यविदिक्स्थितविद्युत्प्रभगजदन्तसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधमादनाचल वायव्य विदिश कहा।
कनक कांतिमय अकृत्रिम अनुपम रहा।।
मीनकेतु जितनाथ जिनालय मणिमयी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय चहूँ गुण शिवमयी।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिवायव्यविदिक्स्थितगंधमादनगजदन्तपर्वत-सिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माल्यवंत गजदंत, विदिश ईशान में।
नीलमणी सम कांति, कूट नव तास में।।
मीनकेतु जितनाथ जिनालय मणिमयी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, चहूँ गुण शिवमयी।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिईशानविदिक्स्थितमाल्यवंतगजदन्तपर्वत-सिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

चार कोण में चार कहे गजदंत जो।
हस्तिदंत सम लम्बे हैं अन्वर्थ जो।।
उनपे श्री जिनमंदिर अनूपम राजते।
जिनप्रतिमा को पूजत ही दुख भाजते।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्विदिक्स्थितचतुर्गजदन्तपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

सोरठा– **गजदंतों के चार, जिनचैत्यालय शासते।**
तिनकी गुण मणिमाल, मैं अब गाऊँ भाव से।।1।।

रोलाछंद– **जय जय मंदरमेरु, विदिशा के गजदंता।**
जय जय श्री जिनगेह, भव भव पाप हरंता।।
जय जय सौमनसाद्रि, विद्युत्प्रभ अभिरामा।
निषधाचल अर मेरु संस्पर्शे शुभ नामा।।2।।
गंधमादनो नाम, माल्यवान अभिरामा।
नीलगिरी अर मेरु संस्पर्शे गुण धामा।।
प्रथम तृतिय पर सात, कूट मनोहर सोहें।
दुतिय चतुर्थे माहिं, नव नव हैं मन मोहे।।3।।
मेरु निकट के कूट सिद्धायतन कहे हैं।
उनमें श्री जिनगेह, शाश्वत सिद्ध रहे हैं।।
शेष कूट पे रम्य, देवों के गृह माने।
देवगृहों के मध्य, श्री जिनभवन बखाने।।4।।
नग के दोनों ओर, रम्य तलहटी जानो।
उपवन वेदी छोर, मणिमय तोरण मानो।।
गिरि ऊपर दो ओर, वेदी उपवन सोहें।
वापी तरुवर पंक्ति, सुरनर के मन मोहें।।5।।
चारण ऋषिगण आय, जिन स्तवन करे हैं।
आतम ध्यान लगाय, अन्तर्द्वंद हरे हैं।।
अकृत्रिम जिनबिंब, वंदे पाप नशावें।
परमान्द पियूष, पीकर निज सुख पावें।।6।।
स्वर्गपुरी से नित्य, सुर-सुरललना आके।
वीणा आदि बजाय, नृत्य करें गुण गाके।।
विद्याधर नर नार, जिनवर स्तुति पढ़े हैं।
मोह महारिपु मार, शिव सोपान चढ़े हैं।।7।।

वीतराग जिनमूर्ति निरख निरख हरषाते ।
भविजन तुम गुण गाय निज मन कमल खिलाते।।
ग्रन्थों के विस्तार, तुम गुणमाल कहें हैं।
गणधर भी गुण रत्न, गणत न पार लहें हैं।।8।।
इस विध सुन तुम कीर्ति, मैंने शरण लही है।
जो कुछ हो कर्त्तव्य, करिये आज वही है।।
हे प्रभु! तुमको छोड़ और नहीं मुझ स्वामी।
जो चाहो सो नाथ! करिये अंतरयामी।।9।।
मुझको कुछ ना चाह, एक यही अब चाहूं।
सब संकल्प विकल्प, तज तेरे गुण गाऊँ।।
हे देवों के देव, करो कामना पूरी।
तुम त्रिभुवन के नाथ! रहे न बात अधूरी ।।10।।

–घत्ता–

तुम गुणमणिमाला, जगप्रतिपाला, जो भविजन कंठे धरहीं।
सो 'ज्ञानमती' ले, निज संपति ले, तत्क्षण भवसागर तरहीं।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिविदिक्स्थितचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.24)

मन्दरमेरु सम्बन्धी पुष्करतरू शाल्मलितरू जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–नरेन्द्र छंद–

पुष्करतरु से अंकित पुष्कर, द्वीप जु सार्थक नामा।
सुरगिरि के दक्षिण-उत्तर में, भोग भूमि अभिरामा।।
उत्तरकुरु ईशान कोण में, पद्मवृक्ष मन मोहे।
देवकुरू नैऋत में शाल्मलि, तरु पे सुरगण सोहें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टक–लक्ष्मीधरा छंद–(नाथ तेरे कभी होते...)

तीर्थवारी महास्वच्छ झारी भरी।
तीर्थकर्तार के पाद धारा करी।।
दो तरू शाख पे दोय जिनमंदिरा।
पूजते जो उन्हें लेय शिव इंदिरा[1]।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णद्रव के सदृश कुंकुमादी लिये।
राग की दाह को मेटने पूजिये।।

1. लक्ष्मी।

दो तरू शाख पे दोय जिनमंदिरा।
पूजते जो उन्हें लेय शिव इंदिरा।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सोम[1] रश्मी सदृश श्वेत अक्षत लिये।
आत्मनिधि पावने पुंज रचना किये।।दो तरू.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्द मंदार मल्ली सुमन ले लिये।
मारहर[2] नाथ पादाब्ज में अर्पिये।।दो तरू.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यःपुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

गूझिया औ तिकोने भरे थाल में।
भूख व्याधी हरो नाथ पूजूँ तुम्हें।।दो तरू.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रज्वलित दीप लेके करूं आरती।
चित्त में हो प्रगट ज्ञान की भारती।।दो तरू.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशगंध ले अग्नि में खेवते।
मोह शत्रू जले आप पद सेवते।।दो तरू.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम नींबू नरंगी सु अंगूर हैं।
पूज लें आत्मपीयूष को पूर हैं।।

1. चन्द्रकिरण। 2. कामहर।

दो तरू शाख पे दोय जिनमंदिरा।
पूजते जो उन्हें लेय शिव इंदिरा।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंधादि ले स्वर्ण थाली भरूँ।
नाथ पद पूजते सर्वसिद्धी वरूं।।दो तरू.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर, कंचन झारी में भरा।
जिनपद धारा देत, शांति करो सब लोक में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल कमल अरविंद, सुरभित फूलों को चुने।
जिनपद पंकज अर्प्य, यश सौरभ चहुँ दिश भ्रमे।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

पृथ्वीकायिक वृक्ष, सर्वरत्नमय सोहने।
ताके श्रीजिन सद्म, मन वच तन से पूजहूँ।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

मंदरमेरू से इशान में पद्मवृक्ष[1] रत्नों का।
उसकी उत्तर शाखा पे है, जिनमंदिर भव नौका।।
जलगंधादिक अर्घ्य सजाकर, नित प्रति पूज रचाऊँ।
परम अतीन्द्रिय ज्ञान सौख्यमय, अविचल पद को पाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिईशानकोणेपुष्करवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जम्बूद्वीपपण्णत्ति पृ.192 पर पुष्कर वृक्ष को पद्मवृक्ष कहा है। यथा-'दीण्हं वरपउरुक्खाणं''।

सुरगिरि के नैऋत्य कोण में, शाल्मली तरु जानो।
उसकी दक्षिण शाखा पर, जिनगेह अकृत्रिम मानो।।
जलगंधादिक अर्घ्य सजाकर, नित प्रति पूज रचाऊँ।
परम अतीन्द्रिय ज्ञान सौख्यमय, अविचल पद को पाऊँ।।।।2।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनैऋत्यकोणेशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा–

पुष्कर शाल्मलि वृक्ष के, अमित[1] वृक्ष परिवार।
तिन सबके जिनगेह को, पूजूँ भवदधि तार।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सारेठा–

स्वयंसिद्ध जिनराज, अकृत्रिम जिनगेह में।
पूर्ण करो मम आश, गाऊँ अब जयमालिका।।1।।

तोटक छंद (चाल–जय केवल भानु....)

जय पुष्कर वृक्ष महाफलदं, जय शाल्मलि वृक्ष महासुखदं।
जय वृक्ष तने जिनमंदिर को, जय सिद्धिवधू प्रिय जिनवर को।।2।।

तरु में मरकतमणि नीलम के, कर्केतन स्वर्णमयी पत्ते।
बहुवर्ण रतनमय अंकुर हैं, रतनों के फल औ पुष्प कहे।।3।।

तरु सिद्ध अनादि अनंत कहे, तहं चामर किंकणि आदि रहें।
अति तुंग सघन द्रुम शोभ रहे, शुभ वायु चले हिलते तरु हैं।।4।।

1. अगणित

इन शाख विषे जिनमंदिर जी, महिमा वरणंत पुरंदर[1] जी।
सुर इंद्र नरेंद्र फणीन्द्र सदा, गुण गावत भक्ति भरे सु मुदा।।5।।

जिननाथ! त्रिलोक पिता तुम हो, तुमही भववारिधि तारक हो।
बिन कारण बंधु तुम्हीं प्रभु हो, तिहुंलोक तने तुमही गुरु हो।।6।।

तुम शंकर विष्णु विधी तुम ही, तुम बुद्ध हितंकर ब्रह्म तुम्हीं।
भुवनैक शिरोमणि देव तुम्हीं, शरणागत रक्षक देव तुम्हीं।।7।।

तुम ज्योति चिदंबर मुक्तिपती, तुम पूर्ण दिगंबर विश्वपती।
सरवारथसिद्धि विधायक हो, समता परमामृत दायक हो।।8।।

तुम भक्त मनोरथ पूर्ण करें, क्षण में निज संपति पूर्ण भरें।
यमराज महाभट चूर्ण करें, वर 'ज्ञानमती' सुख तूर्ण वरें।।9।।

–घत्ता–

तुम जिनवर भास्कर, कर्म भरम हर, शिव संपति कर शरण लही।
जो तुम गुणमाला, पढ़े रसाला, सो पावहिं शिव सौख्य मही।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. इन्द्र 1. शीघ्र

(पूजा नं.25)

मन्दरमेरु संबंधि सोलह वक्षार जिनालय पूजा

अथ स्थापना–गीता छंद

मंदरगिरी के पूर्व पश्चिम, सीत सीतोदा बहें।
उनके उभय तट की तरफ, वक्षार सोलह हैं कहें।।
स्वर्णाभतनु गिरि पे जिनेश्वर, भवन सोलह जानिये।
आह्वानना करके सदा, जिनदेव पूजन ठानिये।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्

–अथाष्टक–तोटक छंद–

पद्माकर[1] नीर भरे कलसा, पद पंकज धार करूं हरसा।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि चंदन स्वर्णसमा, जिनपाद जजूँ नित माथ नमा।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पद्म सरोवर ।

सित अक्षत चंद्र समान लिये, प्रभु पुंज करूं तुम संमुख ये।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मचकुंद गुलाब, जुही सुमना, मदनारिजयी को जजूँ सुमना।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत पूरित मालपुआदि लिये, क्षुधरोग विनाश करो प्रभु ये।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि दीप कपूर जले उसमें, जिनपूजत मोह नशे क्षण में।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध हुताशन[1] संग जले, अरि कर्म चमू[2] भयवंत टले।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल आम्र अनार सुथाल भरे, फल उत्तम इच्छित सौख्य भरे।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. अग्नि। 2. सेना ।

जल आदिक द्रव्य लिये कर में, तुम पूजत इष्ट लहूँ वर मैं।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सीतानदी सुनीर, जिनपद पंकज धार दे।
वेग हरूं भवपीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पद अरविंद, पूजत ही सुख संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

परमानंद पयोधि में, मग्न रहें जिनराज ।
तिनकी पूजा हेतु मैं, सुमन चढ़ाऊँ आज।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिवक्षारनगस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

मंदरमेरू सीतानदि के, उत्तर में वक्षारा।
भद्रसाल वेदी के सन्निध ''चित्रकूट'' अति प्यारा।।
तापर चार कूट नदि सन्निध, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितचित्रकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

''पद्मकूट'' वक्षार दूसरा, वन उपवन से सोहे।
सुर किन्नर गन्धर्व खगेश्वर, जिन गुण गाते सोहें।।
मृत्युंजयि की प्रतिमा राजे, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितपद्मकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

''नलिनकूट'' वक्षार अचल है, अनुपम निधि को धारे।
देव देवियाँ भक्ति भाव से, आ जिन सुयश उचारें।।
कर्मविजयि[1] की प्रतिमा उसमें, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितनलिनकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

''एकशैल'' वक्षार अचल पे, अगणित भविजन आते।
सम्यक्रत्न हाथ में लेते, जिनवर के गुण गाते।।
मृत्युंजयि की प्रतिमा सुन्दर, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितएकशैलवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के उत्तर में, जो देवारण्य समीपे।
गिरि वक्षार ''त्रिकूट'' नाम का, कनक वर्णमय दीपे।।
ता पर चार कूट नदि पासे, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितत्रिकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षाराचल नाम ''वैश्रवण'' शोभे सुरभवनों से।
इन्द्रचक्रवर्ती धरणीपति, पूजें नित रतनों से।।
मृत्युंजयि की प्रतिमा सुन्दर, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितवैश्रवणवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अंजन' नग वक्षार मनोहर शाश्वत सिद्ध कहा है।
सुरललनायें क्रीड़ा करतीं, अद्भुत ऋद्धि जहाँ है।।

1. कर्म को नाश करने वाले जिनेन्द्र।

मृत्युंजयि की प्रतिमा सुन्दर, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितअंजनवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आत्मांजन' वक्षार आठवां, सुर किन्नर मिल आवें।
जिनमहिमा को समझ समझकर, समकित ज्योति जगावें।।मृत्युं.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितआत्मांजनवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर विदेह नदी सीतोदा, दक्षिण दिश में जानो।
भद्रसाल ढिग वक्षाराचल, 'श्रद्धावान' बखानो।।मृत्युं.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितश्रद्धावान्वक्षारपर्वतसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजटावान' अचल सुन्दर है, वेदी उपवन तापे।
इंद्र नमन करते मणियों युत, विलसत मुकुट झुकाके।।मृत्युं.।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितविजटावान्वक्षारपर्वतसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आशीविष' वक्षार अकृत्रिम, द्रुमपंक्तीवन सोहे।
विद्याबल से श्रावकगण आ, पूजन कर मल धोवें।।मृत्युं.।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितआशीविषवक्षारपर्वतसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल 'सुखावह' सुख को देता, जो जिन गुण आलापे।
गगनगमनचारी ऋषियों के, पावन युगल वहाँ पे।।मृत्युं.।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितसुखावहवक्षारपर्वतसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा के उत्तर तट पे, भूतारण्य समीपे।
ताके सन्निध ''चन्द्रमालगिरि'', रचना अद्भुत दीपे।।

मृत्युंजयि की प्रतिमा सुन्दर, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितचन्द्रमालवक्षारपर्वतसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सूर्यमाल' वक्षार सूर्य सम, सुवरण आभा धारे।
सुरवनिताएँ नित आ आकर, जिनवर कीर्ति उचारें।।मृत्युं.।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितसूर्यमालवक्षारपर्वतसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नागमाल' वक्षार अनूपम, विद्याधरगण आवें।
जन्म जन्म दुःख नाशन कारण, जिनवर के गुण गावें।।मृत्युं.।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितनागमालवक्षारपर्वतसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'देवमाल' वक्षार गिरी पे, देव देवियां आके।
वीणा ताल मृदंग बजा कर, नृत्य करें हर्षाके ।।मृत्युं.।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितदेवमालवक्षारपर्वतसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–अडिल्ल छन्द–

मंदरमेरू के पूरब पश्चिम विषे।
सोलह गिरि वक्षार अकृत्रिम नित दिसें।।
ताके सोलह जिनमंदिर पूजों सदा।
रोग शोक दुःख दारिद नहिं होवे कदा।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

भवविजयी जिनराज हैं, भव संकट हरतार।
भविजन तुम गुण गायके, होते भवदधि पार।।1।।

शम्भु छन्द

जय जय मंदरमेरू चौथा, ताके पूरब दिश सीता है।
जय जय सुरगिरि के पश्चिम दिश, सीतोदा नदी सुगीता है।।
दोनों नदि के दक्षिण उत्तर, हैं चार चार वक्षारगिरी।
नदि कहीं विभंगा मध्य-मध्य, जो द्वादश हैं जल स्वच्छ भरी।।2।।

इन पर्वत और नदी के मधि, वर क्षेत्र विदेह कहाते हैं।
ये अंतराल के क्षेत्र सभी, बत्तीस गिनाए जाते हैं।।
इन सबमें आरजखंड कहे, उनमें तीर्थंकर होते हैं।
चक्री बलदेव हरी प्रतिहरि, ये महापुरुष नित होते हैं।।3।।

वक्षार गिरी हैं सब सोलह, जो कनकवर्ण आभाधारी।
सब में हैं कूट सुचार चार, मणि कंचनमय शोभाकारी।।
प्रत्येक गिरी पर नदी निकट, जो सिद्धकूट कहलाता है।
उसमें अकृत्रिम स्वयंसिद्ध, जिनमंदिर शोभा पाता है।।4।।

जिनभवनों में जिनप्रतिमायें, हैं शाश्वत सिद्ध कही जातीं।
बहु रत्नों की सुन्दर आकृति, छवि वीतराग मन को भाती।।
रत्नों के सिंहासन ऊपर, प्रतिमा पद्मासन से राजें।
भामंडल की कांती ऐसी, जिससे कोटी सूरज लाजें।।5।।

मणि मुक्ता लटक रहीं जिनमें, त्रय छत्र फिरें महिमाशाली।
ढोरें नित चौंसठ चमर यक्ष, निर्झर तम श्वेत चमकशाली।।
वसु मंगल द्रव्य अनूपम हैं, मंगल घट धूप घड़े शोभें।
मणि कंचन की मालायें औ, पुष्पों की माला मन लोभें।।6।

मानस्तंभों में जिनमूर्ती, दर्शन कर मान गलित होवे।
सब अद्भुत रचना रत्नमयी, दर्शक का मिथ्या मल धोवे।।
प्रतिमंदिर इक सौ आठ बिंब, सब पाप कलाप नशाते हैं।
मुक्तीलक्ष्मी के प्रिय वल्लभ, सबको शिवमार्ग दिखाते हैं।।7।।

जो दर्शन पूजन करते हैं, वे रत्नत्रय निधि पाते हैं।
जो वंदन करें परोक्ष सदा, वे भी स्वातम सुख पाते हैं।।
बस नाथ! सुयश तुम सुन करके, चरणों में आन पुकारा है।
अब मुझको भी प्रभु पार करो, बस तेरा एक सहारा है।।8।।

–घत्ता–

सब कर्म निकंदा, हर भव फंदा, आनंदकंदा जो ध्यावें।
निज 'ज्ञानमती' कर, निज संपति भर, मुक्तिरमा वर सुख पावें।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरूसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितषोडशसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.26)

मन्दरमेरु संबंधि चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छंद–

वर अर्ध पुष्करद्वीप में, जो मेरु मंदर नाम है।
ताके सुपूरब अपर में, बत्तीस देश ललाम हैं।।
दक्षिण सु उत्तर भरत ऐरावत कहे जो क्षेत्र हैं।
चौंतीस इनके मध्य रूपाचल अकृत्रिम देह हैं।।1।।

–दोहा–

इनके चौंतिस जिनभवन, जिनप्रतिमा गुणखान।
थापूं भक्ति समेत मैं, करो सकल कल्याण।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरोःपूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरोःपूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरोःपूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–नाराच छंद–

(चाल–पार्श्वनाथ देव सेव....)

तीर्थरूप शुद्ध स्वच्छ सिंधु नीर लाइये।
गर्भवास दुःख नाश आप को चढ़ाइये।।

रूप्य अद्रि के जिनेन्द्र, गेह पूजते चलो।
रोग शोक नाश के, अखंड सौख्य ले भलो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंकुमादि अष्टगंध, से जिनेन्द्र पूजिये।
राग आग दाह नाश, पूर्ण शांत हूजिये।।रूप्य अद्रि.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र तुल्य श्वेत शालि, पुंज को रचाइये।
देह सौख्य छोड़ आत्म, सौख्य पुंज पाइये।।रूप्य अद्रि.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंद केतकी गुलाब, वर्ण वर्ण के लिए।
मारमल्लहारि[1] तीर्थनाथ चर्ण में दिये।।रूप्य अद्रि.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खीर पूरिका जलेबियाँ भराय थाल में।
आप पाद पूजते क्षुधा महाव्यथा हने।।रूप्य अद्रि.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप में कपूर ज्योति अंधकार को हने।
आरती करंत अंतरंग ध्वांत को हने।।रूप्य अद्रि.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप गंध लेय अग्निपात्र में जलाइये।
मोह कर्म भस्म को, उड़ाय सौख्य पाइये।।

---

1. कामदेव विजयी।

रूप्य अद्रि के जिनेन्द्र, गेह पूजते चलो।
रोग शोक नाश के, अखंड सौख्य ले भलो।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मातुलिंग[1] आम्र सेव सन्तरा मंगाइये।
आप पूजते हि सिद्धि संपदा सुपाइये।।रूप्य अद्रि.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंध अक्षतादि अर्घ्य को बनाइये।
मुक्ति अंगना निमित्त नाथ को चढ़ाइये।।रूप्य अद्रि.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

गंगनदी को नीर, तुम पद में धारा करूं।
शांति करो जिनराज, चउसंघ को सबको सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्व सौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

बत्तिस क्षेत्र विदेह, भरतैरावत एक इक।
सब चौंतिस जिनगेह, पुष्पांजलि कर पूजहूँ।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिविजयार्धपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

1. विजौरा।

–गीताछंद-

मंदर सुमेरू पूर्व में सीता नदी के उत्तरे।
वन भद्रसाल समीप 'कच्छा' देश अति सुन्दर शरे।।
तामध्य रूपाचल अतुल नवकूट से मन को हरे।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुपम 'सुकच्छा' देश में, षट् खंड रचना जानिये।
तामध्य विजयारध अतुल बहुभांति महिमा मानिये।।
विद्याधरी वीणा बजाकर, भक्ति भर पूजा करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुकच्छादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुंदर 'महाकच्छा' कहा, तामध्य रूपाचल सही।
वन वेदिका वापी सुरों के, गेह की अनुपम मही।।
मुनिवृंद करते वंदना, निज कर्म कलिमल को हरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहाकच्छादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कच्छकवती' सुविदेह में, रचना अकृत्रिम जानिये।
तामध्य रूपाचल अतुल, नवकूट संयुत मानिये।।
आकाशगामी ऋषि मुनी, श्रावक सदा भक्ती करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छकावतीदेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर देश 'आवर्ता' सरस, तामध्य विजयारध गिरी।
गाते जिनेश्वर का सुयश नित, यक्ष किन्नर किन्नरी।।

शाश्वत जिनालय वंदना, करते भविक भक्ती भरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थआवर्तादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है क्षेत्र 'लांगलिवर्तिका' भविजन सदा जन्में वहां।
भव बल्लियों को काट कर, शिव प्राप्त कर सकते वहां।।
इस मध्य रजताचल सुखद, बहु भव्य के कल्मष हरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थलांगलावर्तादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धन धान्य पूरित संपदा यह 'पुष्कला' वर देश है।
जिस मध्य रूपाचल कहा, हरता भविक मन क्लेश है।।
देवांगनायें नित मधुर संगीत जहँ पर उच्चरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'पुष्कलावति' देश में, विजयार्ध बीचोंबीच है।
नवकूट में इक जिनसदन[1], नाशे भविक भव कीच है।।
स्वात्मैक परमानंद अमृत, के रसिक गुण विस्तरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वत्सा' विदेह अतुल्य ता मधि, आर्यखंड निरापदा।
इस देश के बस बीच में है, रूप्यगिरि वर शर्मदा[2]।।

1. जिनमंदिर। 2.सुखदाता ।

त्रैलोक्यनायक के गुणों की, कीर्ति बुधजन विस्तरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर 'सुवत्सा' देश में शाश्वत रजतगिरि सोहना।
नवकूट रत्नों के बने, सुरसद्म से मन मोहना।।
सुर अप्सरा मर्दल सुवीणा, को बजा नर्तन करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुवत्सादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनहर 'महावत्सा' विषे, विजयार्ध पर्वत सोहता।
गंधर्व देवों के मधुर संगीत, से मन मोहता।।
मुनि वीतरागी के तहां, ध्यानाग्नि से भव वन जरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहावत्सादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'वत्सकावति' देश में, रूपादि अनुपम मानिये।
विद्याधरों की पंक्तियों से, भीड़ तहँ पर जानिये।।
इन्द्रादिगण आके वहां, मणिमौलि नत वंदन करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सकावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर देश 'रम्या' मध्य में, रजताद्रि रत्नों की खनी।
भव के विजेता नाथ की, महिमा जहां अतिशय घनी।।
सौ इन्द्र मिल कर पूजने को, आ रहे भक्ती भरे ।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरम्यादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुंदर 'सुरम्या' देश में, विजयार्ध पर्वत सोहना।
किन्नर गणों की बांसुरी, ध्वनि से मधुर मन मोहना।।
वर ऋद्धिधारी मुनि तहां, बहुभक्ति से विचरण करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुरम्यादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभदेश 'रमणीया' विषे, विजयार्ध गिरि रजताभ[1] है।
विद्याधरों[2] की श्रेणियां, जिन, मंदिरों से सार्थ हैं।।
नग तीन कटनी से सहित, बहु भांति की रचना धरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरमणीयादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'मंगलावति' देश में, रजताद्रि बीचोंबीच है।
जो जन नहीं श्रद्धा करें, रूलते सदा भव बीच हैं।।
खगपति[2] सदा परिवारयुत, जिनवर सुयश वर्णन करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमंगलावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–रोला छंद–

मंदरमेरू अपर, नदी के दक्षिण जानो।
भद्रसाल के पास, 'पद्मा' देश बखानो।।
मध्य अचल विजयार्ध जिनगृह से सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्यं चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. चाँदी का। 2. विद्याधरपति ।

देश 'सुपद्मा' जान, मधि रजताद्रि बखाना।
अनुपम सुख की खान, खेचरपति से माना।।
सिद्धकूट ता माहिं जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुपद्मादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महापद्मा' सुविदेह, रजताचल अभिरामा।
नवकूटों युत श्रेष्ठ, सुर गावें जिन नामा।।
सिद्धकूट ता माहिं जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहापद्मादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावती' तामधि रजतगिरी है।
कनक रतन से पूर्ण अविचल सौख्यश्री है।।
सिद्धकूट ता माहिं, जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मकावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' देश विदेह देव असंख्य वहां पे।
आते रहते नित्य प्रमुदित चित्त तहां पे।।
ताके मधि विजयार्ध, जिनगृह से सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थशंखादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिना' देश विदेह, भव्य नयन मन मोहे।
ताके मधि विजयार्ध नवकूटों युत सोहे।।

सिद्धकूट ता माहिं, जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थनलिनादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' देश विदेह, मध्य रजतगिरि सोहे।
भविमन कुमुद विकास, चन्द्र किरण सम सोहे।।
सिद्धकूट ता माहिं, जिनमंदिर सुखकारी।।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थकुमुदादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरिता' देश सुमध्य, अनुपम रजतगिरी है।
जिनवच सरिता तत्र, भविमन पंक हरी है।।सिद्ध.।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसरितादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा नदि जान, ताके उत्तर भागे।
'वप्रा' देश महान, रूपाचल मधि भागे।।सिद्ध.।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' रम्य, तामधि रजतगिरी है।
सुर ललनायें नित्य, आवें भक्ति भरी हैं।।सिद्ध.।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुवप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महावप्रादेश' तामें रहें नगेशा।
जिनगुण गाते नित्य, ब्रह्मा विष्णु महेशा।।सिद्ध.।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहावप्रादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वप्रकावती' रजताचल मधि धारे।
मुनिगण जिनवर दर्श, करते सुयश उचारें।।
सिद्धकूट ता माहिं, जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रकावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' देश विदेह, रूपाचल से सोहे।
स्वातम रस पीयूष, पीके मुनि शिव जोहें।।सिद्ध.।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगंधा' रम्य, जिनवच सुरभि वहां है।
जन मन होत सुगंध, नग विजयार्ध वहां है।।सिद्ध.।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुगंधादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' जान, जन मन कमल खिलावे।
मध्य रजत नग सिद्ध, जिनवच सुधा पिलावे।।सिद्ध.।।31।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधिलादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' देश, मधि रजताद्रि तहां है।
श्रद्धावंत मलंत, का सम्यक्त्व वहाँ है।।सिद्ध.।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधमालिनीदेशस्थितविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–कुसुमलता छंद–

पूरब पुष्कर द्वीप अर्ध में, 'भरतक्षेत्र' दक्षिण दिश जान।
बीचोंबीच कहा विजयारध, तिस ऊपर नव कूट महान।।

इनमें से इक सिद्धकूट पर, जिनमंदिर अविचल अभिराम।
गर्भवास दुख नाशन कारण, अर्घ्य चढ़ाय करूं परणाम।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभरतक्षेत्रस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंरदमेरू के उत्तर दिश, 'ऐरावत' वर क्षेत्र महान।
मध्य रजतगिरि चांदी सम है, त्रय कटनी युत अतुल निधान।।
तिस पर सिद्धकूट में जिनगृह, अकृत्रिम अनुपम सुखकार।
पुनर्जन्म दुःख नाशन हेतू, अर्घ्य चढ़ाय जजूँ रुचि धार।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

मंदरमेरू के पूरब औ, पश्चिम दिश बत्तीस विदेह।
दक्षिण अरु उत्तर दिश में हैं, भरतक्षेत्र ऐरावत एह।।
इन सबके मधि रजतगिरी हैं, चौंतिस रजतवर्ण उनहार।
सबके इक-इक चैत्यालय को, अर्घ्य चढ़ाय नमूं गुणधार।।35।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरोः पूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–*ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।

जयमाला

–दोहा–

दर्श ज्ञान सुख वीर्य ये, चार अनंत प्रमाण।
मेरे भी गुण पूरिये, चहुँगति से कर त्राण।।1।।

–सखी छंद–(चाल–आलोचना पाठ)–

पुष्कर वर पूर्व कहावे, मंदरगिरि मध्य सुहावे।
गिरि पूरब अपर दिशा में, बत्तिस विजयारध तामें।।2।।

दक्षिण दिश भरत सुक्षेत्रा, उत्तर ऐरावत क्षेत्रा।
इनके दो रजत गिरीशा, होते सब मिल चौंतीसा।।3।।
इन पे जिनधाम कहे हैं, वे सब भव क्लेश दहे हैं।
उन वंदत सकल सुरेशा, हम पूजत यहीं हमेशा।।4।।
मंदरगिरि पूर्व विदेहे, सीता नदि मध्य बहे हैं।
अठ क्षेत्र नदी उत्तर में, जिन 'भद्रबाहु' उन इक में।।5।।
अठ क्षेत्र नदी दक्षिण में, तीर्थेश 'भुजंगम' उनमें।
मंदरगिरि अपर विदेहे, सीतोदा नदी बहे है।।6।।
अठ क्षेत्र नदी दक्षिण में, 'ईश्वर' तीर्थंकर उनमें।
अठ क्षेत्र नदी उत्तर में, जिनवर 'नेमिप्रभ' उनमें।।7।।
ये चार जिनेश्वर नित ही, विहरें सु विदेहनि बिचहीं।
बत्तीस विदेह कहे हैं, तहं पे षट् खंड रहे हैं।।8।।
सबमें आरजखंड इक है, तीर्थंकर जनम सतत हैं।
ये शाश्वत तीर्थ करंता, नित विहरमाण भगवंता।।9।।
भविजन को नित सुख देते, भवभय संकट हर लेते।
यह सुन मैं शरणे आयो, भव भव दुख से अकुलायो।।10।।
हे नाथ! अरज इक मेरी, सुनिये नहिं करिये देरी।
इस जग में भ्रमण करायो, प्रभु काल अनंत गमायो।।11।।
चिरकाल निगोद निवासा, मुश्किल से हुआ निकासा।
पृथ्वी जल अग्नि पवन में, तनु धर धर किया मरण मैं।।12।।
जब वनस्पती तनु पायो, नाना विध स्वांग धरायो।
कहिं फूल फलों की ढ़ेरी, कहिं कोंपल पत्र घनेरी।।13।।
कोई काटे रौंदे खाये, कोई भाजी साग पकाये।
कहिं दमड़ी मूल्य बिकाये, कहिं करवत चीर दुखाये।।14।।
जो दुःख सहे अनजाने, नहिं मुख से जाय बखाने।
अजि कठिन कठिन त्रस हूवो, लट शंख तनू धर मूवो।।15।।
चिंवटी खटमल तन धारे, बिच्छू आदिक अवतारे।
मधुमक्खी भ्रमर जु हूवो, तन धर धर पुनि पुनि मूवो।।16।।

पंचेन्द्रिय पशु तन धार्यो, कहिं क्रूर पशू बन मार्यो।
संक्लेशभाव से मर्यो, तब नरकगती में पर्यो।।17।।
दुख भोगे तहाँ अनन्ता, तुम जानत हो भगवंता।
नर योनि लई जब मैंने, तहँ भोगे भोग सु मैंने।।18।।
फिर भी नहिं साता पायो, नाना विध कष्ट उठायो।
कहिं इष्ट वियोग सह्यो है, आनिष्ट संयोग भयो है।।19।।
कहिं धन जन नष्ट हुए हैं, कहिं परिजन दुष्ट हुए हैं।
कहिं तन में व्याधि व्यथा है, समरथ अन्याय रचा है।।20।।
सुरयोनि लिया भी दुःखी, समकित बिन कभी न सुक्खी।
भवनत्रिक में मन व्याधी, कर्मनि की आदि उपाधी।।21।।
इस विध चहुँगति दुख पायो, सुख लेश निमित भरमायो।
जिनराज कृपा तुम पाई, समकित निधि हाथ में आई।।22।।
जब तक प्रभु मुक्ति न होवे, यह सम्यक् रतन न खोवे।
बस यह ही अरज सुनीजे, अंतिम सु समाधी कीजे।।23।।

–घत्ता–

जय जय चौंतीसा, रजतगिरीशा, जय जिनगृह चौंतीस जजूँ।
कैवल्य 'ज्ञानमति' शिवसुख संपति, हो मुझ प्रापति तुमहिं भजूँ।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.27)

मन्दरमेरु संबंधि षट् कुलाचल जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छंद–

मंदरगिरी के दक्षिणोत्तर, हिमवनादिक नग कहे।
षट् कुलगिरी ये सासते, जिन पे जिनालय षट् रहें।।
सुर नर असुर खगपति सदा, अर्चन करें वंदन करें।
शक्ती नहीं वहं जाय की, इत थाप के अर्चन करें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–(चाल–हे दीनबन्धु)–

गंगा नदी को नीर हेम पात्र में भरूं।
जैनेन्द्र पाद अर्च सकल ताप को हरूँ।।
हिमवान आदि छहगिरी पे जैनभवन हैं।
जो पूजते हैं उनके करें पाप शमन हैं।।1।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरि केशरादि में कर्पूर मिलाया।
जिन पादपद्म चर्च मोह ताप मिटाया।।हिमवान.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कामोद श्याम जीरकादि शालि लाइये।
वर पुंज को रचाय, मोक्ष सौख्य पाइये।।
हिमवान आदि छहगिरी पे जैन भवन हैं।
जो पूजते हैं उनके करें पाप शमन हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मचकुंद मालती गुलाब पुष्प लाइये।
श्रृंगारहारमारजयी[1] को चढ़ाइये।।हिमवान.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम कलाकन्द मोतीचूर के लाडू।
जिनेश को चढ़ाय क्षुधा व्याधि को काटूं।।हिमवान.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रदीप वर्धमान[2] ज्योति जगमगात है।
तुम पूजते निजात्म ज्योति जगमगात है।।हिमवान.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु कर्पूर मिश्र धूप खेइये।
आतम गुणों की गंध हेतु नाथ सेइये।।हिमवान .।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

एला बदाम पुंग[3] चिरोंजी मंगाइया।
निज संपदा के हेतु, नाथ को चढ़ाइया।।हिमवान.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. कामदेव। 2. बढ़ती हुई। 3. सुपारी।

नीरादि अर्घ्य लेय रत्नथाल में भरूं।
अक्षयनिधी के हेतु नाथ अर्चना करूँ।।
हिमवान आदि छहगिरी पे जैनभवन हैं।
जो पूजते हैं उनके करें पाप शमन हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

पद्म सरोवर नीर, सुवरण झारी में भरूं।
जिनपद धारा देय, भव वारिधि से उत्तरूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

सुवरण पुष्प मंगाय, प्रभु चरणन अर्पण करूं।
वर्ण गंध रस फास, विरहित निज पद को वरूं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

पूरब पुष्कर द्वीप के, षट् कुलगिरि अभिराम।
पृथक् पृथक् पूजा निमित, पुन पुन करूं प्रणाम।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–शम्भु छंद–

पूरब पुष्कर में हिमवन गिरि, स्वर्णाभ अतुल अभिरामा है।
ग्यारह कूटों में अनुपम इक, जिन सिद्धकूट परधाना है।।
तामध्य पदम द्रह बीच कमल, श्रीदेवी परिकर सह राजे।
शाश्वत जिनगृह जिनबिंब जजूँ, सब मोह करम अरिदल भाजें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिहिमवन्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताभ महाहिमवन गिरि पे, हैं आठ कूट जन मनहारी।
अनुपम इक सिद्धायतन मध्य जिनगेह अकृत्रिम सुखकारी।।

द्रह महापद्म मधि कमल बीच, ह्री देवी परिकर सह राजें।
शाश्वत जिनगृह जिनबिंब जजूँ, सब मोह करम अरिदल भाजें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिमहाहिमवन्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निषधाचल तप्त कनक कांती, द्रह कहा तिगिंछ कमल बीचे।
धृतिदेवी रहती परिकर सह, नवकूटों से अद्भुत दीखें।।
सुर सिद्धकूट वंदें नत हो, मणि मुकुटों से जिनपद चूमें।
हम अर्घ्य चढ़ाकर नित पूजें, फिर भव वन में न कभी घूमें।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनिषधपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नीलाचल छवि वैडूर्यमणी द्रह केसरि मध्य कमल तामें।
कीर्ती देवी रहती उसमें इक सिद्धकूट नव कूटों में।।
मुनि वैरागी भी जा करके, जिनगृह को वंदन करते हैं।
जो पूजें उनको भक्ति सहित, वे भव वारिधि से तरते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनीलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रुक्मी पर्वत चांदी सम है, द्रह पुंडरीक में कमल खिले।
बुद्धी देवी परिवार सहित, उसमें रहती मनकमल खिले।।
नित आठ कूट में सिद्धकूट, जिनभवन अनूपम तामें हैं।
हम पूजें अर्घ्य चढ़ा करके, निरुपम सुखसंपति तामें हैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिरूक्मीपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरी कुलगिरि कंचन छविमय, ग्यारह कूटों युत शोभे हैं।
महपुंडरीक द्रह के भीतर, पंकज पर लक्ष्मी शोभे हैं।।
पर्वत पर है इक सिद्धकूट, उसमें जिनमंदिर रतनों का।
जिनबिंब जजें हम अर्घ्य लिये, जिनभक्ती है भवदधि नौका।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिशिखरिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा–

षट् कुल पर्वत के कहे, षट् जिनमंदिर जान।
पूजूँ पूरण अर्घ्य ले, मिले भेद विज्ञान।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–*ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।

जयमाला

–सोरठा–

शाश्वत जिन आगार[1], पृथ्वीकायिक परिणमें।
उनमें जिनवर बिंब, तिनके गुण कीर्तन करूं।।1।।

चाल–(हे दीनबन्धु)

जयवंत षट् हिमवंत आदि कुलगिरी सारे।
जैनेन्द्र मूर्तिमंत अतुल धन धरें प्यारे।।
श्री सिद्धकूट जैनसद्म को प्रणाम है।
आनन्द कन्द श्रीजिनन्द को प्रणाम है।।1।।

हिमवन गिरी सुचार लाख[2] मील का ऊँचा।
नग है महाहिमवंत मील आठ लख ऊँचा।।
निषधाद्रि सोल लाख मील तुंग कहा है।
नीलाद्रि में इसी तरह प्रमाण रहा है।।2।।

इन पर्वतों की तलहटी में स्वर्ण वेदियां।
उन बीच के उद्यान में हैं वृक्ष पंक्तियाँ।।
तोरण कनकमयी हैं देव के भवन बने।
वापी तलाब कुंड कूट आदि हैं घने।।3।।

---

1. भवन । 2. (100 योजन× 4000 मील= 400000)।

षट् पर्वतों पे दोय तरफ वेदियां बनीं।
उन मध्य रम्य उपवनों की पंक्तियां घनीं।।
इन उपरि ग्यारे आठ नौ नौ आठ ग्यार हैं।
क्रम से कहे ये कूट जो कि रत्नसार[1] हैं ।।4।।

नग बीच द्रहों में असंख्य कमल खिले हैं।
जो पृथ्वीकायिक मणिमयी सौगंध्य मिले हैं।।
श्री आदि देवियां वहां परिवार समेता।
जिनमात की सेवा के लिये बद्ध हमेशा।।5।।

प्रत्येक कमल में सुरों के महल बने हैं।
प्रत्येक में जिनधाम सदा पाप हने हैं।।
षट् पर्वतों पे एक एक सिद्धकूट हैं।
उनमें जिनेशगेह में जैनेन्द्र रूप हैं।।6।।

सौ इन्द्र सपरिवार विभव साथ ले आवें।
दर्शन करें वंदन करें आनन्द से भावें।।
पूजा करें संगीत औ नर्तन करें सदा।
इन्द्राणियां औ अप्सरा भी नृत्यतीं मुदा।।7।।

खग नारियां खेचर वहां पे भक्ति करे हैं।
भूचर[2] मनुज विद्या के बल से दर्श करे हैं।।
चारण ऋषी आकाशगमन कर वहां जाते।
जिनवंदना करें निजात्म ध्यान लगाते।।8।।

कलिकाल में जाने की वहां शक्ति नहीं है।
अतएव मैं परोक्ष में ही भक्ति लही है।।
हे नाथ! कृपादृष्टि मुझ पे आज कीजिये।
संसार महासिंधु से उबार लीजिये।।9।।

1. रत्नों से बनें। 2. कर्मभूमियां ।

–घत्ता–

जय जय जिनराजा, धर्म जिहाजा, जो तुम गुण कीर्तन करहीं।
सो 'ज्ञानमती' वर शिवलक्ष्मी धर, झट जिनगुण संपति वरहीं।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.28)

विद्युन्माली मेरु जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–अडिल्ल छंद–

विद्युन्माली मेरु पंचमो जानिये।
पश्चिम पुष्कर अर्ध द्वीप में मानिये।।
ताके सोलह जिन चैत्यालय को जजूँ।
आह्वानन कर नित प्रति जिनवर को भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टक–(चाल–नंदीश्वर पूजा....)

रेवानदि को जल लाय, कंचन भृंग भरूं।
भव भव की तृषा मिटाय, आतम शुद्ध करूँ।।
विद्युन्माली सुरशैल[1], पूजूं मन लाके।
सोलह जिनमंदिर नित्य, वंदूँ हरषाके।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि चंदन गंध, घिस कर्पूर मिला।
जिनपद पंकेरुह[2] चर्च, निज मन कमल खिला।।विद्युन्माली.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. मेरुपर्वत । 2. कमल ।

शशिकर सम तंदुल श्वेत, खंड विवर्जित हैं।
शिवरमणी परिणय हेतु, पुंज समर्पित हैं।।
विद्युन्माली सुरशैल, पूजूं मन लाके।
सोलह जिनमंदिर नित्य, वंदूँ हरषाके।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सित कुमुद नील अरविंद, लाल कमल प्यारे।
मदनारिजयी पदपद्म, पूजूं सुखकारे।।विद्युन्माली.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरणपोली पयसार[1], पायस मालपुआ।
अमृतसम जिनपद पूज, आतम सौख्य हुआ।।विद्युन्माली.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिदीप कर्पूर प्रजाल, ज्योति उद्योत करे।
अंतर में भेद विज्ञान, प्रकटे मोह हरे।।विद्युन्माली.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध अग्नि में जार, सुरभित गंध करे।
निज आतम अनुभव सार, कर्म कलंक हरे।।विद्युन्माली.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

एला केला फल आम्र, जंबू निंबु हरे।
शिवकांता संगम हेतु, तुम ढिग भेंट करें।।विद्युन्माली.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. मलाई।

सलिलादिक द्रव्य मिलाय, कंचनपात्र भरें।
जिन सन्मुख अर्घ्य चढ़ाय, शिवसाम्राज्य वरें।।
विद्युन्माली सुरशैल, पूजूं मन लाके।
सोलह जिनमंदिर नित्य, वंदूँ हरषाके।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुँजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

विद्युन्माली भद्रसालवन जिनालय पूजा

अथ स्थापना–अडिल्ल छंद

विद्युन्माली मेरु अपर पुष्कर विषे।
भद्रसाल वन सुन्दर भूमी पर लसे।।
चार दिशा में चार जिनालय मानिये।
आह्वानन कर पूजन, विधिवत् ठानिये।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टक–(चाल–ते गुरू मेरे उर बसो....)

भागीरथि वर तीर्थ से, घट भर पावन नीर।
पूजूँ जिनपद तीर्थ को, विमल विशुद्ध शरीर।।
भद्रसाल मंदिर जजों, भद्रकरन के काज।
चंचल चित को रोक के, पाऊँ निज साम्राज।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंकुम केशर मिश्र के, जिनवर चरण महान।
भव संताप मिटावने, अर्चूं नित प्रति आन।।भद्रसाल.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ताफल सम शालि ले, पुंज करूँ जिनराज।
अक्षय संपति हेतु मैं, तुम गुण गाऊँ आज।।भद्रसाल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केतकी कुंद है, सुरतरु[1] के उनहार।
मकर[2] केतु अरि जिन विभो, पूजूँ मदननिवार।।भद्रसाल.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस इमरती थाल में, पूरणपोलि सोहाल।
क्षुधा पिशाची दूर हो, छूटे यम का जाल।।भद्रसाल.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत से पूरित दीप ले, जगमग ज्योति लसंत।
मनोभवन में ज्ञान की, ज्योति जले भगवंत।।भद्रसाल.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. कल्पवृक्ष। 2. कामदेव विजयी ।

धूप सुगंधित खेवते, सौरभ[1] हो चहुं ओर।
मोह करम अरि नाशते, दुःख भगे दम तोर।।
भद्रसाल मंदिर जजों, भद्रकरन के काज।
चंचल चित को रोक के, पाऊँ निज साम्राज।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

गन्ना फल अंगूर ले, सरस मधुर मनहार।
उत्तम शिवफल हेतु मैं, पूजूं तुम पद सार।।भद्रसाल.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादिक द्रव्य ले, जिनपद पूज करंत।
निज आतम गुण संपदा, मिलती आन तुरंत।।भद्रसाल.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुँजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

परम सौख्य दातार, परम पुरुष परमात्मा।
परमानंद निधान, तिनकी[2] प्रतिकृति मैं जजूँ।।1।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

1. सुगन्धि। 2. प्रतिमा ।

–दोहा–

विद्युन्माली मेरु में, भद्रसाल वन जान।
पूरबदिश जिनगृह जजों, सौख्य अपूर्व निधान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम मेरू भूमि पर, भद्रसाल के माहिं।
दक्षिण दिश जिनधाम को, अर्चूं दुःख नशाहिं।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितदक्षिणदिग्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरगिरि पंचम भूमि पे, भद्रसाल सुखकार।
पश्चिम दिश जिनगेह को, जजूँ सौख्य भंडार।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितपश्चिमदिक्जिना-लयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली नग अतुल, भद्रसाल वन सिद्ध।
उत्तर दिश जिनवेश्म को, अर्चत होय समृद्ध।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-सोरठा–

भद्रसाल जिनगेह, पंचममेरू के कहे।
पूरण अर्घ्य समेत, पूजूं मन वच काय से।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

विद्युन्मालीमेरु नंदनवन जिनालय पूजा

–स्थापना–गीताछंद–

सुरगिरी पंचम में धरा से, उपरि योजन पाँच सौ।
नंदन सुवन अतिरम्य तरुवर, पंक्तियाँ बहु भांति सो।।
चारों दिशा में जैनमंदिर, चार उत्तम जानिये।
जिनबिंब की कर थापना, पूजन यहीं पर ठानिये।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं–चामर छंद

(चाल–पार्श्वनाथ देव सेव....)

दुग्धवार्धि[1] स्वच्छ नीर स्वर्णपात्र में भरूं।
कर्मपंक क्षालने त्रिधार पाद में करूं।।
पांचवें सुमेरु में अपूर्व नंदने वने।
चैत्यगेह[2] पूजते अपूर्व सौख्य दे घने।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टगंध ले सुगंध हेमपात्रिका भरूं।
राग आग दाह शांति, हेतु अर्चना करूं।।पांचवें.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. क्षीर समुद्र। 2. जिनमंदिर ।

षष्ठि श्यामजीर शालि श्वेत पुँज को धरूं।
तीन लोक की अखंड संपदा को मैं वरूं।।
पांचवें सुमेरु में अपूर्व नंदने वने।
चैत्यगेह पूजते अपूर्व सौख्य दे घने।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्लिका गुलाब कुंद, पारिजात ले लिये।
मीनकेतु[1] के जयी, जिनेन्द्र पाद में दिये।।पांचवें.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मूँग मोदकादि मिष्ट मालपूप थाल में।
भूख रोग शांति हेत पूजहूँ त्रिकाल में।।पांचवे.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्धमान दीप ले, कपूर ज्योति ज्वाल हूँ।
वर्धमान ज्ञानज्योति, चित्त में विकास हूँ।। पांचवे.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत चंदनादि मिश्र धूप खेउ अग्नि में।
कर्म शत्रु भस्म होंय धूम्र[2] होत अभ्र[3] में।।पांचवे.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्र, संतरा, अनार, श्रीफलादि ले लिये।
मोक्ष सौख्य हेतु नाथ पादकंज में दिये।।पांचवें.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1.कामदेव। 2. धुँआ। 3.आकाश

वारि गंध शालि पुष्प अन्न[1] दीप धूप ले।
श्रीफलादि को मिलाय अर्घ्य ले जजूं भले।।
पांचवें सुमेरु में अपूर्व नंदने वने।
चैत्यगेह पूजते अपूर्व सौख्य दे घने।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंधजल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुंजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

नित प्रति पूजें हर्ष से, इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्र।
परमाल्हादन कारणे, ध्यावें नित्य मुनीन्द्र।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनन्दनवनस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–गीता छन्द–

अपर पुष्कर अर्ध में मधि, पांचवां सुरगिरि कहा।
नन्दन विपिन में पूर्वदिक्, जिनगृह अनूपम छवि लहा।।
चंचल मनोमर्कटविजेता[2], साधुगण वंदन करें।
हम पूजते नित अर्घ्य ले, भवसंतती खंडन करें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनपूर्वदिग्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. नैवेद्य। 2. मनरूपी बंदर को वश करने वाले।

सुरशैल पंचम में सदा नंदन सुवन विख्यात है।
दक्षिण दिशा में जिनभवन, पूजें भविक हरसात हैं।।
चंचल मनोमर्कटविजेता, साधुगण वंदन करें।
हम पूजते नित अर्घ्य ले, भवसंतती खंडन करें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनदक्षिणदिग्जिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम सुराचल[1] में विपिन[2], नंदन अतुल महिमा धरे।
पश्चिम दिशा में जैनगृह, अतिशयभरी प्रतिमा धरे।।चंचल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनपश्चिमदिग्जिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरशैल विद्युन्मालि में, नंदनवनी तरु पंक्ति से।
जन मन हरे उत्तर दिशा के, मणिमयी जिनसद्म[3] से।।।।चंचल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनोत्तरदिग्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–दोहा–

विद्युन्माली मेरु में, नंदनवन अभिराम।
चारों दिश में जिनभवन, नितप्रति करुं प्रणाम।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

1. मेरु। 2. वन। 3. जिनमंदिर।

विद्युन्मालीमेरु सौमनसवन जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–नरेन्द्र छंद–

विद्युन्माली नंदनवन से, ऊपर अतुल घनी है।
साढ़े पचपन सहस सु योजन, पे सौमनस वनी है।।
चारों दिश में चार जिनालय, जिनप्रतिमा विलसंता।
आह्वानन कर पूजूँ नितप्रति, सौख्य भरो भगवंता।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं सोरठा–

पद्माकर को नीर, पंकज वासित भृंग में।
वन सौमनस मंझार, जिनमंदिर पूजों सदा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचन द्रव सम गंध, सकल दाह हर शांति दे।
वन सौमनस मंझार, जिनमंदिर पूजों सदा।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोतीसम वरशालि, पुंज धरत नवनिधि फलें।
वन सौमनस मंझार, जिनमंदिर पूजों सदा।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला हरसिंगार, सौरभ फैले गगन में ।
वन सौमनस मंझार, जिनमंदिर पूजों सदा।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवर फेनी आदि, घ्राण नयन मन सुख करें।
वन सौमनस मंझार, जिनमंदिर पूजों सदा।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमय दीपक ज्योति, भ्रांति तिमिर को क्षय करे।
वन सौमनस मंझार, जिनमंदिर पूजों सदा।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु वर धूप, अग्नि पात्र में खेयके।
वन सौमनस मंझार, जिनमंदिर पूजों सदा।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दाडिम आम अंगूर, सरस मधुर फल लायके।
वन सौमनस मंझार, जिनमंदिर पूजों सदा।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादि मिलाय, अर्घ्य चढ़ाऊँ प्रीति से।
वन सौमनस मंझार, जिनमंदिर पूजों सदा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुंजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

नित्य जिनेश्वर वेश्म, शत इंद्रों से वंद्य हैं।
तिनकी पूजन हेतु, मैं कुसुमाँजलि नित करूँ।।1।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–दोहा–

कनकाचल[1] पंचम विषे, वन सौमनस रसाल।
पूरबदिश में जिनभवन, अर्च हरूँ जंजाल।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनपूर्वदिग्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरगिरि वन सौमनस में, दक्षिण दिश जिनधाम।
तिनकी जिनप्रतिमा जजूँ, पूर्ण होय सब काम।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनदक्षिणदिग्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णाचल[2] वन सौमनस, पश्चिमदिश जिनगेह।
इन्द्रवंद्य जिनबिंब को, पूजूँ धर मन नेह।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनपश्चिमदिग्जिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली मेरु में, वन सौमनस अनूप।
उत्तरदिश जिनवेश्म को जजत मिले निजरूप।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनउत्तरदिग्जिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. 2. मेरु।

–पूर्णार्घ्य–

पंचममेरु में विपिन, सौमनसं अभिराम।
पूरण अर्घ्य चढ़ाय के, जजूं चार जिनधाम[1]।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

विद्युन्मालीमेरु पांडुकवन जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–नरेन्द्र छंद–

(चाल–परम परंज्योति....)

सुरगिरि पंचम वन सौमनसं इससे ऊपर जानो।
योजन सहस अठाइस जाके, पांडुकवन सरधानो।।
चार जिनालय चार दिशा में, मुनिमन कुमुदैविकासी।
तिनके श्री जिनबिंब यहां मैं, थापूँ निजसुख भासी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं –नरेन्द्र छन्द–

सीता सरिता[3] को जल लेके, जिनपद धार करूँ मैं।
भव भव की अघ[4] कीचड़ धोके, गुणमणिमाल धरूँ मैं।।

1. जिनमंदिर। 2. श्वेत कमल । 3. नदी, 4. पाप।

विद्युन्माली पांडुकवन में, चार जिनालय भासें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, सो मन कमल विकासें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी केशर घिस चंदन, कांचन रस सम दीखे।
जिनपद सरसिज पूजन करते, नशें ताप सब तीखे।।विद्युन्माली.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीरसिंधु के फेन हार सम, अक्षत अमल अखंडे।
तुम सन्मुख में पुंज चढ़ाते, पाप पुंज सब खंडें।।विद्युन्माली.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केवड़ा बेला चंपा, कल्पतरू सुमनों से।
मदनदर्प[2] भंजन शिवरंजन, जजूँ स्वर्ण सुमनों से।।विद्युन्माली.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खुरमा शर्करपारे खाजे, ताजे घृतरस पूरे।
नुकती बरफी आदि चढ़ाकर, क्षुधा वेदनी चूरें।। विद्युन्माली.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोघृत भर के दीप जला के, जिनपद पूजूँ आके।
हृदय महल को करुँ प्रकाशित, अंतर ज्योति जलाके।।विद्युन्माली.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगुरु तगर सित चंदन गंधित, धूप सुअग्नि जलाके।
निजआतम अनुभव रस प्रगटे, कर्म अनंत जलाके।।

1. तीव्र। 2. कामदेव मद, 3. पुष्प।

विद्युन्माली पांडुकवन, में चार जिनालय भासें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, सो मन कमल विकासें।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्कटिका[1] खर्बूजा श्रीफल, गन्ना मधुर मंगाके।
उत्तम अमृत फल चखने को, चरण चढ़ाऊँ आके।।विद्युन्माली.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत माला चरु, दीप धूप फल लाऊँ।
अनुपम रत्नत्रय निधि हेतू, तुम पद अर्घ्य चढ़ाऊँ।।विद्युन्माली.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

प्रासुक मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
जिनपद धारा मैं करूँ, तिहुंजग शांती हेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पारिजात के पुष्प ले, श्रीजिनचरण सरोज।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम सौख्य।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–

–सोरठा–

सब भव्यों के हेतु, परम सिद्ध सुख के निलय[2]।
नमूं नमूँ मैं नित्य, कुसुमांजलि कर भाव से।।1।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

1. ककड़ी। 2. भवन ।

–मोतीदाम छन्द–

सुराचल पंचम में अभिराम, वनी पांडुक अतिरम्य ललाम।
जिनालय पूरब दिश में जान, जजें कर जोड़ करो शिवथान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनपूर्वदिग्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुराद्री[1] विद्युन्माली नाम, सरस वन पांडुक मुनि विश्राम।
जिनालय दक्षिण दिश में सार, जजूँ कर जोड़ करो भव पार।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनदक्षिणदिग्जिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनकपर्वत[2] पंचम शिवकार, सुवन पांडुक में सुर परिवार।
जिनालय पश्चिम दिश रत्नाभ, जजूं जिननाथ करो शिवलाभ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनपश्चिमदिग्जिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुवर्णाचल पंचम परधान, सुपांडुकवन है सौख्य निधान।
जिनेश्वरगृह उत्तर दिश जान, भरो मम आश जजूं इह थान।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनउत्तरदिग्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा–

सुरगिरि पंचम में सुभग, पांडुकवन अतिरम्य।
चार जिनालय चार दिश, पूज लहूं निज धर्म्य।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

1. मेरु । 2. मेरु।

जयमाला

–शम्भु छन्द–

जय जय विद्युन्माली मेरू, यह अद्भुत शोभा पाता है।
योजन चौरासी सहस तुंग, शाश्वत अनंत कहलाता है।।
बहु वर्ण रत्नमय बहुत दूर, ऊपर कनकाभ सुहाता है।
वैडूर्य चूलिका नीलवरण, उत्तम छवि से मन भाता है।।1।

पृथ्वी पर भद्रसाल वन है, वन वेदी चारों ओर कही।
वन में कर्पूर तरू पंक्ती हिंताल ताल द्रुम[1] पंक्ति कहीं।।
कदली[2] लवली दाडिम लवंग, चंपक नारंग तरू शोभें।
पुंनाग नाग सतपत्र पनस, मल्ली अशोक तरु भी शोभें।।2।।

रमणीय तरूवर बेलों से, कोकिल की कल कल ध्वनियों से ।
ऐरावत हाथी के विचरण, विद्याधर देव युगलियों से।।
मोरों की नर्तन क्रीड़ा औ, शुक[3] प्रभृति[4] पक्षियों के रव से।
मन मोह रहा सब जन का वन, किन्नरियों के वीणा रव से।।3।।

सौधर्म इंद्र आदिक सुर के, बहु भवन बने हैं नित्य वहां।
तोरण द्वारों पे जिनप्रतिमा, भविजन के पातक हरें वहां।।
वापी पुष्करिणी नीर भरी, पंकज कुमुदादी फूल खिले।
प्रत्येक जंतुगण भविजन के, जन जन के वहं पे हृदय मिले।।4।।

इस भद्रसाल के चारों दिश, जिनभवन अकृत्रिम भासे हैं।
जो दर्शन पूजन भक्ति करें, वे अंतरज्ञान प्रकासे हैं।।
आकाशगमन ऋद्धीधारी, मुनिगण भी विचरण करते हैं।
परमानंदामृत पीकर के, यमराज शत्रु को हरते हैं।।5।।

इस वन से पाँच शतक योजन, ऊपर नंदनवन शोभ रहा।
उससे साढ़े पचपन हजार, योजन पे वन सौमनस कहा।।
उससे अट्ठाइस सहस कहा, योजन पे पांडुक वन सोहे।
इन सबमें रचना पूर्व सदृश, देखत ही भविजन मन मोहे।।6।।

1. वृक्ष। 2. केला। 3. तोता। 4. आदि।

चारों वन के सोलह जिनगृह, अनुपम अविनाशी माने हैं।
प्रत्यक्ष परोक्ष किसी विधि भी, जो पूजें वे दुःख हाने हैं।।
पांडुकवन की विदिशाओं में, शुभ पांडुक आदि शिलायें हैं।
तीर्थंकर के जन्माभिषेक, होने से पूज्य कहाये हैं।।7।।

जय जय सोलह जिनचैत्यालय, जय जय जिन अभिषवपूतशिला।
जय जय जिन मंगल लोकोत्तम, जय जय जिनशरण अपूर्व मिला।।
जय जय जिनदेव अमंगलहर, जय जय जग में मंगल कीजे।
मुझ 'ज्ञानमती' के सर्व दोष, हरके सब सुख मंगल कीजे।।8।।

–घत्ता –

जय पंचम सुरनग[2], पंचम[3] गतिप्रद, पंचम[4] चारित दान करे।
जय पंचम केवल, 'ज्ञानमती' कर, पंच परावृत[5] हान करे।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. अभिषेक से पवित्र। 2. मेरु। 3. मोक्ष। 4. यथाख्यात। 5.परिवर्तन।

(पूजा नं.29)

विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी चार गजदंत जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–अडिल्ल छंद–

अमर द्वीप पुष्कर में, सुरगिरि पांचवों।
ताके विदिशा नागदंत चउ जानवों।।
तापे शाश्वत जिनमंदिर शिव द्वार हैं।
आह्वानन कर जजत, मिले भव पार है।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–रोला छन्द–

(चाल–अहो जगत् गुरुदेव)

यमुना सरिता अंबु[1], कंचन झारी भरिये।
भव तप शीतल हेतु, जिनपद धारा करिये।।
विद्युन्माली मेरु, विदिशा के गजदंता।
शाश्वत जिनगृह सिद्ध, पूजूं श्री भगवंता।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज केशर संग, कनक कटोरी भरिये।
अलि गुंजत वरगंध, जिनपद चर्चन करिये।।

1. नीर।

विद्युन्माली मेरु, विदिशा के गजदंता।
शाश्वत जिनगृह सिद्ध, पूजूं श्री भगवंता।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हार तुषार[1] समान, तंदुल धवल अखंडे।
विमल विशद गुण हेतु, पुंज करूं अघ खंडे।।वि.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरतरु के बहु पुष्प, नाना वर्ण वर्ण के।
कामजयी जिनदेव, अर्पूं आप चरण पे।।वि.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बालूशाही खीर, मधुर इमरती लाये।
जनम जनम की भूख, नाशन हेतु चढ़ाये।।वि.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक ज्योति प्रकाश, निश अंधेर हरे है
दीपक से निज पूज, मन अंधेर टरे है।।वि.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप सुगंधित खेय, दिश दिश सौरभ फैले।
जिनपद पंकज सेय, कर्म जरें बहु मैले।।वि.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लीची आम अनार, अनंनास फल लायो।
अनुपम फल की आश, करके आप चढ़ायो।।

1. बरफ

विद्युन्माली मेरु, विदिशा के गजदंता।
शाश्वत जिनगृह सिद्ध, पूजूं श्री भगवंता।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल आदि मिलाय, कनक थाल भर लीने।
क्षायिकलब्धी[1] हेतु, प्रभु तुम अर्पण कीने।।वि.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्रीजिनचरण सरोज, धारा देते भव मिटे।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

सुरतरु के सुम लेय, प्रभु पद में अर्पण करूँ।
कामदेव मद नाश, पाऊँ आनंद धाम मैं।।11।।

पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

अकृत्रिम जिनवर भवन, गजदंतों पर जान।
तिनकी पूजन हेतु मैं, सुमन चढ़ाऊँ आन।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिगजदन्तपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

चौबोल छन्द (चाल–मेरी भावना)

सुरगिरि के आग्नेय विदिश में, सौमनस्य गजदंत कहा।
रतनमयी यह पर्वत सुंदर, सात कूट से शोभ रहा।।
मेरु निकट श्री सिद्धकूट पर, जिनमंदिर छवि रतनमयी।
वहां शक्ति नहिं गमन करन की, अतः जजूँ तुम चरण यहीं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः आग्नेयविदिशायांसौमनसगजदन्तस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1.नवक्षायिक भाव।

स्वर्णाचल नैऋत्य विदिश में, विद्युत्प्रभ गजदंत दिपे।
नव कूटों युत तप्तकनकछवि[1], दिनकर लज्जित संत[2] छिपे।।
सुरगिरि सन्निध सिद्धकूट पर, जिनमंदिर शिवगमन मही।
वहां शक्ति नहिं गमन करन की, अतः जजूँ तुम चरण यहीं। 2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः नैऋत्यविदिशायांविद्युत्प्रभगजदन्तस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम सुरगिरि के वायव्ये[3], गंध मादनाचल सोहे।
स्वर्णवर्णमय सात कूट युत, सुर नर किन्नर मन मोहे।।
सुर नग सन्निध सिद्धकूट पर ,जिनगृह अनुपम अचल मही।
वहां शक्ति नहिं गमन करन की, अतः जजूँ तुम चरण यहीं। 3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः वायव्यविदिशायां गंधमादनगजदन्तस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरू के ईशान कोण में, माल्यवंत गजदंत रहे।
छवि वैडूर्यमणी सम अनुपम, नवकूटोंयुत संत कहें।।
सुरगिरि सन्निध सिद्धकूट पर, जिनगृह शाश्वत सिद्ध कहें।
वहां शक्ति नहिं गमन करन की, अतः जजूँ तुम चरण यहीं। 4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः ईशानविदिशायां माल्यवद्गजदन्तस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–दोहा–

पंचम सुरगिरि के विदिश, हाथी दंत समान।
गजदंते चउ हैं तहाँ, जिनगृह जजूँ प्रधान।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

1. तपाए सोने से सदृश । 2. होता हुआ। 3. पश्चिम-उत्तर के मध्य की दिशा।

जयमाला

–रोला छन्द–

जय जय सिद्ध महंत, जय जय श्री भगवंता।
जय जय नादि अनंत, जय जय धर्म धरंता।।
जय जय सुर नर इन्द्र, नमत सदा शिर नाके।
जय जय मुनिगण वृंद, वंदें अखिल धरा के।।1।।
यह भव वन विकराल, नित्य[1] न दीखे कोई।
शाश्वत नित्य त्रिकाल, श्री जिनमंदिर होई।।
इस भव वारिधि बीच, शरण नहीं कोई जानो।
शरणागत प्रतिपाल, जिनवर भवन बखानो।।2।।
भव का भ्रमण अपार, पंच प्रकार कहा है।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल, भव अरु भाव रहा है।।
अब तक काल अनंत, बहु परिवर्तन कीने।
अब आयो तुम पास, भ्रमण जलांजलि दीने।।3।।
मैं हूँ एक अनाथ, तन भी साथ न देवे।
एक तुम्हारी भक्ति, भव भव दुख हर लेवे।।
मैं हूँ सबसे भिन्न, चिच्चैतन्य स्वरूपी।
तुम दर्शन कर नाथ, पायो सुख अनरुपी।।4।।
यह तन अशुचि स्वभाव, निज आतम शुचि देवा।
कर्मकलंक विभाव, दूर करो जिनदेवा।।
रत्नत्रय से शुद्ध, परमविशुद्ध महात्मा।
आतम अनुभव पाय, शीघ्र बनूँ परमात्मा।।5।।
आस्रव बंध अनंत, भव भव भ्रमण करावें।
प्रभु इनको परसंग, भव भव माहिं रुलावें।।
कर्मास्रव को रोक संवर संत[2] करे हैं।
नाथ तुम्हारे पास, बहुविध कर्म झरे हैं।।6।।

1. यहाँ से बारह भावना शुरू हैं। 2. साधु।

पुरुषाकार त्रिलोक, मध्य कही त्रस नाली।
ऊर्ध्व अधः मधलोक, बाहर में नभ खाली।।
त्रस नाली के माहिं, त्रस स्थावर जीवा।
चहुंगति के दुख पाय, भ्रमण करंत सदीवा।।7।।
तुम चरणांबुज ध्याय, कर्म कलंक जलाके।
लोक शिखर पे जाय, आतम शुद्ध बनाके।।
दुर्लभ मानुष योनि, दुर्लभ श्री जिनसेवा।।
दुर्लभ समकित रत्न, संयम है दुख छेवा।।8।।
श्री जिनधर्म महान्, अनुपम सौख्य करंता।
देवे नितप्रति दान, केवल श्री भगवंता।।
भव वन में चिरकाल, मैंने भ्रमण किया जो।
जैनधर्म बिन नाथ, चहुँगति वास किया जो।।9।।
अब तुम धर्म जिनेश, पाय भयो धनवाना।
जिनगुण संपद हेतु, नित्य जजूँ शिवदाना।।
इंद्र समान विभूति, चक्रवर्ति सम भोगा।
तुम पद भक्ति विभूति, से फीके सब भोगा।।10।।

–घत्ता–

जय जय गजदंता, जिनगृह संता, जय सुख अनुपम अचल महा।
जो तुम पद ध्यावें, कर्म जलावें, 'ज्ञानमती' शिव सौख्य लहा।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.30)

विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–नरेन्द्र छंद–

(चाल–इह विधि राज करे.....)

पश्चिम पुष्कर अर्ध द्वीप में, मध्य कनक गिरि सोहे।
ताके दक्षिण उत्तर दिश में, भोगधरा[1] मन मोहें।।
उत्तर कुरु ईशान कोण में, पुष्करवृक्ष सुहावे।
दक्षिण देवकुरू आग्नें दिश, शाल्मलि तरु मन भावे।।1।।

–दोहा–

दोनों तरु की शाख पर, भूकायिक[3] जिनगेह।
जिनमूर्ती की थापना, करूँ भक्ति भर नेह।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः ईशाननैऋत्यकोणसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्ष-स्थितजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः ईशाननैऋत्यकोणसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्ष-स्थितजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह!अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः ईशाननैऋत्यकोणसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्ष-स्थितजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–रोला छन्द–

(चाल–मेरी भावना.....)

पद्माकर का जल अतिशीतल, पद्म पराग सुवास मिला।
रागभाव मल धोवन कारण, धार करूँ मन कंज[4] खिला।।

1.भोगभूमि। 2.पूर्व दक्षिण के मध्य की दिशा। 3.पृथ्वीकायिक । 4.कमल।

पृथ्वीकायिक तरु शाखा पे, जिनमंदिर जग पूज्य कहें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, वे पद त्रिभुवन पूज्य लहें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर घिस कर्पूर मिलाया, भ्रमर पंक्तियाँ आन पड़ें।
जिनपद पूजन से नश जाते, कर्म शत्रु भी बड़े-बड़े।।पृथ्वी.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चंद्र चंद्रिका सम सित तंदुल, पुंज चढ़ाऊँ भक्ति भरे।
अमृत कण सम निज समकित गुण पाऊँ अतिशय शुद्धखरे।।पृथ्वी.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पवृक्ष के सुमन सुगंधित, पारिजात वकुलादि खिले।
कामबाणविजयी जिनवल्लभ चरण जजत नवलब्धि[1] मिले।।पृथ्वी.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रसगुल्ला रसपूर्ण अंदरसा, कलाकंद पयसार[2] लिये।
अमृतपिंड सदृश नेवज से, जिनपद पंकज पूज किये।।पृथ्वी.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमपात्र में घृत भर बत्ती, ज्योति जले तम नाश करे।
दीपक से करते जिन पूजन, हृदय पटल की भ्रांति हरे।।पृथ्वी.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निपात्र में धूप जलाकर, अष्ट कर्म को दग्ध करें।
निज आतम के भावकर्म मल, द्रव्य कर्म भी भस्म करें।।

1.क्षायिक दर्शन आदि नव क्षायिक भाव। 2.मलाई।

पृथ्वीकायिक तरु शाखा पे, जिनमंदिर जग पूज्य कहें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, वे पद त्रिभुवन पूज्य लहें।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल अंगूर अनंनासादिक, सरस मधुर ले थाल भरे।
नव क्षायिक लब्धी फल इच्छुक, पूजूं तुम पादाब्ज[1] खरे।।पृथ्वी.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत माला चरु, दीप धूप फल अर्घ्य लिया।
त्रिभुवन पूजित पद के हेतू, तुम पदवारिज[2] अर्घ्य किया।।पृथ्वी.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर, कंचन झारी में भरा।
जिनपद धारा देत, शांति करो सब लोक में।।

शांतये शांतिधारा।।

वकुल मालती फूल, सुरभित निजकर से चुने।
जिनपद पंकज अर्प्य, यश सौरभ चहुंदिश भ्रमे।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

मुक्तिवधू भरतार, श्रीजिनवर के बिम्ब हैं।
पूजूं शिव करतार, पुष्पांजली चढ़ाय के।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिद्वयवृक्षस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

1. 2. चरणकमल।

–रोला छंद–

पश्चिम पुष्कर द्वीप, सुरगिरि के ईशाने।
पद्म वृक्ष की शाख, उत्तर दिश परधाने।।
तापे श्रीजिनगेह, नाना रत्नमयी है।
मृत्युंजयि जिन बिंब, पूजूँ सौख्य मही है।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनकाचल नैऋत्य शाल्मलि द्रुम मन भावे।
दक्षिण शाखा उपरि, जिनवर भवन सुहावे।।
उनके श्री जिनबिम्ब, अकृत्रिम अविकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, पाऊँ शिवतिय प्यारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य– **इन तरु के परिवार, अगणित शास्त्र बखाने।**
उन सब में सुरवृंद, वैभव संयुत माने।।
प्रतिदेवन[1] गृह माहिं, जिनगृह शाश्वत जानो।
पूरण अर्घ्य बनाय, पूजत ही शिव थानो।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसपरिवारपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिना-लयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

वीतराग विज्ञान घन, सर्वसार में सार।
वंदूँ श्री जिनदेव को, जिनप्रतिमा अविकार।।1।।

1. प्रत्येक देवों के।

(चाल–हे दीन बन्धु.....)

जय रत्नमयी वृक्ष ये अनादि अनंता।
जय पंचरत्न वर्ण सिद्धकूट धरंता।।
जय जय जिनेन्द्र देव के, जो भवन कहे हैं।
जय जय जिनेन्द्र मूर्तियां, जो पाप दहे हैं।।1।।
जिनमंदिरों में घंटिका औ किंकिणी बजें।
वीणा मृदंग बांसुरी, संगीत हैं सजे।।
मंगल कलश औ धूप घट अनेक धरे हैं।
जो देव देवियों के सदा चित्त हरे हैं।।2।।
रत्नों की स्वर्ण मोतियों की मालिकायें हैं।
कौशेय[1] वस्त्र सदृश रत्न की ध्वजायें हैं।।
उनमें बने हैं सिंह, हस्ति हंस बैल जो।
मयूर, चक्र, गरुड़, चन्द्र, सूर्य कमल जो।।3।।
इन दश प्रकार चिन्ह से चिन्हित हैं ध्वजायें।
जो भक्तगणों को सदा ही पास बुलायें।।
ये रत्नमयी होय के भी वायु से हिलें।
अद्भुत असंख्य रत्न हैं इस रूप में मिलें।।4।।
प्रत्येक जैनगेह में रचना अनंत है।
प्रत्येक में ही इक सौ आठ जैनबिंब हैं।।
प्रत्येक में तोरण दुवार[2] रत्न के बने।
जिनदेव मानतंभ[3] वहां मान को हनें।।5।।
ये जैनभवन हैं सदा सन्मार्ग के दाता।
निज आश्रितों को सत्य में हैं मुक्तिप्रदाता।।
इन नाम के जपे से नशे भूत की बाधा।
व्यंतर पिशाच प्रेत क्रूर, गृहों की बाधा।।6।।
इनके करे जो दर्श वे भवसिंधु तरे हैं।
जो भक्ति से पूजन करें वे सौख्य भरे हैं।।

1. रेशमी। 2.द्वार। 3. मानस्तम्भ।

इस लोक में धन धान्य पुत्र पौत्र को पाते।
चक्रेश की सी संपदा पा मौज उड़ाते।।7।।
जिनधर्म में अतिगाढ़ प्रेम धारते सदा।
पर लोक में इन्द्रादि विभव पावते मुदा।।
पश्चात् यहां तीर्थ की पदवी को धार के।
तीर्थंकरों का धर्मचक्र जग में चलाके।।8।।
आर्हन्त्य विभव पाय के भगवंत बनेंगे।
वे मुक्तिवल्लभा के भी तो कंत बनेंगे।।
इस विध से नाथ आपकी कीर्ती को मैं सुनी।
अतएव शरण आपकी ली सुन के तुम धुनी।।9।।
बस एक आश आज मेरी पूरिये प्रभो।
मोहादि कर्म वैरियों को चूरिये प्रभो।।
बस मैं स्वयं निज आत्मा को शुद्ध करूंगा।
सम्यक्त्व शुद्ध 'ज्ञानमती' सिद्धि वरूंगा।।10।।

–दोहा–

प्रभु तुम महिमा अगम है, तुम गुणरत्न अनंत।
इक गुण लव भी पाय मैं, तरूँ भवाब्धि अनंत।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.31)

विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी षोडश वक्षार जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छंद–

कनकाद्रि[1] विद्युन्मालि में जो पूर्व अपर विदेह हैं।
उनमें कहे वक्षार गिरि सोलह सुवर्णिमदेह[2] हैं।।
उन पे जिनालय शाश्वते सुरवंद्य सोलह जानिये।
जिनमूर्ति की कर थापना, यहँ पे महोत्सव ठानिये।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–

यमुना नदी का तीर्थसम जल, पूर्ण घट भर लाइये।
मन आधि व्याधी शांति हेतू, नाथ चरण चढ़ाइये।।
वक्षारगिरि के जिनभवन, सोलह अकृत्रिम सुख भरें।
जो पूजते नित चाव से, वे मुक्ति ललना को वरें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूरवासित गंध घिस, घनसार सुरभित लाइये।
आनंदघन निज आतमा के, प्राप्त हेतु चढ़ाइये।।

---

1. मेरु। 2. सुवर्णमय।

वक्षारगिरि के जिनभवन, सोलह अकृत्रिम सुख भरें।
जो पूजते नित चाव से, वे मुक्ति ललना को वरें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिराज मन सम धवल तंदुल, पुंज सन्मुख दीजिये।
आनंद कंद अखंड निज, आतम अतुल गुण लीजिये।।वक्षार.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार कुंद कदंब मल्ली, पारिजात प्रसून ले।
झषकेतु[1] विजयी जिनचरण, पूजत अलौकिक गुण मिलें।वक्षार.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखंड शर्कर दधि विमिश्रित खीर पूड़ी आदि हैं।
पीयूष[2] पिंड समान चरु से पूजते जिनपाद हैं।।वक्षार.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिरत्न दीपक हाथ में ले आरती जिननाथ की।
करते मिटे अंतर तिमिर, फिर ज्योति प्रगटे ज्ञान की।।वक्षार.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूप धूपायन अगनि में, खेवते दुःख नाश हो।
चिंतामणी सम चिंतिते, फलदायि ज्ञान विकास हो।।वक्षार.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नारंग नींबू आम्र कमरख, इक्षु अमृतफल घने।
जिन पूजते वांछित फले, शिववल्लभा के पति बनें।।

1.कामदेव। 2. अमृत।

वक्षारगिरि के जिनभवन, सोलह अकृत्रिम सुख भरें।
जो पूजते नित चाव से, वे मुक्ति ललना को वरें।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु, दीपक सुधूप फलादि हैं।
वर कल्पतरु जिनपद जजें, मांगे बिना फलदायि हैं।।वक्षार.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सीतानदी सुनीर, जिनपद पंकज धार दे।
वेग हरूँ भवपीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पद अरविंद, पूजत ही सुख संपदा।।1।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ-प्रत्येक-अर्घ्य–दोहा–

तीर्थंकर प्रतिरूप[1] ये, सर्व विघ्न हरतार।
मैं नित पूजूँ चाव से, शाश्वत सुख दातार।।1।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिवक्षारपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

पश्चिम पुष्कर अर्ध द्वीप में, सुरगिरि पूर्व दिशा में।
सीता नदि के उत्तर तट से, भद्रसाल ढिग[2] तामें।।
'चित्रकूट' वक्षार अचल पर, जिनमंदिर सुखकारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थचित्रकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. प्रतिबिंब। 2.निकट ।

'पद्मकूट' वक्षार दूसरा, पुष्करार्ध में जानो।
उसके चार कूट में अनुपम , सिद्धकूट इक मानो।।
जिन चैत्यालय शाश्वत अविचल, पूजूँ कर्म विडारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपद्मकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिनकूट' वक्षार अतुल है पाप पंक मल धोवे।
जो जन इसके सिद्धकूट को, पूजें सब दुख खोवे।।
जिनगृह की छवि अतिशय प्यारी, भविजन मन सुखकारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थनलिनकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'एकशैल' वक्षार अनूपम, सुर किन्नर मन भावे।
सुवरण छवि से सूर्य तेजहर, जिनमंदिर मन भावे।।
विद्याधर विद्याधरियाँ भी गुण गावें चितहारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थएकशैलकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के दक्षिण तट पर, देवारण्य समीपे।
नग 'त्रिकूट' वक्षार सुवर्णिम, चार कूट से दीपे।।
सिद्धकूट जिनमंदिर अद्भुत, मुनिमन सम अविकारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थचित्रकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गिरि 'वैश्रवण' कहा वक्षारा, भूधर[1] मुकुटमणी है।
सिद्धकूट का श्री जिनमंदिर चिंतारत्नमणी है।।

1. पर्वत।

वंदन करने वाले भवि के, भव भय संकटहारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवैश्रवणकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अंजन' नग वक्षार अकृत्रिम, अमरगणों से सोहे।
इस ऊपर परमात्म निरंजन[1], का जिनमंदिर सोहे।।
वन वेदी वापी तोरण से, सुरगृह से चितहारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थअंजनवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आत्मांजन' वक्षार आठवां, अतुल निधी को धारे।
इस पे सिद्धकूट को जो जन, पूजें मोक्ष सिधारें।।
मृत्युंजयि जिनवर का मंदिर, अखिल अमल गुणधारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थआत्मांजनवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरू के पश्चिम दिश में है, अपर विदेह कहाता।
सीतोदा सरिता बहने से, उभय भाग बंट जाता।।
सरिता दक्षिण भद्रसाल के, ढिग वक्षार गिरी है।
'श्रद्धावान' उपरि जिनमंदिर, पूजूँ पाप हरी है।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थश्रद्धावानवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजटावान्' अचल वक्षारा, चार कूट युत सोहे।
कनककांति से सिद्धकूट से, अतुल अपूरब सोहे।।

1. सिद्ध भगवान।

जिनमंदिर में मृत्युंजयि की, प्रतिमा सौख्यकरी हैं।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं नित पूजूँ, भव भय ताप हरी हैं।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थविजटावान्वक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आशीविष' वक्षार स्वर्णसम, विविध गृहों को धारे।
सिद्धकूट पे श्री जिनमंदिर, कर्म कालिमा टारे।।
पद्मासन जिनप्रतिमा सुन्दर, सिंहासन पे राजे।
जो जन पूजन वंदन करते, कर्म अरीदल भाजे।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थआशीविषवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल 'सुखावह' बहु सुखदाता चारकूट से सोहे।
जो जन सिद्धकूट को वंदें, त्रिभुवन के पति होहें।।
साधूजन आकाशमार्ग से, जिनवंदन को आते।
जो जन पूजें श्रद्धा धर मन, वे अनुपम सुख पाते।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुखावहवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा के उत्तर तट में, भूतारण्य निकट में।
'चंद्रमाल' वक्षार मनोहर, देव रमें उस तट में।।
चार कूट में सिद्धकूट इक, जिनमंदिर अभिरामा।
मैं इत अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ, पाऊँ शिव विश्रामा।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थचन्द्रमालवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सूर्यमाल' वक्षार अनोखा, सूरजतेज लजावे।
सिद्धकूट में जिनवर मंदिर, मुनिमन कुमुद[1] खिलावे।।

1. श्वेत कमल।

भवविजयी की प्रतिमा मणिमय, पूजत पाप हरे हैं।
नित प्रति ध्यान धरें जो उनका, वे यमपाश[1] हरे हैं।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसूर्यमालवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नागमाल' वक्षार भूमिधर[2], नवनिधि वैभवशाली।
सिद्धकूट में जिनचैत्यालय, अनुपम छवि मणिमाली।भव.।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थनागमालवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'देवमाल' वक्षार सोलवां, स्वर्गपुरी सम शोभा।
चार कूट में एक कूट पर, जिनगृह अतुल अनोखा।।भव.।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थदेवमालवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा–

सुरगिरि पंचम के उभय, पूर्व अपर दिश जान।
सोलहगिरि वक्षार के, जिनगृह जजूँ महान।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतेय शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

जिनवर के गुण रत्न, अतुल अनंत अपार हैं।
गिनने की नहिं शक्ति, लेश कहूं गुणमालिका।।1।।

1. मृत्यु। 2. पर्वत।

–गीता छन्द–

जय जय गिरी वक्षार के, सोलह जिनालय गुण भरे।
जय जय विदेहों में सतत, बत्तीस की रचना करें।।
इन एक-इक के मध्य में, बहती विभंगा नदि तहां।
जो कुलगिरी तल कुंड से, निकली मिले सीतादिमा।।2।।

प्रत्येक पर्वत नीलगिरि, सीता-सितोदा स्पर्शते।
उत्तर दिशी वक्षार गिरि, निषधाद्रि नदि स्पर्शते।।
सब हैं सुवर्णिम कांतिमय, औ चार कूटों से दिपे।
पर्वत निकट के कूट पर, दिक्कन्यका के गृह दिपें।।3।।

सरिता निकट के कूट पे, जिनगेह अकृत्रिम कहे।
मधि-मध्य के दो कूट पे, व्यंतर सुरों के गृह रहें।।
वन वेदिका तोरण अतुल, पुष्करिणियां जल से भरीं।
सब कूट के चहुंदिश बगीची, शोभतीं शाश्वत खरी।।4।।

जो भव्य भय भयभीत हैं, वे ही जिनालय वंदते।
जो भव्य भवदधि तीर हैं, वे दर्श कर अघ खंडते।।
जो मोह राग अरु द्वेष शत्रू, मारने को चाहते।
वे ही जिनेश्वर पादपंकज चित्त में नित धारते।।5।।

जो तुम शरण में आ गये, यमराज भी उनसे डरें।
जो तुम वचन में दृढ़ रहें, मोहारि उनसे भय करें।।
तुम नाम अक्षर जो जपें, वो आत्म अनुभव पावते।
तुम वच सुधारस[1] जो चखें, वो परम आनंद पावते।।6।।

बहु विघ्नकर रोगादि भय, शोकादि मानस व्याधियां।
तुम भक्ति करते शीघ्र ही भग जांय आधि उपाधियां।।
व्यंतर पिशाचादिक भयंकर, चोर क्रूर ग्रहादि भी।
बाधा न किंचित कर सकें, जिनको शरण है आपकी।।7।।

1. अमृत ।

सब ग्रन्थ में गाया सुयश, यति में वृषभ[1] सब साधु ने।
सुनकर प्रभो तुम कीर्ति को, अब आ गया हूँ पास में।।
रक्षा करो या ना करो, बस नाथ! आप प्रमाण हैं।
जो आपका कर्तव्य हो, वह कीजिये बस मान्य है।।8।।

–दोहा–

भवहर जिनवर मूर्तियां, हरें सकल भवजाल।
शिवलक्ष्मी हित 'ज्ञानमति', वंदन करे त्रिकाल।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. यतिवृषभाचार्य तिलोयपण्णत्तिकर्ता।

(पूजा नं.32)

विद्युन्मालीमेरु के चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

पश्चिम पुष्कर द्वीप में, पूर्व अपर सुविदेह।
दक्षिण-उत्तर में भरत-ऐरावत वर नेह।।
बत्तिस क्षेत्र विदेह औ, भरतैरावत जान।
चौंतिस रूपाचल विषे, जिनगृह पूजूँ आन।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टक–बसंततिलका छंद–

गंगानदी सलिल शीतल कुंभ में है,
धारा करूं मुझ मनोगत मल हरे है।
चौंतीस रूप्यगिरि के जिनमंदिरों की,
पूजा करूँ जगत वंद्य जिनेश्वरों की।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूरवासित सुगंधित गंध लाके,
पूजूँ तुम्हें हृदय ताप व्यथा मिटाके।।चौंतीस.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कामोद वासमति तंदुल शुभ्र लाया,
अक्षय अखंड पद हेतु तुम्हें चढ़ाया।
चौंतीस रूप्यगिरि के जिनमंदिरों की,
पूजा करूँ जगत वंद्य जिनेश्वरों की।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जाती कदंब अरविंद प्रसून लाया,
शृंगारहार मदनारि[1] तुम्हें चढ़ाया।।चौंतीस.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मैसूरपाक[2] बरफी पकवान लाऊँ,
पीयूष पिंडसम स्वातम स्वाद पाऊँ।।चौंतीस.।।5।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर वर्त्तिक[3] शिखामय दीप लाऊँ,
पूजूं तुम्हें हृदय मोह सभी मिटाऊँ।।चौंतीस.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरू सुरभि धूप जलाय करके,
आत्मा विशुद्ध मुझ होत जु कर्म जलके।।चौंतीस.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर आम अमरूद अनार लाया,
सर्वार्थसिद्धि फल हेतु तुम्हें चढ़ाया।।चौंतीस.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. शृंगार है हार जिसका ऐसा मदन-उसके शत्रु-जिनेन्द्रदेव।
2. मैसूर प्रांत की बरफी। 3. बत्ती।

नीरादि द्रव्य कर अर्घ्य सुवर्ण थाली,
पूजूं तुम्हें नहिं मनोरथ जाय खाली।
चौंतीस रूप्यगिरि के जिनमंदिरों की,
पूजा करूँ जगत वंद्य जिनेश्वरों की।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

गंगनदी को नीर, तुम पद धारा मैं करूं।
शांति करो जिनराज, चउसंघ को सबको सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्व सौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

विद्युन्माली मेरू चउदिश चौंतिस रूप्यगिरि।
उनके श्री जिनगेह, पृथक् पृथक् पूजन करुँ।।1।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिविजयार्धपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–दोहा–

सीतानदि उत्तर तरफ, भद्रसाल वन पास।
'कच्छादेश' रजतगिरी, जिनगृह जजूँ हुलास।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुकच्छा' मध्य में रूपाचल मनहार।
सिद्धकूट में जिनभवन, जजूँ सदा सुखकार।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुकच्छादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महाकच्छा' मधी, रूपाचल अभिराम।
सिद्धकूट का जिनभवन, पूजूँ करूँ प्रणाम।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहाकच्छादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावति' विषे, विजयारध सुखकार।
भवविजयी के जिनभवन, पूजूँ भव दुःख टार।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छकावतीदेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आवर्ता' सुविदेह में, रूपाचल रजताभ।
ताके श्री जिनगेह को, पूजूँ करो कृतार्थ।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थआवर्तादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'लांगलावति' विषे, रजताचल सुखकार।
सिद्धकूट पर जिनभवन, पूजूँ सुयश उचार।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थलांगलावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कला' में अचल, विजयारध मनहार।
ताके श्रीजिनगेह को, पूजूँ शिव सुखकार।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलादेशमध्यविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' मधि, रूपाचल सुखधाम।
जिनगृह के जिनबिंब को, पूजूँ नित शिवधाम।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता के दक्षिण तरफ, देवारण्य समीप।
'वत्सा' के विजयार्ध का, जिनगृह जजूँ पुनीत।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सादेशमध्यविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवत्सा' मध्य में, विजयारध गुणधाम।
उस पे जिनमंदिर जजूँ परमानन्द प्रदाम्[1] ।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुवत्सादेशमध्यविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावत्सा' मधी, रूपाचल मनहार।
जिनमंदिर के बिंब को, पूजूँ शिव करतार।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहावत्सादेशमध्यविजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावति' विषे, रूपाचल सुखकाम।
तापे जिनगृह जिनकृती[2], पूजूँ भुवन ललाम।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सकावतीदेशमध्यविजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्या' देश विदेह में, रजताचल गुणमाल।
जिनगृह के जिनबिंब को, पूजूँ जग प्रतिपाल।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरम्यादेशमध्यविजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' मध्य में, रूपाचल अभिराम।
जिनचैत्यालय को जजूँ, पाऊँ मोक्ष निधान।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुरम्यादेशमध्यविजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रमणीया' सुविदेह में, रूप्यगिरी[3] रूपाभ[4]।
जिनगृह की जिनमूर्ति को, जजूँ नमाऊँ माथ।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरमणीयादेशमध्यविजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावति' तहाँ, खग पर्वत सुखमाल।
जिनमंदिर में मूर्ति की, पूजा करूँ त्रिकाल।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमंगलावतिदेशमध्यविजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. देने वाले। 2. प्रतिमा। 3. विजयार्ध पर्वत। 4. चांदी का ।

–रोला छन्द–

भद्रसालवन पास, सीतोदा नदि दायें।
'पद्मादेश' विदेह, मधि रूपाद्रि कहाये।।
तापे श्रीजिनगेह, सब भवचक्र[1] विनाशें।
जो पूजें धर नेह, केवल ज्ञान प्रकाशें।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मादेशमध्यविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुपद्मा' माहिं, रजताचल मन मोहे।
तापे श्रीजिनधाम, सुर किन्नर मन मोहे।।
ताके श्री जिनबिंब, भवि भव चक्र विनाशें।
जो पूजें धर प्रीति, केवल ज्ञान प्रकाशें।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुपद्मादेशमध्यविजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महपद्मा' सुविदेह, तामे रजतगिरी है।
उसपे श्री जिनवेश्म, अद्भुत सौख्यसिरी है।। ताके.।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहापद्मादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावति' मधि में रूप्यगिरी है।
त्रय कटनी युत रम्य, जिनगृह अतुल श्री है।।ताके.।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मकावतीदेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' देश विदेह, शंख ध्वनी जहँ गूँजे।
बीच रजतगिरि एक, जिनमंदिर सुर पूजें।।ताके.।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थशंखादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1.संसार भ्रमण।

'नलिनादेश' अपूर्व, शाश्वत सिद्ध कहा है।
बीच रजतगिरि शीश, जिनगृह नित्य कहा है।।
ताके श्री जिनबिंब, भवि भव चक्र विनाशें।
जो पूजें धर प्रीति, केवलज्ञान प्रकाशें।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थनलिनादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' देश अनूप, शिव का मार्ग प्रकासे।
बीच रजतगिरि श्रेष्ठ, जिनगृह अनुपम भासे।।ताके.।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थकुमुदादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरिता' देश विदेह, छह खण्डोंयुत सोहे।
बीच कहा विजयार्ध, जिनगृह से मन मोहे।।ताके.।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसरितादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नदि के उत्तर माहिं, भूतारण्य समीपे।
'वप्रादेश' विदेह, बीच रजतगिरि दीपे।।ताके.।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' मध्य, रूपाचल अविकारी।
नव कूटों में एक, जिनमंदिर सुखकारी।।ताके.।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुवप्रादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महावप्रा' देश, अगणित विभव धरे हैं।
बीच रजतगिरि श्वेत, जिनवर सद्म धरे हैं।।ताके.।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहावप्रादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वप्रकावति' देश, बीच रजतगिरि धारे।
नव कूटों में एक, जिनगृह भवदधि तारे।।
ताके श्री जिनबिंब, भवि भव चक्र विनाशें।
जो पूजें धर प्रीति, केवलज्ञान प्रकाशें।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रकावतीदेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' देश विदेह, रौप्य अचल से सोहे।
त्रय कटनीयुत रम्य, ऊपर जिनगृह सोहे।।ताके.।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगंधा' मध्य, खग पर्वत मन मोहे।
इन्द्रादिक से वंद्य, जिनमंदिर इक सोहे।।ताके.।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुगंधादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' बीच, रजतगिरी रजताभा।
नव कूटों में एक, जिनमंदिर मणि आभा।।ताके.।।31।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधिलादेशमध्यविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' देश, रूप्यगिरी मधि धारे।
रत्नमयी इक कूट, जिनमंदिर को धारे।।ताके.।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधमालिनीदेशमध्य-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–नरेन्द्र छन्द–

पश्चिम पुष्कर अर्ध द्वीप में, सुरगिरि दक्षिण जानो।
भरत क्षेत्र के मध्य रूप्यगिरि, नव कूटों युत मानो।।

सिद्धकूट के जिनमंदिर में, रतनमयी प्रतिमा हैं।
जो जन अर्घ्य चढ़ाकर पूजें, लहें अतुल महिमा हैं।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभरतक्षेत्रमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली के उत्तर में, ऐरावत शुभ जानो।
मध्य रजतगिरि पे इक सौ दश, खग नगरी सरधानो।।
सिद्धकूट के जिनमंदिर में, रतनमयी प्रतिमा हैं।
जो जन अर्घ्य चढ़ाकर पूजें, लहें अतुल महिमा हैं।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिऐरावतक्षेत्रमध्यविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली मेरु उभय में, बत्तिस क्षेत्र विदेह कहे।
दक्षिण-उत्तर उभय भाग में, भरतैरावत क्षेत्र रहें।।
इन चौंतीस क्षेत्र के मधि में, एक एक विजयारध हैं।
सबके चौंतिस जिनभवनों को पूजूं शिवसुखकारक हैं।।35।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरदिक्चतुस्त्रिंशत्विजया-र्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

चौंतीसों विजयार्ध के, अकृत्रिम जिनधाम।
तिनकी गुणमाला कहूँ, होय सफल मम काम।।1।।

–शम्भु छन्द–

जय जय विद्युन्माली सुरगिरि, जो शत इन्द्रों से वंदित हैं।
जय जय उसके पूरब पश्चिम, बत्तीस अचल विजयारध हैं।।

जय जय सुरगिरि दक्षिण-उत्तर भरतैरावत दो क्षेत्र कहे।
जय जय इनके मधि रूपाचल, ये सब मिलके चौंतीस कहे।।1।।

इन गिरि की पहली कटनी पर, अभियोग्य देव के भवन बने।
दूजी कटनी पे विद्याधर, उन नगर एक सौ दश गिननें।।
तीजी कटनी पे नव कूटोंयुत, सिद्धकूट इक है उनमें।
अठ कूटों पे सुरगृह जानो, जो सिद्धकूट जिनगृह उसमें।।2।।

सब रूपाचल चांदी सम है, सबमें विद्याधर रहते हैं।
सब पर वन उपवन वेदी हैं, रत्नों की रचना कहते हैं।।
जो हैं विदेह के बत्तिस गिरि, हैं शाश्वत कर्मभूमि उनमें।
भरतैरावत के रजताचल, बस अन्तर पड़ता इन द्वय में।।3।।

यहं पर हैं चौथे काल सदृश, आदी औ अन्त सदृश रचना।
विद्याधर में जाती कुल औ, साधित त्रय[1] विद्या को धरना।।
त्रय कारण से विद्या पाकर, खे गमनादिक[2] बहु रूप धरें।
इस हेतू से ये जन मानव, विद्याधर सार्थक नाम धरें।।4।।

ये खग अकृत्रिम चैत्यालय, में जाते वंदन करते हैं।
कोई कोई दीक्षा लेकर, तहँ कर्म काट शिव वरते हैं।।
विजयारध के जिनमंदिर में, बहु रत्नमयी जिनप्रतिमा हैं।
सुर नर विद्याधरगण पूजें, ये मृत्युंजयि की उपमा हैं।।5।।

जो मनोयोग से बंधे कर्म, वे उदय आय के फलते हैं।
जो वचन योग से बंधे कर्म, भी उदयागत हो खिरते हैं।।
जो काययोग से बंधे कर्म, वे भी सबको दुखदायक हैं।
ये अशुभ कर्म के उदय सभी, को रोग शोक भयदायक हैं।।6।।

जिन चरणों की पूजा करते, उन अशुभ कर्म सब झड़ते हैं।
अतिशयकारी हों पुण्य बंध, उनके मनवांछित फलते हैं।।
वे क्रम से इन्द्र चक्रवर्ती, बन महापुण्य रस चखते हैं।
पुन मोह अरी का शीश काट, वे मुक्ति रमापति बनते हैं।।7।।

1. जाति, कुल और साधना से सिद्ध। 2. आकाश में।

–दोहा–

तुम भक्ती पीयूष पी, जन जन हुये निहाल।
'ज्ञानमती' निज संपदा, भुगते शाश्वत काल।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.33)

विद्युन्मालीमेरु संबंधि षट् कुलाचल जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

पश्चिम पुष्कर द्वीप में, छह कुल पर्वत जान।
तिनके श्री जिनधाम को, पूजूँ श्रद्धा ठान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टक–भुजंगप्रयात छंद (नरेन्द्रं फणीन्द्रं...)

पयोराशि[1] को नीर झारी भराके।
अनंते भवों की तृषा को बुझाके।।
कुलाद्री[2] छहों के जिनागार[3] पूजों।
अनंते भवों के दुखों से बचूं जो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कपूरादि चंदन घिसा भर कटोरी।
महामोह संताप नाशो घनेरी।।कुलाद्री.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. क्षीर समुद्र । 2. कुल पर्वत। 3. जिनमंदिर ।

सुधासूति[1] सम तंदुलों को धुलाये।
चिदानंद चैतन्य पीयूष पाये।।
कुलाद्री छहों के जिनागार पूजों।
अनंते भवों के दुखों से बचूं जो।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सरोजात[2] कल्हार[3] मंदार लाके।
महामार[4] जेता प्रभू को चढ़ाके।। कुलाद्री.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कलाकंद लड्डू पुआ पूरियां हैं।
निजातम सुधा हेतु चरु अर्पिया है।।कुलाद्री.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कपूरादि की ज्योति उद्योतकारी।
मनोगेह में ज्ञान की ज्योति भारी।।कुलाद्री.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगनि पात्र में धूप खेऊँ सुगंधी।
सभी पाप राशी जले अग्नि संगी।।कुलाद्री.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंनास नींबू नरंगी मंगाके।
महामोक्ष की आश लेके चढ़ा के।।कुलाद्री.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. चंद्रमा। 2. कमल। 3. लाल कमल। 4. काम विजयी।

उदक गंध अक्षत प्रसूनादि लाऊँ।
निजातम विशुद्धी करो शीश नाऊँ।।
कुलाद्री छहों के जिनागार पूजों।
अनंते भवों के दुखों से बचूं जो।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

पद्म सरोवर नीर, सुवरण झारी में भरूँ।
जिनपद धारा देय, भववारिधि से उत्तरूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुवरण पुष्प मंगाय, प्रभु चरणन अर्पण करूँ।
वर्ण गंध रस फास, विरहित जिनपद को वरूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

धर्मामृत वर्षा करें, मेघ अलौकिक आप।
तुम गुण कण[1] को गावते, मिटें सकल संताप।।1।।

इति श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

मद अवलिप्तकपोल छन्द–(मेरी भावना)

विद्युन्माली दक्षिण दिश में, 'हिमवन' नग कलधौत[2] समान।
ग्यारह कूटों में अनुपम इक, सिद्धकूट जिनमंदिर जान।।
बीचोंबीच पद्म सरवर में कमल बीच श्रीदेवी थान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस[3] दान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिहिमवन्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. लेश । 2. सुवर्ण। 3. अमृत।

पंचम सुरगिरि दक्षिण दिश में, चांदी सदृश 'महाहिमवान'।
बीच सरोवर महापद्म में, कमल मध्य ह्री देवी मान।।
आठ कूट में अनुपम इक है, सिद्धकूट अविचल गुणखान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस दान।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिमहाहिमवान्पर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनकाचल[1] पंचम दक्षिण दिश, 'निषध' तप्त सुवरण छवि मान।
बीच तिगिंछ सरोवर मध्ये, कमल बीच धृतिदेवी जान।।
नव कूटों में अनुपम इक है, सिद्धकूट शिव मारग जान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस दान।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनिषधपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली मेरू उत्तर, 'नीलाचल' वैडूर्य समान।
मध्य केशरी द्रह में पंकज, बीच कीर्तिदेवी द्युतिमान।।
नवकूटों में सिद्धकूट पर, मणि रत्नों से खचित बखान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस दान।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनीलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम सुरनग के उत्तर में रजतवर्ण 'रुक्मीगिरि' जान।
मध्य सरोवर पुंडरीक में, कमल बीच बुद्धीसुरि मान।।
आठ कूट में अनुपम इक है, सिद्धकूट शिव पंथ महान्।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस दान।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिरुक्मिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णाचल पंचम के उत्तर, शिखरी पर्वत स्वर्ण समान।
मध्य महापुंडरीक सरोवर, जलज[2] बीच लक्ष्मी सुरि मान।।

1. मेरु। 2. कमल ।

ग्यारह कूटों में इक अनुपम, सिद्धकूट शाश्वत सुखखान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस दान।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिशिखरीपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा

पंचम[1] सुरगिरि के उभय, षट् कुलपर्वत सिद्ध।
तिनके षट् जिनवर भवन, पूजत लहूँ समृद्ध।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

जय जय श्री जिनधाम, जय जय जग चूड़ामणी।
जय जय जिनवर नाम, सुमिरन से ही सुख मिले।।1।।

चाल (हे दीनबन्धु....)

जो शाश्वते जिनमूर्तियों की वंदना करें।
वे रोग शोक संकटों की खंडना करें।।
हे नाथ! मेरी कामना को पूर्ण कीजिये।
अनादि मोह भावना को चूर्ण कीजिये।।1।।

ये द्रव्य कर्म आत्मा से एक हो रहे।
ये भावकर्म निजस्वभाव में विकार हैं।।
नोकर्म आत्मा के विविध रूप बनाते।
तिर्यंच आदि देह धार नाच नचाते।।2।।

1. पाँचवा मेरु।

ज्ञानावरण है कर्म मेरे ज्ञान को ढके।
ये दर्शनावरण करम निजरूप को ढके।।
ये कर्म वेदनीय सुक्ख दुःख दे रहा।
ये मोहनीय कर्म मुझे मूढ़ कर रहा।।3।।

यह नाम कर्म नाना रूप मुझसे धराता।
औ गोत्र कर्म उच्च नीच कुल में घुमाता।।
आयू करम चारों गती में रोक धरे हैं।
औ अन्तराय कर्म सदा विघ्न करे हैं।।4।।

आठों करम के भेद कहे घाति अघाती।
उत्तर प्रकृती भेद से हैं आत्म विघाती।।
प्रत्येक कर्म के असंख्य भेद कहे हैं।
जो सर्वदा विपाक[1] में अनंत भये हैं।।5।।

इन अष्ट कर्मराशि में जो मोहनी कहा।
उससे अनंत काल तक निजरूप ना लहा।।
जो मोहनी को जीत के निर्मोह बन गये।
वे मृत्यु को भी मार के बस मोक्ष को गये।।6।।

हे देव! आप तो अनंत कर्मजयी हैं।
अनंत दर्श ज्ञान सौख्य वीर्यमयी हैं।।
बस आपने ही मोहनी का नाश किया है।
बस आपने ही मोक्ष में निवास किया है।।7।।

इस हेतु से मैं आपके ही पास में आया।
वसु कर्म नासने की युक्ति सीखने आया।।
करके कृपा करुणानिधान शक्ति दीजिये।
इस मोह शत्रु को सदा को नष्ट कीजिये।।8।।

1. उदय।

–दोहा–

दुःखितजन वत्सल प्रभो! करिये मुझ प्रतिपाल।
केवल 'ज्ञानमती' निधी, देकर करो निहाल।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.34)

विद्युन्मालीमेरु संबंधि इष्वाकार जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–नरेन्द्र छन्द–

पुष्करार्ध में दक्षिण-उत्तर, इष्वाकार गिरी हैं।
कनकवर्णमय शाश्वत अनुपम, धारें अतुलसिरी हैं।।
इन दोनों पे दो जिनमंदिर, पूजत पाप पलानो।
आह्वानन कर जिनप्रतिमा का, विधिवत् पूजन ठानो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–नरेन्द्र छंद–

तीन लोक भर जाय प्रभो मैं, इतना नीर पिया है।
फिर भी प्यास बुझी नहिं किंचित्, यातें शरण लिया है।।
हृदय ताप उपशांती हेतू, शीतल जल ले आया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह राग की दावानल में, चिर से झुलस रहा हूँ।
किंचित् मन की दाह मिटी नहिं, अब तुम पास खड़ा हूँ।।

रागदाह हर शीतल हेतू, हरि चंदन घिस लाया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्म मरण के बहु दुःखों से, अब मैं श्रांत हुआ हूँ।
अन्य नहीं निरवारण समरथ, यातें पूज रहा हूँ।।
अक्षय अव्यय निजपद हेतू, उज्ज्वल अक्षत लाया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मकरध्वज[1] ने चिर भव-भव में, मुझको अधिक छला है।
मारविजेता[2] तुमको सुनके, ली अब शरण भला है।।
काममोहयमत्रिपुरारी[3] हर[4]! विविध कुसुम मैं लाया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

संख्यातीते तीन लोक सम, अन्न प्रभो! खाया मैं।
फिर भी भूख अगनि नहिं बुझती, इससे अकुलाया मैं।।
स्वातम अमृत स्वाद हेतु मैं, बहुविध व्यंजन लाया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुविध दीपक विद्युत आदी, तम हरने हित लाया।
फिर भी अंतर अंधकार को, दूर नहीं कर पाया।।

---

1. कामदेव। 2. कामदेव विजयी। 3. कामदेव, मोह और मृत्यु ये तीन पुर सदृश है इनको जीतने वाले। 4. महादेव।

स्वपर भेद विज्ञान हेतु मैं, मणिदीपक ले आया।।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म दुःख देते जग में, इनको शीघ्र जलाऊँ।
धूप सुगंधित अग्निपात्र में, श्रद्धासहित जराऊँ।।
आतम शुद्धी करने हेतू, पूजन करने आया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुविध सरस मधुर फल खाये, फिर भी तृप्ति न पाई।
आत्मसुधारस अनुभव पाने, प्रभु तुम पूज रचाई।।
ज्ञानानन्द स्वभावी हो तुम, यह सुन शरणे आया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत आदी ले, अर्घ्य सजाकर लाया।
नित्य निरंजन चिच्चिन्तामणि, रत्न कमाने आया।।
तुमसे हे प्रभु अखिल ज्ञान निधि, प्राप्त हेतु मैं आया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

कनक भृंग में मिष्ट जल, सुरगंगा[1] समश्वेत।
जिनपद धारा देत ही, भव भव को जल देत।।10।। शांतये शांतिधारा।

वकुल सरोरुह मालती, पुष्प सुगंधित लाय।
पुष्पांजलि अर्पण करूं सुख संपति अधिकाय।।11।। दिव्य पुष्पांजलिः

1. आकाशगंगा।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

शाश्वत जिन आगार[1], मणिरत्नों से परिणमें।
प्रभु करिये भवपार, नितप्रति अर्चूं भाव से।।1।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारगिरिस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिंक्षिपेत्।

–रोला छन्द–

पुष्करार्ध वर द्वीप, ताके दक्षिण माहीं।
इष्वाकार गिरीश, अद्भुत अतुल कहाहीं।।
तापे सिद्ध सुकूट, जिनप्रतिमा अविकारी।
पूजूँ अर्घ्य बनाय, जल फल से भर थारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः दक्षिणादिशिइष्वाकारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतिय द्वीप के माहिं, उत्तर दिश में जानो।
इष्वाकार नगेश, अनुपम रूप बखानो।।
तापे जिनवरगेह, सिद्धकूट मनहारी।
पूजूँ अर्घ्य बनाय, जल फल से भर थारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः उत्तरदिशिइष्वाकारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

कंचनदेह सुकांति, दो पर्वत मन मोहे।
चार चार हैं कूट, सुर किन्नर गृह सोहें।।
उनमें इक इक सिद्ध-कूट जिनालय दो हैं।
पूरण अर्घ्य चढ़ाय, पूजूँ शिवसुख हो हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः दक्षिणोत्तरदिशायांसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

1. भवन।

जयमाला

–दोहा–

अशरण के प्रभु तुम शरण, निराधार आधार।
तुम गुण गणमणि मालिका, लेउं कंठ में धार।।1।।

–तोटक छंद–

जय इष्वाकार जिनेश गृहं, जय मुक्तिवधू परमेश गृहं।
जय नाथ त्रिलोकपती तुम हो, जय नाथ अनंत गुणांबुधि हो।।1।।

जय साधु मनोम्बुज भानु समं, जय भव्य कुमोदनि चन्द्र समं।
जय भक्त मनोरथ पूरक हो, जय सर्व दुखांकर चूरक हो।।2।।

जय कल्पतरू सम सौख्य भरो, जय वांछित वस्तु प्रदान करो।
जय संसृति रोग महौषधि हो, जय तारक भव्य भवोदधि हो।।3।।

जय तुंग चतुःशत योजन है, जय विस्तृत सहज सुयोजन है।
जय लम्बे आठ सु लाख कहे, द्वय शैल सुवर्णिम कांति लहे।।4।।

मुनिवृंद वहाँ नित भक्ति करें, निज आतम बोध विकास करें।
खगवृंद वहाँ नित आवत हैं, जिनपाद सरोरुह ध्यावत हैं।।5।।

सुर अप्सरियाँ बहु नृत्य करें, गुण गावत चित्त उमंग भरें।
करताल मृदंग बजावत हैं, निज कर्म कलंक नशावत हैं।।6।।

द्वय पे जिनमंदिर स्वर्णमयी, जिनबिम्ब मणीमय रत्नमयी।
छवि सौम्य विराग विदोष कही, द्युति से रवि रश्मि लजे सबही।।7।।

जिनपाद सरोरुह शर्ण लिया, प्रभु अर्ज सुनो हमरी कृपया।
यमपाश विपाश हरो प्रभुजी, सब भाव विभाव हरो प्रभुजी।।8।।

हम आश धरें तुम पाद प्रभो, अब वेग उबार भवोदधि सो।
मुझ 'ज्ञानमती' सुख शांति करो, जिनदेव! सभी गुण पूर्ण करो।।9।।

–घत्ता–

जय इष्वाकारा, पर्वत सारा, जय जिनमंदिर नित्य नमूँ।
जय जिनगुण गाके, कर्म नशाके, नित्य निरंजन सिद्ध बनूँ।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिइष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.35)

मानुषोत्तर पर्वत पूर्वदिक् जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छन्द–

वरद्वीप सोलह लाख योजन, नाम पुष्कर जानिये।
इस मध्य चूड़ी के सदृश नग मानुषोत्तर मानिये।।
इस पे चतुर्दिश चार अनुपम, सासते जिनगेह हैं।
थापूँ यहां पूरब दिशा, जिनगेह जिन धर नेह हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्करद्वीपमध्यस्थितमानुषोत्तरपर्वतसंबंधिपूर्वदिक्सिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्करद्वीपमध्यस्थितमानुषोत्तरपर्वतसंबंधिपूर्वदिक्सिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्करद्वीपमध्यस्थितमानुषोत्तरपर्वतसंबंधिपूर्वदिक्सिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–(चाल-नंदीश्वर पूजा)–

भव भव में शीतल नीर, जी भर खूब पिया।
पर बुझी न मन की प्यास, आखिर ऊब गया।।
इस हेतू से जल लाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु मोह अग्नि की दाह, मुझको दहन करे।
हिमकण चंदन बर्फादि, नहिं भव ताप हरे।।
इस हेतू चंदन लाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धन धान्य विभव को पाय, नहिं व्यय को चाहूँ।
पर अब तक इनकी नाथ, रक्षा नहिं पाऊँ।।
इसलिये धवल ले शालि, तुम पद यजन करूँ।।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मन नयन घ्राण हर पुष्प, सुरभी खूब लिया।
पर भगवन तुम गुण गंध, अब तक नाहिं लिया।।
इसलिये विविध सुम लाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भव में बहु पकवान, खाके तृप्त नहीं।
तुमने प्रभु क्षुध की व्याधि, नाशी तृप्ति लही।।
इसलिये मधुर चरु लाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।5।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं चाहूं दीपक सूर्य, मन का तिमिर हरे।
पर झूठ हुई सब आश, समकित पाय खरे।।
निज द्युति हित दीपक लाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दुख दूर करन हित नाथ! बहुते यत्न करे।
पर दुःख हरण में अन्य, कोई नाहिं अरे।।

इस हेतू धूप जलाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भव के सुख फल हेतु, बहुते देव यजे।
पर अब तक कोई नाहिं, शिव फल देय सके।।
इसलिये सरस फल लाय, तुम पद यजन करूँ।।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुमूल्य अतुल फल हेतु, सब जग घूम चुका।
पर मिली न अब तक तृप्ति, बहु पद चूम चुका।।
शिव फल हित अर्घ्य चढ़ाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।9।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सिंधु नदी को नीर, धार देय जिन पद कमल।
मिले भवोदधि तीर, शांतीधारा शम करे।।10।। शांतये शांतिधारा।

वकुल मालती फूल, सुरभित करते दश दिशा।
मारमल्लहर[1] देव तुम पद अर्पूं मैं सदा।।11।। दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य –दोहा–

मनुजोत्तर नग पूर्वदिश, जिनचैत्यालय सार।
पुष्पांजलि कर पूजहूँ, करो सकल सुख सार।।1।।

इति मानुषोत्तरपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

1. काम मल्ल के विजेता।

–गीता छन्द–

नग मानुषोत्तर से परे, नहिं मनुष जा सकते कभी।
इस हेतु सार्थक नाम पर्वत, शास्त्र कहते हैं सभी।।
इस पूर्व दिश में जैनमंदिर, मूर्तियाँ जिनराज की।
पूजूँ चढ़ाकर अर्घ्य ले, पदवी मिले जिनराज की।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

जय जय शाश्वत जिनभवन, जय जय जिनवर मूर्ति।
जय जय जयमाला कहूँ, करुँ रतनत्रय पूर्ति।।1।।

–चौबोल छन्द (चाल–मेरी भावना)–

जय जय मनुजोत्तर नग जग में, जय जय उसकी अति महिमा।
जय जय पूरब दिश का जिनगृह, जय जय रतनमयी प्रतिमा।।
जय जय कर्मारी संहारक, जय जय जिन भव पार करें।
जय जय तीन लोक के नायक, भक्तों को सुख अतुल भरें।।2।।

सत्रह सौ इक्कीस सुयोजन, तुंग कहा यह ग्रन्थन में।
इक हजार बाइस योजन यह, मूल में है विस्तृत सच में।।
मध्य भाग में सत सौ तेइस, चउ सौ चौबीस ऊपर में।
स्वर्णमयी है अनादि अनिधन, चौदह महागुफा इसमें।।3।।

टंकोत्कीर्ण भीतरी तरफे, घटता बाहिर तरफ कहा।
दिव्य रत्नमय रचना बहुविध, सुर खेचर मन मोह रहा।।
पर्वत तल में औ ऊपर भी, तट वेदी चउ तरफ कहीं।
वेदी मध्य सरस उपवन में, तरु पंक्ती फल फूल रहीं।।4।।

इस पे चारों दिश जिनमंदिर, भविजन पूजें भक्ति करें।
पूरब दिश के जिन चैत्यालय, की पूजन हम नित्य करें।।
अगणित भव भव के अघ संचित, तत्क्षण ही निज शक्ति हरें।
निज फल देने में बल विरहित, साता में संक्रमण करें।।5।।

–घत्ता–

जय जय शिवभर्ता, सब अघहर्ता, निज सुख कर्ता तुमहिं नमें।
सो 'ज्ञानमती' कर, सर्वकुमति हर, शिव सुख पाकर चिरहिं रमें।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.36)

मानुषोत्तर पर्वत दक्षिण दिश जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

मनुजोत्तर नग के उपरि, दक्षिण दिश अभिराम।
जिनमंदिर जिनबिंब को, पूजूँ शिव सुख धाम।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–

–सोरठा–

मधुर पुष्टकर नीर, सिंधु नदी का लाय के।
मनुजोत्तर दिश याम्य[1], जिन चैत्यालय नित जजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हिमकर चंदन शीत, कंचन द्रव सम परिणमे।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. दक्षिण।

शाली कलम अखंड, तंदुल धवल सुगंधिते।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरवृक्षों के फूल, विविध सुगंधित लायके।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नानाविध घृत सिक्त, व्यंजन मधुर सुहावने।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।5।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचनदीप प्रजाल, अंतर ध्वांत विनाशने।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूरादि आदि सुगन्ध, धूप अग्नि में खेयके।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल ले कल्पतरूज[1], सरस मधुर मनमोहने।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. कल्पवृक्ष से उत्पन्न हुए।

जल गंधादि मिलाय, अर्घ्य लिये कर पात्र में।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।9।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सिंधु नदी को नीर, धार देय जिनपद कमल।
मिले भवोदधि तीर, शांतीधारा मैं करूं।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल मालती फूल, सुरभित करते दश दिशा।
मारमल्लहरदेव, तुम पद अर्पूं मैं सदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–

–दोहा–

मनुजोत्तर पे याम्यदिश, शाश्वत जिनगृह सिद्ध।
पुष्पांजलि कर पूजते, मिले नवोनिध रिद्ध।।1।।

इति मानुषोत्तरपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–अडिल्ल छन्द–

नरपर्वत[1] पे दक्षिण दिश जिनगृह कहा।
अकृत्रिम जिनबिंब, सहित अद्भुत रहा।।
पापास्रव के संवर हेतू जिन जजूँ।
पुनः ध्यान रसलीन पूर्ण संवर भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

1. मानुषोत्तर पर्वत।

जयमाला

–दोहा–

भावन व्यंतर ज्योतिषी, कल्पवासिया देव।
जिनगुण मणिमाला पढ़े, मैं भी करहूं सेव।।1।।

रोला छन्द–(चाल–अहो जगत् गुरुदेव...)

मनुजोत्तर नग सिद्ध, स्वर्णिम शोभ रहा है।
चक्षु सुचक्षू[1] देव, दो से रक्ष कहा है।।
श्री जिनमहल अपूर्व, मुखमंडप अतिसोहे।
गर्भालय के मध्य, जिनप्रतिमा मन मोहे।।2।।

जो पूजें धर प्रीत, चिन्मय ज्योति लहे हैं।
जो वंदे नत शीश, परमानन्द गहे हैं।।
जो जिनवर गुणमाल, निज ग्रीवा[2] में धारें।
मुक्ति रमा भरतार, होकर सब जग तारें।।3।।

जो प्रभु तुम गुण कीर्ति, सौरभ भुवि विस्तारें।
उनके गुण की गंध, फैले लोक मंझारे।।
जो प्रभु तुम चरणाब्ज, आश्रय आन गहे हैं।
वे सब जग में सिद्ध, समरथवान भये हैं।।4।।

जो तुम वच पीयूष, रुचि प्याली से पीवें।
वे अजरामर होय, काल अनंते जीवें।।
जो तुम ध्यान लगाय, मन एकाग्र करे हैं।
वे तत्क्षण ही मृत्यु, अरि पे वार करे हैं।।5।।

जिन हृदयाम्बुज आप, नितप्रति वास करे हैं।
उनकी नानाव्याधि क्षण में आप टरे हैं।।
तुम प्रभु ज्योतीपुंज, हृदय महल में आवो।
'ज्ञानमती' कर पूर्ण, भले फिर वापस जावो।।6।।

1. चक्षु और सुचक्षु नाम वाले। 2.कण्ठ।

–दोहा–

गुणरत्नाकर नाथ तुम, को गण पावे पार।
अल्पमती अब जानके, भव से लेहु निकार।।7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरिदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.37)

मानुषोत्तर पर्वत पश्चिम दिश जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–सोरठा–

पश्चिमदिश जिनगेह, मनुजोत्तर गिरि पे कहा।
थापूँ भक्ति समेत, जिनवर प्रतिमा शासती।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह!अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–गीता छंद–

सीता नदी का सलिल शीतल, स्वर्ण झारी में भरूँ।
भव भव तृषा दुख शांति हेतू, नाथ पद धारा करूँ।।
नग मानुषोत्तर में अपर दिश, जिननिलय पूजा करूँ।
चिंतामणी चैतन्य धन, निज को हि परमात्मा करूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीर चंदन मिश्रकर, कंचन कटोरी में भरूँ।
जग में अनादी से लगी संज्ञा चतुःज्वर[1] को हरूँ।।नग.।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आहार भय मैथुन और परिग्रह ये चार संज्ञायें ज्वर सदृश हैं।

शशिरश्मि सम उज्ज्वल, अखंडित शालि से थाली भरूँ।
चिरकाल संचित पाप पुंजों, को तुरत खंडित करूँ।।
नग मानुषोत्तर में अपर दिश, जिननिलय पूजा करूँ।
चिंतामणी चैतन्य धन, निज को हि परमात्मा करूँ।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार चंपक कल्पतरु के पुष्प नाना विध भरूँ।
रतिपतिजयी[1] जिनराज के, पदकंज की पूजन करूँ।।नग.।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखंड पायस दुग्धफेनी, मोदकादी ले घने।
क्षुध प्यास की बाधा रहित तुमको जजत हो सुख घने।।नग.।।5।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर बत्ती की शिखा, उद्योत दश दिश में करे।
तुम ज्ञान ज्योतीरूप हो, इस हेतु हम अर्चन करें।।नग.।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध गंधित धूप लेकर, अग्नि में खेऊँ सदा।
सब कर्म पुंजों को जलाकर, आत्म सुख सेवूँ कदा।।नग.।।7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अमृत फल अनारों, से भराया थाल मैं।
तुम नाथ परमानंदकारी, अब नवाऊँ भाल मैं।।नग.।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. कामदेव विजयी।

नीरादि फल पर्यंत वसुविध, अर्घ्य से थाली भरूँ।
अनमोल संपति हेतु मैं, जिनपाद की अर्चा करूँ।।
नग मानुषोत्तर में अपर दिश, जिननिलय पूजा करूँ।
चिंतामणी चैतन्य धन, निज को हि परमात्मा करूँ।।9।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सिंधुनदी को नीर, धार देय जिनपद कमल।
मिले भवोदधि तीर, शांतीधारा शम करे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल मालती फूल, सुरभित करते दश दिशा।
मार मल्लहर[1] देव, तुम पद अर्पूं मैं सदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

पश्चिम दिश जिनगेह, मनुजोत्तर नग के उपरि।
बहुविध भक्ति समेत, पुष्पांजलि कर पूजहूँ।।1।।

इति मानुषोत्तरपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–गीता छन्द–

पर्वत नरोत्तर पे अपर दिश, रत्नमय जिनगेह है।
संसार सागर पार हेतू, मैं जजूँ धर नेह है।।
जल गंध आदिक द्रव्य लेकर, नाथ को अर्पण करूँ।
षट् क्रिया आवश्यक[2] प्रपूरण, हेतु प्रभु चरणन परूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

1. कामदेव विजेता। 2. देवपूजा, गुरुपास्ति, स्वाध्याय, संयम, तप और दान।

जयमाला

–सोरठा–

विमलमूर्ति जिनधाम, अतुल विभव को कह सके।
प्रणमूँ आठों याम, गुणमणिमाला कंठ धर।।1।।

चाल– (हे दीन बन्धु....)

हे चित्स्वरूप जैनबिंब! मैं तुम्हें नमूँ।
हे आदि अंतशून्य! प्रकृतिरूप[1] मैं नमूँ।।
तुम हो अनादि परमब्रह्म ज्योतिस्वरूपी।
चैतन्य चिदानंद सहज रूप अरूपी।।1।

हो शुद्ध बुद्ध परम विश्वनाथ महेशा।
आनन्दकंद श्रीजिनंद नमत सुरेशा।
खेचर सुरों की टोलियाँ आ भक्ति भाव से।
हे नाथ! तुम्हें पूजती हैं नित्य चाव से।।2।।

इस मानुषोत्तराद्रि परे नर न जा सकें।
इस नग के इधर ढाई द्वीप में ही नर बसें।।
हैं एक सौ सत्तर कहीं जो कर्मभूमियाँ।
वे सब हैं ढाई द्वीप के अंदर की भूमियाँ।।3।।

हो ऋद्धि सहित साधुवृंद या हो खगेशा।
विद्याधरों के कुल में जन्म लेके नरेशा।।
या भूमिगोचरी मनुष्य गगन में चलें।
विद्या के बल से ढाई द्वीप में अधर चलें।।4।।

ये भव्य मेरुमंदिरों की वंदना करें।
निन्यानवे हजार योजन तक भी वीहरें।।
पर मानुषोत्तराद्रि से ऊपर न जा सकें।
ऐसी ही योग्यता कही है भव्य श्रद्धते।।5।।

1. स्वाभाविक नग्न रूप।

इस नग के ही भीतर के मनुज पुण्यशील हैं।
जो आत्मा की सिद्धि को करते अधीन हैं।।
वे भव्य समयसार रूप जिनको करे हैं।
संसार विषम वार्धि से वे शीघ्र तरें हैं।।6।।

मैंने भी मनुज योनि में ही जन्म लिया है।
सम्यक्त्वरत्न पाय जनम धन्य किया है।।
हे नाथ! निधी गिर न जाय भवसमुद्र में।
करके कृपा रक्षा करो चिंता न हो हमें।।7।।

–दोहा–

जय जय प्रभु त्रैलोक्यपति, आश्रित के प्रतिपाल।
'ज्ञानमती' निज संपदा, देकर करो खुशाल।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.38)

मानुषोत्तरपर्वत उत्तरदिश जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–अडिल्ल छन्द–

मनुजोत्तर नग ऊपर उत्तर दिश विषे।
सिद्धकूट में जिनमंदिर अनुपम दिपे।।
हेम रतन मणिनिर्मित, जिनवरबिंब को।
मैं थापूँ मन हर्ष हरूँ जग द्वंद को।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं–रोला छंद (चाल –अहो जगत...)

पयोराशि का नीर, धवल सुशीतल लीना।
निज आतम मलहीन, जिनवर पूजन कीना।।
मनुजोत्तर नग माहिं, उत्तर दिश जिनधामा।
कर्मगिरी[1] कर चूर, पाऊँ शिव विश्रामा।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः-जलं निर्वपामीति स्वाहा।

उदित सूर्य सम वर्ण, चंदन केशर लाया।
वर्ण गंध से शून्य, जिनवर चरण चढ़ाया।।मनु.।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः-चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. कर्मरूपी पर्वत ।

सोम[1] किरण समशालि, धोकर थाल भरा है।
अमल अखंडित ज्योति, जिन ढिग पुंज धरा है।।
मनुजोत्तर नग माहिं, उत्तर दिश जिनधामा।
कर्मगिरी कर चूर, पाऊँ शिव विश्रामा।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः-अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जपा कुसुम मंदार, बेला जुही चमेली।
भवहर जिनपद धार, होवे मुक्ति सहेली।।मनु.।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः-पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लड्डू मोतीचूर, कलाकंद चरु लाया।
आशापाश विनाश, जिनवर निकट चढ़ाया।।मनु.।।5।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः-नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमपात्र घृत पूर, बत्ती शिखा प्रकाशे।
ज्ञानज्योति जिन पूज, मनमंदिर परकाशे।।मनु.।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः-दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर मिल धूप, अग्नी संग जलाऊँ।
निज आतम कर शुद्ध, कर्म कलंक नशाऊँ।।मनु.7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः-धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल अंगूर अनार, घ्राण नयन मनहारी।
निज संपद फल हेतु, पूजूँ पद अविकारी।।मनु.।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः-फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. चंद्र।

वसुविध अर्घ्य बनाय, पूजूँ तुम पद आके।
मोक्ष अनर्घ्य अमूल्य, लेऊँ भक्ति बढ़ाके।।
मनुजोत्तर नग माहिं, उत्तर दिश जिनधामा।
कर्मगिरी कर चूर, पाऊँ शिव विश्रामा।।9।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः-अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सिंधु नदी को नीर, धार देय जिनपद कमल।
मिले भवोदधि तीर, शांतीधारा शम करे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल मालती फूल, सुरभित करते दश दिशा।
मारमल्लहर देव, तुम पद अर्पूं मैं सदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

समयसार शुद्ध आत्मा, चिच्चैतन्य प्रधान।
श्री जिनवर प्रतिभा अमल, कुसुमांजलि कर मान।।1।।

इति मानुषोत्तरनगस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–अडिल्ल छंद–

मनुजोत्तर नग ऊपर उत्तर जानिये।
जिनवर आलय सौख्यालय पहिचानिये।।
नव क्षायिक लब्धी, के हेतू मैं जजूँ।
अष्टकर्म नग चूर, भक्ति से नित भजूँ।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

सौम्य कलागुणपूर्ण जिन, वीतराग छविमान।
तुम गुण वर्णन शक्ति नहिं, फिर भी गाऊँ गान।।1।।

शम्भु छंद (चाल–श्रीपति जिनवर......)

जय जय मनुजोत्तर नग जग में, जिस परे मनुष नहिं जा सकते।
जय जय उसके जिन चैत्यालय, जिसको सुर नर वंदन करते।।
इस पे बाईस सुकूट कहे, चउ दिश में त्रय त्रय माने हैं।
आग्नेय और ईशान विदिश में, दो दो ही सरधाने हैं।।1।।

वायव्य और नैऋत्य विदिश में, एक एक ही तुम जानो।
इन अठरा में चउ सिद्धकूट मिल करके बाइस तुम मानो।।
उत्तर दिश के श्री सिद्धकूट, मंदिर की पूजा करते हैं।
चारों दिश के जिनमंदिर की, अर्चा कर पातक हरते हैं।।2।।

कूटों के तल में शिखरों पर, चारों तरफी वनखंड कहे।
वेदी तोरण मणि द्वारों से, जो अतिशय सुंदर रम्य कहें।।
अठरा कूटों के सुरगृह में, जिनमंदिर शाश्वत माने हैं।
जो व्यंतरवासी देवों के, जिनगृह कहलाये जाते हैं।।3।।

चारों दिश में जिनमंदिर जो, श्री सिद्धकूट पे माने हैं।
निषधाचल सम वे जिनमंदिर, उनकी यह पूजा ठाने हैं।।
जिनगृह में मानस्तंभ कहे, जो मानगलित कर देते हैं।
जो दर्शन वंदन करते हैं, उनको सम्यक् निधि देते हैं।।4।।

रत्नों से बनी ध्वजायें हैं, जो पवन झकोरे हिलती हैं।
मणि कनक कुसुम की मालायें, वे चारों तरफ लटकती हैं।।
मंगलघट पूर्ण कलश शोभें, धूपों के घट महकाते हैं।
वसु मंगल द्रव्य सु इक सौ अठ, इक सौ अठ शोभा लाते हैं।।5।।

वसु प्रातिहार्य शोभें अनुपम, भामंडल रत्नमयी कोरे।
त्रय छत्र फिरें चौंसठ चमरों को, यक्ष युगल मिलके ढोरें।।
रत्नों के सिंहासन ऊपर, पद्मासन जिनप्रतिमा राजें।
जिनके दर्शन वंदन करते भव भव के पाप तुरत भाजें।।6।।

तुम पूजन करते नाथ! अभी, मेरे मन एक हुई वांछा।
दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय, हो बोधी लाभ यही यांचा।।
नित सुगतिगमन होवे मेरा, सन्यास विधी से मरना हो।
जिनगुण संपति मिल जाय मुझे, फिर कभि न याचना करना हो।।7।।

–दोहा–

अकृत्रिम जिनरूप को, प्रणमूँ बारंबार।
'ज्ञानमती' निजरूप को तुरतहिं लेहुँ निहार।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.39)

नन्दीश्वरद्वीप पूर्वदिश जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छन्द–

वर द्वीप नन्दीश्वर सुअष्टम, तीन जग में मान्य है।
बावन जिनालय देवगण से, वंद्य अतिशयवान हैं।।
पूरब दिशा के जैनगृह, तेरह उन्हों की वंदना।
थापूँ यहां जिनबिम्ब को, नितप्रति करूँ जिन अर्चना।।1।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–चामर छंद–

स्वर्णभृंग में सुशीत गंगनीर लाइये।
शाश्वते जिनेन्द्रबिम्ब पाद में चढ़ाइये।।
आठवें सुद्वीप में त्रयोदशा जिनालया।
पूजते जिनेन्द्रबिम्ब सत्यबोध[1] पा लिया।।1।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तरंग ताप ज्वर विनाश हेतु गन्ध है।
आप पाद पूजते मिले निजात्म गंध है।।आठवें.।।2।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. सम्यग्ज्ञान ।

मोतियों के हारवत् सफेद धौत शालि हैं।
आपको चढ़ावते निजात्म सौख्य मालि हैं।।
आठवें सुद्वीप में त्रयोदशा जिनालया।
पूजते जिनेन्द्रबिम्ब सत्यबोध पा लिया।।3।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मालती गुलाब कुंद मोगरा चुनाइये।
आप पाद पूजते सुकीर्ति को बढ़ाइये।।आठवें.।।4।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मालपूप खज्जकादि पूरियां चढ़ाइये।
भूख व्याधि जिष्णु को अनंतशक्ति पाइये।।आठवें.।।5।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नादि काल से लगे अनंत मोहध्वांत को।
दीप से जिनेश पूज नाशिये कुध्वांत को।।आठवें.।।6।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप लाल चन्दनादि मिश्र अग्नि में जले।
आत्मा विशुद्ध होत कर्म भस्म हो चले।।आठवें.।।7।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

इक्षुदण्ड सेब दाडिमादि थाल में भरें।
मोक्ष संपदा मिले जिनेश अर्चना करें।।आठवें.।।8।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. जीतने वाले।

अष्ट द्रव्य ले अनर्घ्य मूर्तियों को पूजिये।
अष्ट कर्म नाश के त्रिलोकनाथ हूजिये।।
आठवें सुद्वीप में त्रयोदशा जिनालया।
पूजते जिनेन्द्र बिम्ब सत्यबोध पा लिया।।9।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपसंबंधिपूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

अमल वापिका नीर, जिनपद धारा मैं करूँ।
शांति करो जिनराज, मेरे को सबको सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्व सौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

तेरह जिनगृह पूर्वदिश, पूजूँ चित्त लगाय।
तेरह[1] विध चारित्र की, पूर्ति करो जिनराय।।1।।

इति श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्स्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–रोला छंद–

नंदीश्वर वरद्वीप, पूरब दिश मधि जानो।
अंजनगिरि गुण नाम, अतिशय रम्य बखानो।।
ईश निरंजन सिद्ध प्रभु का निलय कहा है।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, मन संताप दहा है।।1।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्अंजनगिरिजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पाँच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्तिरूप चरित्र।

अंजनगिरि के चार, दिश में चउ द्रह[1] जानो।
नीर भरे कमलादि, कुमुदों से पहचानो।।
पूरब नंदा वापि दधिमुख नग[2] जिनगेहा।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, मेटूँ मन संदेहा।।2।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नंदावापिकामध्यस्थितदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदवती द्रह माहिं, दधिमुख दधिसम सोहे।
तापे जिनवर धाम, सुर किन्नर मन मोहे।।
तिनमें श्री जिनबिंब, सुवरण रतनमयी हैं।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, मेटूँ मन संदेहा।।3।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नंदवतीवापिकामध्यस्थितदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदोत्तरा सुवापि, मधि दधिमुख नग भारी।
पश्चिम दिश में जान, लख योजन द्रह भारी।।
तापे श्रीजिनधाम, शाश्वत सिद्ध सही है।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, मेटूँ मन संदेहा।।4।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नंदोत्तरावापिकामध्यस्थितदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदीघोषा वापि, उत्तरदिश में जानो।
तामधि दधि मुख अद्रि, उस पे जिनगृह मानो।।
त्रिभुवनपति जिनबिंब, अनुपम रत्नमयी हैं।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, मेटूँ मन संदेहा।।5।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपेपूर्वदिक्नन्दिघोषावापिकामध्यस्थितदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. सरोवर । 2. पर्वत।

नरेन्द्र छन्द–(चाल–परम परंज्योति...)

नंदाद्रह ईशान कोण में रतिकर नग रक्ताभा।
ताके ऊपर शाश्वत अनुपम जिनमंदिर रत्नाभा।।
रतिपतिविजयी जिनप्रतिमा है, अकृत्रिम सुखदाता।
परमातम परकाशन हेतू, पूजूँ तिहुँ जगत्राता।।6।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नन्दावापीईशानकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदा द्रह आग्नेय दिशा में, रतिकर दुतिय कहा है।
तापे विश्ववंद्य जिनमंदिर, अतिशय रम्य कहा है।।रति.7।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नन्दावापीआग्नेयकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदवती द्रह अग्निकोण में, रतिकर तृतिय सुहाता।
तापे विश्ववंद्य जिनमंदिर, इन्द्रादिक मन भाता।।रति.।।8।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नन्दवतीवापीआग्नेयकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदवती वापी नैऋत में, रतिकर नग अति सोहे।
अविचल श्री जिनआलय तापे, सुरवनिता मन्मोहे।।रति.।।9।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नन्दवतीवापीनैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिमवापी नंदोत्तर है, नैऋत्य कोण सुहावे।
रतिकर नग पर रत्नखचित, श्री जिनमंदिर मन भावे।।रति.।।10।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नन्दोत्तरावापीनैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी नंदोत्तरा अपरदिश, ता वायव्य दिशा में।
रतिकर पीत अचल के ऊपर, जिनमंदिर अभिरामे।।

---

1. कामदेव विजेता।

रतिपतिविजयी जिनप्रतिमा, है अकृत्रिम सुखदाता।
परमातम परकाशन हेतु, पूजूँ तिहुँ जगत्राता।।11।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नन्दोत्तरावापिकावायव्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदीघोषा वापी विदिशा, वायुकोण में जानो।
रतिकर पर्वत पर अकृत्रिम, जिनमंदिर मन भानो।।रति.।।12।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नन्दिघोषावापीवायव्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रह नंदीघोषा ईशाने, रतिकर पीत सुहाता।
तापे रत्न खचित चैत्यालय, पूजत मन हरषाता।।रति.।।13।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्नन्दिघोषावापीईशानकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

अंजनगिरि दधिमुख अरु रतिकर, सब मिल तेरह माने।
पूरबदिश में इन तेरह पर, जिनगृह सिद्ध बखाने।।रति.।।14।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्संबंधित्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

दोहा

चिन्मूरति परमात्मा, चिदानंद चिद्रूप।
गाऊँ गुणमाला अबे, स्वल्पज्ञान अनुरूप।।1।।

(चाल–हे दीनबन्धु...)

जय आठवां जो द्वीप नाम नंदिश्वरा है।
जय बावनों जिनालयों से पुण्यधरा है।।

इक सौ तिरेसठे करोड़ लाख चुरासी।
विस्तार इतने योजनों से द्वीप विभासी।।2।।

पूरब दिशा के बीच में अंजनगिरी कहा।
जो इन्द्रनील मणिमयी रत्नों से बन रहा।।
चौरासी सहस योजनों विस्तृत व तुंग है।
जो सब जगत समान गोल अधिक रम्य है।।3।।

इस गिरि के चार दिश में चार वापियां कहीं।
जो एक लाख योजनी चौकोन जलमयी।।
पूर्वादि क्रम दिशा से नंदा नंदवती हैं।
नंदोत्तरा औ नंदिघोषा नामवती हैं।।4।।

प्रत्येक वापियों में कमल फूल रहे हैं।
प्रत्येक के चउदिश में भी उद्यान घने हैं।।
अशोक सप्तपत्र चंप आम्र वन कहे।
पूर्वादि दिशा क्रम से अधिक रम्य दिख रहे।।5।।

दधिमुख अचल इन वापियों के बीच में बने।
योजन हजार दश उत्तुंग, विस्तृते इतने।।
प्रत्येक वापियों के दोनों बाह्यकोण में।
रतिकरगिरी है शोभते जो आठ हैं इनमें।।6।।

योजन हजार एक चौड़े तुंग भी इतने।
सब स्वर्णवर्ण के कहे रतिकर गिरी जितने।।
दधिमुख दधी समान श्वेत वर्ण धरे हैं।
ये तेरहों ही अद्रि बहुत विभव भरे हैं।।7।।

इनमें जिनेन्द्र सद्म आदि अंत शून्य हैं।
जो सर्वरत्न से बने जिनबिंब पूर्ण हैं।।
उन मंदिरों में देव इन्द्रवृंद जा सकें।
वे नित्य ही जिनेन्द्र की पूजादि कर सकें।।8।।

आकाशगामी साधु मनुज खग न जा सकें।
वे सर्वदा परोक्ष में ही भक्ति कर सकें।।
मैं भी यहां परोक्ष में ही अर्चना करूँ।
जिनमूर्तियों की बार बार वंदना करूँ।।9।।

प्रभु आपके प्रसाद से भवसिंधु को तरूं।
मोहारिजीत शीघ्र ही जिनसम्पदा वरूँ।।
हे नाथ! बार मेरी अब न देर कीजिये।
अज्ञानमती विज्ञ में अब फेर दीजिये।।10।।

–दोहा–

नन्दीश्वर के पूर्व दिश, जिनमंदिर जिनदेव।
उनको पूजूँ भाव से 'ज्ञानमती' हित एव।।11।।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.40)

नन्दीश्वरद्वीप दक्षिणदिशजिनालय पूजा

–अथ स्थापना–अडिल्ल छन्द–

नंदीश्वर वर द्वीप आठवाँ जानिये।
तामें दक्षिण दिश तेरह नग मानिये।।
तिन तेरह पे अकृत्रिम जिनसद्म हैं।
पूजूँ मन वच काय हरे वसु कर्म हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–(चाल–पूजो पूजो श्रीअरिहंत देवा)–

क्षीरसागर का प्रासुक नीर, दुःख सागर का पाने तीर।
द्वीप नंदीश्वरे दक्षीण, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।।
पूजूँ पूजूँ जिनेश्वर बिंब, सेवा करते सदा सुर वृंद।
शीघ्र छूटे करम का फंद, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध कर्पूर चंदन लाऊं, राग वन्ही को शीघ्र बुझाऊँ।
द्वीप नंदीश्वरे दक्षीण, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।पूजूँ.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सोम रश्मी सदृश वर शाली, पुंज धरते बनूँ गुणशाली।
द्वीप नंदीश्वरे दक्षीण, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।।

पूजूँ पूजूँ जिनेश्वर बिंब, सेवा करते सदा सुर वृंद।
शीघ्र छूटे करम का फंद, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंद मंदार चंपक लाऊं, काम जेता प्रभू को चढ़ाऊँ।
द्वीप नंदीश्वरे दक्षीण, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।पूजूँ.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खीर श्रीखंड मोदक लाऊं, भूख बाधा सदा की मिटाऊँ।
द्वीप नंदीश्वरे दक्षीण, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।पूजूँ.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेम दीपक में कर्पूर ज्वालूँ, चित्त के मोहतम को नशा लूँ।
द्वीप नंदीश्वरे दक्षीण, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।पूजूँ.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप खेऊं अग्नि में दह के, गंध सौगंध्य दशदिश महके।
द्वीप नंदीश्वरे दक्षीण, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।पूजूँ.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बादाम काजू लाऊँ, मोक्षफल आश धरके चढ़ाऊँ।
द्वीप नंदीश्वरे दक्षीण, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।पूजूँ.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंधादि अर्घ सजाऊं, अष्टकर्मारिसैन्य भगाऊँ।
द्वीप नंदीश्वरे दक्षीण, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँ मैं।।
पूजूँ पूजूँ जिनेश्वर बिंब, सेवा करते सदा सुर वृंद।
शीघ्र छूटे करम का फंद, जिनेन्द्रधाम तेरह को नित्य जजूँमैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिक्त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

अमल बावड़ी नीर, जिनपद धारा मैं करूँ।
शांति करो जिनराज, मेरे को सबको सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्वसौख्य संपति बढ़े।।1।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

भव बाधा निरवार, अमृतगर्भित भक्ति से।
पूजूँ जिनपद सार, कुसुमांजलि अर्पण करूँ।।1।।

इति श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिक् स्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–कुसुमलता छंद–

नंदीश्वर के दक्षिण दिश में, मधि अंजनगिरि तुंग महान।
इंद्रनीलमणि सम छवि ऊपर, नित्य निरंजन का गृह मान।।
जल फल आदिक अर्घ्य सजाकर, नित प्रति पूज करूं गुणगान।
प्रभू आपकी कृपा दृष्टि से, पाऊँ सप्त[1] परमस्थान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अंजनगिरिजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. सज्जाति, सद्गार्हस्थ्य, पारिव्राज्य, सुरेन्द्रता, साम्राज्य, आर्हन्त्य, निर्वाण ये सात परम स्थान हैं।

अंजनगिरि के पूरब 'अरजा', वापी सजल कमल की खान।
ताके मधि 'दधिमुख', पर्वत पर, जिनमंदिर अविचल सुख दान।।
जल फल आदिक अर्घ्य सजाकर, नित प्रति पूज करूं गुणगान।
प्रभु आपकीकृपा दृष्टि से, पाऊँ सप्त परमस्थान।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिअरजावापिकामध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजन नग दक्षिण दिश वापी, 'विरजा' कही अमल जल खान।
मध्य अचल 'दधिमुख', के ऊपर, जिन चैत्यालय पावन जान।।जल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिविरजावापिकामध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजन नग पश्चिम दिश वापी, नाम 'अशोका' शुच अपहार।
बीच अचल 'दधिमुख' के ऊपर, शोक रहित जिनगृह सुखकार।।जल.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिअशोकावापिकामध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिश में अंजनगिरि के, वापि 'वीतशोका' अमलान।
'दधिमुख ' पर्वत शाश्वत उस पर, वीतशोक जिनमंदिर जान।।जल.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि वीतशोकावापिकामध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अरजाद्रह' ईशान कोण पर, 'रतिकर' पर्वत सुंदर जान।
अकृत्रिम जिन चैत्यालय में, रतनमयी जिनबिंब महान।।जल.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिअरजावापिकाईशानकोणे रतिकर-पर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अरजा' वापी अग्नि कोण में, 'रतिकर' दुतिय स्वर्ण द्युतिमान।
अकृत्रिम जिनमंदिर सुंदर, जिनप्रतिमा सब सौख्य निधान।।जल. ।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिअरजावापिकाआग्नेयकोणे रतिकर-पर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विरजावापी' आग्नेय पर, 'रतिकर' नग अद्भुत मणिमान।
सिद्धकूट जिननिलय अकृत्रिम, मणिमय जिनआकृति शिवदान।।
जल फल आदिक अर्घ्य सजाकर, नित प्रति पूज करूं गुणगान।
प्रभू आपकी कृपादृष्टि से, पाऊँ सप्त परमस्थान।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिविरजावापिकाआग्नेयकोणे रतिकर-पर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विरजावापी' नैऋत दिश में, 'रतिकर' पर्वत पीत सुहाय।
परमपुण्य जिनभवन अकृत्रिम, जिनवर छवि वरणीमहिं जाय।।जल.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिविरजावापिकानैऋत्यकोणे रतिकर-पर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम 'अशोकाद्रह' नैऋत में, 'रतिकर' पर्वत अतुल निधीश।
रत्नमयी जिनमहल अनूपम, जिनवरप्रतिमा त्रिभुवन ईश।।जल.।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिअशोकावापिकानैऋत्यकोणे रतिकर-पर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापि 'अशोका' वायुविदिश में, 'रतिकर' नग शोभे स्वर्णाभ।
परमपूत जिनवेश्म अमल है, श्रीजिनबिंब अतुल रत्नाभ।।जल.।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिअशोकावापिकावायव्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी सजल 'वीतशोका' के, वायुकोण 'रतिकर' रतिनाथ।
रतिपति विजयी जिनमंदिर में, रुचिकर जिनछवि त्रिभुवन नाथ।।जल.।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिवीतशोकावापिकावायव्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीतशोकद्रह में इशान पर, रतिकर स्वर्णवर्ण मणिकांत।
अकृत्रिम जिनआलय दुखहर, जिनवरबिंब सौम्यछवि शांत।।

1. लाल रंग का ।

जल फल आदिक अर्घ्य सजाकर, नित प्रति पूज करूं गुणगान।
प्रभू आपकी कृपादृष्टि से, पाऊँ सप्त परमस्थान।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशिवीतशोकावापिकाईशानकोणे रतिकर-पर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

अंजनगिरि इक दधिमुख नग चउ, रतिकर पर्वत आठ कहाय।
इन तेरह पर तेरह मंदिर, मन वच तन से पूजूँ आय।।
जल फल आदिक अर्घ्य सजाकर, नित प्रति पूज करूं गुणगान।
प्रभू आपकी कृपादृष्टि से, पाऊँ सप्त परमस्थान।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

पुण्यतीर्थ कल्याणतरु, शाश्वत श्री जिनधाम।
तेरह विध चर्या[1] क्रिया, हेतु जजूं वसु याम।।1।।

–स्रग्विणी छंद–

जै महाद्वीप अष्टम सुनंदीश्वरं,
जै दिशा याम्य[2] तेरह सु जिनमंदिरं।
मृत्युहर सिद्ध प्रतिमा नमोस्तू तुम्हें,
जो तुम्हें पूजते सिद्धि परणें उन्हें।।1।।

1.5 महाव्रत 5 समिति 3 गुप्ति ये 13 चर्या–चारित्र हैं और 5 परमेष्ठी नमस्कार, 6 आवश्यक, असही, निसही ये 13 क्रिया–करण हैं। 2. दक्षिण।

इन्द्र शत भक्त परिवार सह आवते,
जैन प्रतिमा जजें शीश को नावते।
साधुगण नित्य मन में तुम्हें ध्यावते,
अष्टमी[1] भूमि को शीघ्र ही पावते।।2।।

चिच्चमत्कार चैतन्य ज्योती धरें,
शुद्ध परमात्म आनंद अमृत भरें।
सिद्ध शाश्वत परम सौख्य पीयूष हैं,
जैन के बिंब सर्वात्म चिद्रूप हैं।।3।।

रत्न सिंहासनों पे विराजे वहां,
मोतियों से जड़े छत्र फिरते वहां।
कांति भामंडलों की अधिक भासती,
कोटि सूरजप्रभा देख के लाजती।।4।।

वीतरागी महाशांति मुद्रा प्रभो,
पूजकों का अशुभ राग हरती विभो।
पद्म आसन धरें पापहारी प्रभो,
नासिका अग्र पे दृष्टिधारी विभो।।5।।

स्वर्ण रत्नोंमयी मूर्तियां शाश्वती,
भव्य के दुःख संताप संहारती।
आज मैं भी यहां अर्चना कर रहा,
शुद्ध सम्यक्त्व का आज निर्झर बहा।।6।।

नाथ मांगूँ अबे आश को पूरिये,
'ज्ञानमति' पूर्णकर काल को चूरिये।
सिद्धि साम्राज्य को दे सुखी कीजिये,
आपके पास में ही बुला लीजिये।।7।।

1. सिद्धभूमि।

–दोहा–

तुम गुण धागा में किये, विविधवर्णमय फूल।
स्तुतिमाला कण्ठ में, धरे लहें भव कूल।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.41)

नन्दीश्वर द्वीपपश्चिमदिश जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–कुसुमलता छन्द–

नंदीश्वर के पश्चिम दिश में, तेरह जिन चैत्यालय जान।
अंजनगिरि दधिमुख रतिकर प्रे्ऋद्धि सिद्धि कर सौख्यनिधान।।
सिद्धरूप चिद्रूप चैत्य जिन, परमानन्द सुधारस दान।
आह्वानन स्थापन सन्निध करके पूजूँ जिन गुणखान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–सखी छंद–

रेवानदि को जल भरिये, त्रय धार करत मल हरिये।
नंदीश्वर अपर दिशी में, तेरह जिनगेह जजूँ मैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सित चंदन केशर घिसिये, अर्चत भवताप प्रणशिये।
नंदीश्वर अपर दिशी में, तेरह जिनगेह जजूँ मैं।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोतीसम तंदुल लाओ, जिन आगे पुंज चढ़ाओ।
नंदीश्वर अपर[1] दिशी में, तेरह जिनगेह जजूँ मैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरतरु से सुमन मंगावो, मदनारिप्रभू[2] को चढ़ावो।
नंदीश्वर अपर दिशी में, तेरह जिनगेह जजूँ मैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुविध पकवान बनाओ, भव भव की भूख मिटाओ।
नंदीश्वर अपर दिशी में, तेरह जिनगेह जजूँ मैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर जलाकर धरिये आरति कर अघ तम हरिये।
नंदीश्वर अपर दिशी में, तेरह जिनगेह जजूँ मैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूप अग्नि संग जारो, सब कर्म अरी को टारो।
नंदीश्वर अपर दिशी में, तेरह जिनगेह जजूँ मैं।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल सरस मधुर भर थाली, नहिं जाय मनोरथ खाली।
नंदीश्वर अपर दिशी में, तेरह जिनगेह जजूँ मैं।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. पश्चिम। 2. काम विजेता।

जल फल वसु अर्घ्य बनाओ, जिन आगे नित्य चढ़ावो।
नंदीश्वर अपर दिशी में, तेरह जिनगेह जजूँ मैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

अमल बावड़ी नीर, जिनपद धारा मैं करूँ।
शांति करो जिनराज, मेरे को सबको सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्वसौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

सर्वसिद्धिप्रद जानिये, रत्नमयी जिनधाम।
स्वयंसिद्ध जिनबिंब को, नित प्रति करूं प्रणाम।।1।।

इति श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशिस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–अडिल्ल छंद–

द्वीप आठवें पश्चिम दिश अंजनगिरी।
तापे जिनगृह अतुल सौख्य संपति भरी।।
स्वयंसिद्ध[1] जिनमूर्ति जजूँ नित चाव से।
भवसागर से तिरुं भक्ति की नाव से।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अंजनगिरिजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजयावापी' मध्य, दधीमुख जानिये।
दधिसम ऊपर शाश्वत जिनगृह मानिये।।स्वयंसिद्ध.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि विजयावापीमध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. अनादि अनंत।

अंजन दक्षिण 'वैजयंति' वापी कही।
बीच अचल दधिमुख पे जिनगृह सुखमही।।
स्वयंसिद्ध जिनमूर्ति जजूँ नित चाव से।
भवसागर से तिरुं भक्ति की नाव से।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि वैजयंतीवापिकामध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजन पश्चिम वापि 'जयंती' सोहती।
मधि दधिमुख पे जिनगृह से मन मोहती।।स्वयंसिद्ध.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशिजयंतीवापिकामध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि उत्तर, वापी 'अपराजिता'।
मधि दधिमुख पर्वत पे जिनगृह शासता।।स्वयंसिद्ध.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशिअपराजितावापीमध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजयावापी' रुद्रकोण[1] पे रतिकरा।
तापे अकृत्रिम जिनगृह भवि मनहरा।।स्वयंसिद्ध.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशिविजयावापीईशानकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजयाद्रह' आग्नेय कोण रतिकर गिरी।
परमश्रेष्ठ जिनमंदिर से अनुपम सिरी।।स्वयंसिद्ध.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशिविजयावापीआग्नेयकोणे रतिकर-पर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वैजयंतिवापी' के अग्नी[2] कोण में।
रतिकर गिरि पर श्रीजिनवर के वेश्म में।।स्वयंसिद्ध.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपेपश्चिमदिशिवैजयंतीवापीआग्नेयकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. ईशानकोण । 2. आग्नेय।

'वैजयंतिद्रह' के नैऋत में जानिये।
रतिकर नग में अकृत्रिम गृह मानिये।।
स्वयंसिद्ध जिनमूर्ति जजूँ नित चाव से।
भवसागर से तिरूं भक्ति की नाव से।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशिवैजयंतीवापीनैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वापि 'जयंती' नैऋत में रतिकर कहा।
परमपूत जिनमंदिर निज सुखकर कहा।।स्वयंसिद्ध.।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशिजयंतीवापीनैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वापि 'जयंती' वायु विदिश रतिकर महा।
सर्वश्रेष्ठ अकृत्रिम जिनगृह दुःख दहा।।स्वयंसिद्ध.।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशिजयंतीवापीवायव्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अपराजिता' सुवापी वायव कोण में।
रतिकर पर्वत पे जिनगृह अतिरम्य में।।स्वयंसिद्ध.।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशिअपराजितावापीवायव्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रह 'अपराजित' की विदिशा ईशान है।
तापे रतिकर स्वर्णवर्ण मणि शान है।।स्वयंसिद्ध.।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशिअपराजितावापीईशानकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य– **नंदीश्वर पश्चिम दिश अंजनगिरि कहा।**
दधिमुख रतिकर मिल तेरह पर्वत महा।।स्वयंसिद्ध.।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

नंदीश्वर वर द्वीप है, महातीर्थ सुखकार।
भवि आतम निर्मल करे, कर्मकीच अपसार[1]।।1।।

–शम्भु छन्द–

जय जय नंदीश्वर महाद्वीप, सौ इन्द्र वंदना करते हैं।
प्रत्येक वर्ष में तीन बार, आष्टान्हिक पर्व उचरते हैं।।
आषाढ़ सुकार्तिक फाल्गुन में, अष्टमि से पूर्णा तक शुक्ला।
चारों निकाय के देव मिलें, पूजन कर करते भव सुफला।।1।।

सौधर्म इन्द्र ऐरावत इभ[2] चढ़कर श्रीफल कर लाते हैं।
ईशान इन्द्र हाथी पर चढ़, गुच्छे सुपारि के लाते हैं।।
सानत्कुमार सुरपति मृगपति, पर चढ़ आम्रों के गुच्छे ले।
माहेन्द्र श्रेष्ठ घोड़े पर चढ़, केलों को अच्छे अच्छे ले।।2।।

ब्रह्मेन्द्र हंस पर चढ़ करके, केतकी पुष्प कर में लाते।
ब्रह्मोत्तर इन्द्र क्रौंच[3] खग पर, चढ़ कमल हाथ में ले आते।।
शुक्रेन्द्र चकोर पक्षि पर चढ़, सेवंती कुसुम लिये आते।
तोता चढ़ महाशुक्र सुरपति, फूलों की माला को लाते।।3।।

कोयल पर चढ़ सुरपति शतार, कर नीलकमल ले आते हैं।
अर सहस्रार सुरनाथ गरुड़, पर चढ़ अनार फल लाते हैं।।
आनत सुरपति विहगाधिप पर, चढ़ पनस फलों को लाते हैं।
प्राणत सुरपति तुंबरु फल ले, चढ़ पद्म विमान सु आते हैं।।4।।

पक्के गन्ने ले आरणेन्द्र, चढ़ कुमुद विमान वहाँ जाते।
कर धवल चंवर ले अच्युतेन्द्र, चढ़ मोर विमान वहाँ आते।।

1.दूर करके। 2. हाथी। 3. गरुड़ पक्षी।

ये चौदह[1] इंद्र कल्पवासी, अगणित वैभव संग लाते हैं।
निज निज परिवार सहित चलते, निज निज वाहन चढ़ आते हैं।।5।।

सुर आभियोग्य जाती के वे, इंद्रों के वाहन बनते हैं।
ऐरावत आदिक रूप बना, सुन्दर वाहन से सजते हैं।।
ये इंद्र अतुल जिनभक्तीवश कर में नरियल आदिक लाते।
जिनवर प्रतिमा के चरणों में, सुरतरु फल फूल चढ़ा जाते।।6।।

चारों निकाय के देव मिले, आठों दिन पूजा करते हैं।
रात्री दिन भेदरहित वहँ पे, सु अखंडित अर्चा करते हैं।।
नर वहां नहीं जा सकते हैं, इसलिये यहीं पर पूजें हैं।
वंदन पूजन सब ही परोक्ष, करके भी भव से छूटे हैं।।7।।

–दोहा–

मैं भी श्रद्धा भक्ति से, पूजूँ शक्ति न लेश।
केवल ''ज्ञानमती'' मिले, जहां न भव संक्लेश।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. तिलोयपण्णत्ति पृ.540 से 542 तक में यह प्रकरण है।

(पूजा नं.42)

नन्दीश्वरद्वीप उत्तरदिश जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीताछंद–

वर द्वीप नंदीश्वर सु उत्तर दिश त्रयोदश अचल हैं।
अंजन दधीमुख रतिकरों पे, श्री जिनेश्वर महल हैं।।
प्रत्येक में जिनबिंब इक सौ आठ तिनकी थापना।
बहुभक्ति से कर पूजहूं, होवे तुरत हित आपना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–रोला छंद–

क्षीरोदधि को नीर, कनक कलश में भरिये।
पूजत हो भव तीर, समतारस घट भरिये।।
अष्टम द्वीप उदीच[1] दिश तेरह जिनधामा।
जजत मिले गुण थान, तेरहँ पुन शिवरामा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज चंदन सार, तन का ताप हरे है।
जिन पूजत गुणकार, भव भव दाह हरे है।।अष्टमद्वीप.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. उत्तर। 2. सयोगकेवली नाम का तेरहवाँ गुणस्थान।

अक्षत अमल अखंड, पुंज धरूँ तुम आगे।
आतम सौख्य अखंड, मिले दुरित अरि भागे।।
अष्टम द्वीप उदीच दिश तेरह जिनधामा।
जजत मिले गुण थान, तेरह पुन शिवरामा।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

फुल्ल प्रफुल्लित माल, जिनपद कमल चढ़ाऊँ।
काम मल्ल शर[1] शल्य[2], दूर करूँ सुख पाऊँ।।अष्टम.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खुरमा गुझिया आदि, बहु पकवान चढ़ाऊँ।
निज आतम रस पाय, भव भव रोग नशाऊँ।।अष्टम.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचन दीप जलाय, करूँ आरती तेरी।
मोह तिमिर मिट जाय, मिटे जगत की फेरी।।अष्टम.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु वर धूप, खेऊँ अग्नि घटों में।
कर्म कालिमा दूर, होती बस मिनटों में।।अष्टमद्वीप. ।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता दाख बदाम, फल अंगूर चढ़ाऊँ।
सुफल महाफल पाय, विषयन नाहिं लुभाऊँ।।अष्टम.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. वाण । 2. पीड़ा।

वसुविध अर्घ्य मिलाय, गाय बजाय चढ़ाऊँ।
फल अनर्घ्य पद हेतु, तुम पद भक्ति बढ़ाऊँ।।
अष्टम द्वीप उदीच, दिश तेरह जिनधामा।
जजत मिले गुण थान, तेरह पुन शिवरामा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

अमल बावड़ी नीर, जिनपद धारा मैं करूँ।
शांति करो जिनराज, मेरे को सबको सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्वसौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य-सोरठा–

ज्ञानभानु परमेश, तुम अनन्तगुण के धनी।
मैं भी नाथ हमेश, अल्पबुद्धि फिर भी जजूं।।1।।

इति श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिक्स्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–दोहा–

उत्तरदिश इस द्वीप में अंजन गिरि नीलाभ।
पुण्यधाम जिनसद्म को, पूज मिले शिवलाभ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनगिरिजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजननग पूरबदिशी, 'रम्या' वापी स्वच्छ।
मधि दधिमुख गिरि जिनभवन, पूजत कर्म विपक्ष[1]।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रम्यावापीमध्यदधिमुखपर्वतजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. दूर होते हैं।

अंजन के दक्षिण दिशी, 'रमणीया' द्रह जान।
दधिमुख नग पर जिननिलय, पूजत हो निजथान।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रमणीयावापीमध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजन के पश्चिम दिशी, द्रह 'सुप्रभा' अनूप।
दधिमुख ऊपर जिनभवन, पूजत हो शिव भूप।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सुप्रभावापीमध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजननग उत्तर दिशी, 'सर्वतोभद्रा' वापि।
मधि दधिमुख पे जिनसदन, जजत न जन्म कदापि।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सर्वतोभद्रावापीमध्यदधिमुखपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्याद्रह' ईशान में, रतिकर नग स्वर्णाभ।
अनुपमनिधि जिनगेह को पूजत हो निष्पाप।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रम्यावापीईशानकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रम्याद्रह आग्नेय दिशि, रतिकर गिरि अमलान।
जिनमंदिर शाश्वत जजूँ मिले नवोनिधि आन।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रम्यावापीआग्नेयकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रमणीया द्रह अग्नि दिशि, रतिकर नग सिरताज।
उस पर अविचल जैनगृह, जजत मोक्ष साम्राज।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रमणीयावापीआग्नेयकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रमणीया द्रह नैऋते, रतिकर नग सुखदान।
शाश्वत जिनमंदिर जजूँ, मिले स्वपर विज्ञान।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रमणीयावापीनैऋत्यकोणे रतिकर-पर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापि सुप्रभा नैऋते, रतिकर पर्वत सिद्ध।
मणिमय जिनमंदिर जजूँ, पाऊँ ऋद्धि समृद्ध।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सुप्रभावापीनैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रह सुप्रभा सुवायु दिशि, रतिकर नग रतिकार।
तापे जिनगृह नित जजूँ, मिले स्वपर अविकार।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सुप्रभावापीवायव्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापि सर्वतोभद्रिका, रतिकर वायव कोण।
जिनमंदिर शाश्वत जजूँ, मिले भवोदधि कोण।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सर्वतोभद्रावापीवायव्यकोणे रतिकर-पर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापि सर्वतोभद्रिका, रतिकर दिशि ईशान।
तापे जिनगृह पूजते, हो अनन्त श्रीमान् ।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सर्वतोभद्रावापीईशानकोणे रतिकर-पर्वतजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-गीता छन्द–

अष्टम नंदीश्वर द्वीप में, उत्तरदिशी में अचल हैं।
अंजन दधीमुख रतिकरों पे, सासते जिनमहल हैं।।

पूर्णार्घ्य ले उनमें विराजित, जैनबिंबों को जजूं।
गुणथान तेरह पूर्ण कर, आर्हंत्य लक्ष्मी को भजूं।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

*जाप्य–*ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।

जयमाला

त्रिभंगी छंद–(चाल-क्षीरोदधि गंगा....)

जय जय नंदीश्वर, द्वीप महीश्वर, बावन भूधर नित्य जजूँ।
जय जय उत्तरदिश, तेरह जिनगृह, शाश्वत जिनकृति नित्य भजूं।।
जय मणिसिंहासन, धर पद्मासन, तुम जिनशासन हितकारी।
जय तुम गुणमाला, भक्तिरसाला, नित प्रति गाऊँ सुखकारी।।1।।

–रोला छंद–

जय जय अष्टम द्वीप, उत्तर दिश में जानो।
इक सौ त्रेसठ कोटि, लाख चुरासी मानो।।
इतने योजन मान, विस्तृत चार दिशी हैं।
तेरह तेरह अद्रि मानें चार दिशी हैं।।1।।

गोलाकार महान, वेदी उपवन सोहें।
सुर नर किन्नर आन, जिनगुण से मन मोहें।।
ज्योतिष व्यंतर देव, भावन सुरगण आवें।
विविध कुसुम की माल, नाना फल भी लावें।।2।।

कल्पवासि[1] सुर आय, पूरब दिश जिन पूजें।
भावनसुर दक्षीण, दिश में जिनवर पूजें।।
पश्चिम में सुरवृन्द, व्यंतर यजन करे हैं।
उत्तर में सुरवृन्द, ज्योतिष भक्ति भरे हैं।।3।।

1. तिलोयपण्णपत्ती पृ. 544 के आधार से।

पौर्वान्हिक दो प्रहर, दो प्रहरी अपराण्हे।
पूर्वरात्रि दो प्रहर, अपररात्रि दो जान्हे।।
क्रम से चउविध देव, पूजन नित्य करे हैं।
पुनः प्रदक्षिण रूप, दिश परिवर्त करे हैं।।4।।

इस विध मास असाढ़, कार्तिक फाल्गुन जानो।
शुक्ल अष्टमी लेय, पूनम तक विधि जानो।।
असंख्यात सुरवृंद, अतिशय भक्ति करे हैं।
आठ दिनों हि अखंड पूजत पुण्य भरे हैं।।5।।

सुवरण कलश सुगंध, नीर प्रपूर्ण भरे हैं।
जिनप्रतिमा अभिषेक करते पाप हरे हैं।।
कुंकुम चंदन गंध, मिल कर्पूर सुगंधी।
कालागरु अर अन्य बहु विध वस्तु सुगंधी।।6।।

गंध बनाकर इन्द्र, मूर्ति विलेप करे हैं।
चंदन से जिन चर्च कर्मकलंक हरे हैं।।
तंदुल सुम पकवान, दीप सुधूप फलों से।
जिनबिंबों को पूज, छुटते कर्म मलों से।।7।।

चंदवा चंवर विचित्र, इनसे सदन सजावें।
ढोरत चंवर सफेद, भेरी आदि बजावें।।
सुर अप्सरियां नृत्य, करतीं जिन गुण गावें।
जिनवर चरित विशेष, नाटक कर हरषावें।।8।।

इसविध बहुत प्रकार, भक्ति प्रगाढ़ करे हैं।
समकित निधि को पाय, सिंधु अथाह तरे हैं।।
मैं भी प्रभु तुम पास, आय यही अब मांगूँ।
रत्नत्रय निधि पाय, विषय कषाय कु त्यागूं।।9।।

और नहीं कछु आश, नाथ! रही अब मेरी।
ऐसा करो उपाय, मिटे तिहूँजग फेरी।।

तम अज्ञान हटाय, 'ज्ञानमती' कर पूरी।
नाथ! सुनो अब शीघ्र, ना हो मांग अपूरी।।10।।

–दोहा–

नंदीश्वर वर द्वीप में, बावन जिनवर धाम।
पुनः पुनः शिर नायके, उनको नित्य प्रणाम।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि त्रयोदशजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.43)

कुण्डलगिरि पूर्वदिक् जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–अडिल्ल छन्द–

द्वीप ग्यारवां कुंडल नाम प्रमानिये।
ताके मधि में कुंडल पर्वत जानिये।।
वलयाकृति[1] गिरि पे चउदिश जिनधाम हैं।
पूरब दिशि जिनगेह जजूँ इह ठाम हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह!अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह!अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–(चाल-पूजो पूजो श्री.)–

सिंधु स्रोतस्विनी[2] का जल है, जो स्वातम का हरता मल है।
पूजते ही मिले मोक्षफल है, जिनेंद्र पाद वंदन करूं मैं नित ही।।
आवो पूजें जिनेश्वर प्रतिमा, जाकी अद्भुत अकथ है महिमा।
कुंडलाचल जिनालय प्राक्मा[3], जिनेंद्रदेव वंदन करूं मैं नित ही।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध कर्पूर केशर मेला, सौगंधित सुमिश्रित एला।
ताप संताप हरत अकेला, जिनेंद्रपाद वंदन करूँ मैं नित ही।।

1.चुड़ी के आकार। 2. नदी। 3. पूर्व दिशा।

आवो पूजें जिनेश्वर प्रतिमा, जाकी अद्भुत अकथ है महिमा।
कुंडलाचल जिनालय प्राक्मा, जिनेंद्रदेव वंदन करूं मैं नित ही।2।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हार मोती सदृश तंदुल हैं, पुंज धारे हृदय निर्मल है।
लाभ होता सुगुण उज्ज्वल है, जिनेंद्र पाद वंदन करूँ मैं नितही।।
आवो पूजें....।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंद मंदार सुमनस माला, काम मल्ल निमूल[1] कर डाला।
आत्म संपद गुणों की माला, जिनेन्द्र पाद वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो पूजें....।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मुग्द[2] लाडू इमरती भरके, पूजते भूख रोगादि हरके।
आत्मपीयूष अनुभव करके, जिनेन्द्र पाद वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो पूजें....।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेम दीपक शिखा उज्ज्वल है, आरती ये हरे मोह मल है।
होय आत्मा अपूर्व विमल है,जिनेन्द्र पाद वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो पूजें....।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप खेऊँ सुरभि दशगंधी, धूम्र फैले दशों दिश गंधी।
होय कर्म अरी शत खंडी,जिनेन्द्र पाद वंदन करूँ मैं नित ही।।

1. नाश 2. मूँग।

आवो पूजें जिनेश्वर प्रतिमा, जाकी अद्भुत अकथ है महिमा।
कुंडलाचल जिनालय प्राक्मा, जिनेंद्रदेव वंदन करूं मैं नित ही।7।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्र अंगूर दाडिम फल हैं, जो फल दें उत्तम सुफल हैं।
तीन रत्नों की संपत्ति फल हैं,जिनेन्द्र पाद वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो पूजें....।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंधादि द्रव्य मिलाके, पूर्ण सौख्यादि होवे चढ़ाके।
अष्ट कर्मारि बंधन हटाके, जिनेन्द्र पाद वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो पूजें....।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

शाश्वत श्री जिनबिम्ब, जलधारा से पूजते।
शांति करो जिनराज, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते सर्वदिक्।
पुष्पांजलि तुम अर्घ्य, भव भव के दुख को हरूं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य-सोरठा–

स्वयंसिद्ध जिनबिम्ब, सर्वसिद्धि में निमित हैं।
नमूँ नमूँ नत शीश, कुसुमांजलि कर भक्ति से ।।1।।

इति श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पूर्वदिशि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छन्द–

कुंडलगिरि पर पूर्वदिशा में पांच कूट मनहारी।
अभ्यंतर के सिद्धकूट पर, जिनमंदिर सुखकारी।।

जल गंधादिक अर्घ्य मिलाकर, नितप्रति यजन करूं मैं।
ग्यारह प्रतिमा धर ऊपर चढ़, संयम पूर्ण करूँ मैं।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–*ॐ **ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

दोहा–(चाल–परं परंज्योति.....)

जय जय कुंडलगिरि उपरि, पूरब दिश जिनधाम।
जय जय जिनवर बिंब हैं, त्रिभुवनशिखर ललाम।।

–नरेन्द्र छंद–

कुंडलद्वीप कहा ग्यारहवां, कुंडलनग मधि राखे।
एक खरब अठ अरब पचासी, कोटि छियत्तर लाखे।।
इतने योजन विस्तृत द्वीपे, बीचोंबीच गिरी है।
वलयाकार[1] हजार पचत्तर, योजन तुंगगिरी है।।1।।
तल में विस्तृत दश हजार दो-सौ बिस योजन गाया।
मध्य सुव्यास बहत्तर सौ औ तीस प्रमाण बताया।।
ऊपर चौड़ा ब्यालिस सौ-चालिस योजन तुम जानो।
पर्वत ऊपर चारों दिश में, बीस कूट सरधानो।।2।।
दिशा दिशा में पांच कूट हैं, चउ चउ पर सुर गेहा।
अभ्यंतर के सिद्धकूट पर, अकृत्रिम जिनगेहा।।
कुंडल पर्वत हेम वर्णमय, शाश्वत तीर्थ कहाता।
देव देवियां अप्सरियों के, इन्द्रों के मन भाता।।3।।
पूर्वदिशा के सिद्धकूट में, जिनवरबिंब विराजें।
मैं परोक्ष ही वंदन करता कर्म अरी डर भाजें।।

1. चूड़ी के आकार।

जिनवंदन से आत्म विशुद्धी, हो परमात्म प्रकासे।
जिनवर प्रवचन हृदय महल में , समयसारमय भासे।।4।।

प्रभू यही अब मेरी इच्छा, रत्नत्रय निधि पाऊँ।
नित व्यवहार रत्नत्रय बल से, निश्चय शिवपथ पाऊँ।।
वीतराग निश्चयरत्नत्रय, निर्विकल्प निज आत्मा।
परमसमाधी में तन्मय हो, बनूँ सिद्ध परमात्मा।।5।।

यही कामना पूरी करिये, कल्पवृक्ष सम दाता।
त्रिभुवन की संपत देने में, तुम हो जग विख्याता।।
प्रभु अज्ञानमती हर मेरी, सम्यग्ज्ञान प्रकासो।
पुनरपि केवल 'ज्ञानमती' कर, ज्ञानभानु घट भासो।।6।।

–दोहा–

गणपति नरपति सुरपती, खगपति रूचि मन धार।
त्रिभुवनपति गुणगणमणी, तुम गुण गावत सार।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.44)

कुण्डलगिरि दक्षिणदिक् जिनालय पूजा

–गीता छन्द–

कुंडलगिरी पे दक्षिणी, दिश जैनमंदिर जानिये।
मणि स्वर्ण रत्नों के बने, परकोट सुन्दर मानिये।।
मणिरत्न मानस्तंभ अनुपम, विविध रचना शोभती।
थापूँ यहां जिनबिंब निरुपम, पाप पंकिल धोवती।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिउपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिउपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह!अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलगिरिउपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह!अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–चामर छन्द–

(चाल-पार्श्वनाथ देव सेव.....)

वार्धिफेन हार के समान नीर लाइये।
शाश्वते जिनेन्द्रदेव पाद में चढ़ाइये।।
कुंडलाद्रि दक्षिणी दिशी जिनेन्द्रसद्म जो।
पूजते सु होत मुक्तिवल्लभा के कंत सो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णवर्ण पीत गंध देह दाह को हरे।
आप चर्ण पूजते अनंत दाह को हरे।।कुंडलाद्रि. 2।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र चन्द्रिका समान श्वेत शालि लाइये।
पुंज को चढ़ाय स्वात्म सौख्य राशि पाइये।।
कुंडलाद्रि दक्षिणी दिशी जिनेन्द्रसद्म जो।
पूजते सु होत मुक्तिवल्लभा के कंत सो।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मालती जुही गुलाब केतकी चुनाइये।
काम मल्ल शल्य दूर आप को चढ़ाइये।।कुंडलाद्रि.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरिका अपूप[1] लड्डुकादि थाल में भरे।
क्षुत् पिपास[2] व्याधिदूर आप अर्चना करें।।कुंडलाद्रि.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्पि[3] वर्ति युक्त दीप कज्जली प्रसूयते[4] ।
आप पूजते निरंजनात्म सौख्य सूयते।।कुंडलाद्रि.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

देवदारु रक्त चंदनादि मिश्र धूप ले।
अग्नि में सुखेय आत्मा विशुद्ध हो भले।।कुंडलाद्रि.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नालिकेर आम्र पूग द्राक्ष चिरभटादि[5] ले।
आपको चढ़ावते हि सिद्धिवल्लभा मिले।।कुंडलाद्रि.।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. पुआ। 2.भूख प्यास। 3.घी। 4.जन्म देता है। 5. ककड़ी।।

अष्ट द्रव्य पंचरत्न को मिलाय अर्घ्य ले।
मैं अनर्घ्य सौख्य हेतु चर्ण पूजहूँ भले।।
कुंडलाद्रि दक्षिणी दिशी जिनेन्द्रसद्म जो।
पूजते सु होत मुक्तिवल्लभा के कंत सो।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

शाश्वत श्रीजिनबिंब, जलधारा से पूजते।
शांति करो जिनराज, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते सर्वदिक्।
पुष्पांजलि तुम अर्प्य, भव भव के दुख को हरूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

परम शुद्ध परमात्मा, आत्म सुधारस लीन।
मेरा मन पावन करो, राग द्वेष कर हीन।।1।।

इति श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्स्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–कुसुमलता छन्द–

तुंग पचहत्तर सहस सुयोजन, कुंडल नग कुंडल सम गोल।
दक्षिण दिश में पांच कूट हैं, अभ्यंतर जिनगृह अनमोल।।
भक्ति भाव से वंदें पूजें, सब प्रकार के देव महान।
हम भी आज यहीं पर पूजें, पाप ताप की होवे हान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

गुणरत्नाकर आप हैं, अप्रमेय द्युतिमान।
किंचित् गुण की मालिका, धरूँ कंठ में आन।।1।।

(चाल–हे दीनबन्धु.....)

जय जय त्रिकाल शुद्ध सिद्ध बिंब अनन्ता।
जय जय त्रिकाल भक्ति करूँ कर्म के हंता।।
हे नाथ! तुम प्रसाद से निधियां मुझे मिलीं।
तुम पाय आज चित्त की कलियां सभी खिलीं।।1।।

बस आज कल्पवृक्ष मुझे धर्म का मिला।
इसके प्रताप मोहराज को भी दूँ हिला।।
उत्तम क्षमा ये धर्म सर्व द्वेष हरे हैं।
सब प्राणियों के साथ मित्र भाव धरे हैं।।2।।

जो मार्दव उत्तम समस्त गर्व मिटाता।
ये धर्म विनय सबको मुक्तिद्वार दिखाता।।
उत्तम धरम आर्जव त्रियोग सरल बनावे।
कौटिल्य त्याग नर सदा ऊरधगती पावे।।3।।

वर सत्यधर्म लोक के सत्कार दिलावे।
बस झूठ वचन जगत में चिरकाल भ्रमावे।।
आतम पवित्र करन हेतु शौचधर्म है।
ये लोभ सर्वदा ही सर्वपाप मर्म है।।4।।

मैं कब प्रभो संयम निधी सर्वस्व को पाऊँ।
संसार भ्रमण मेट के अर्हंत हो जाऊँ।।
उत्तम तपश्चरण सुधर्म कर्म जलावे।
हे नाथ! कठिन तप को आप भक्त ही पावें।।5।।

ये त्याग धर्म श्रेष्ठ अभयदान दिलावे।
हे नाथ! तेरे भक्त ही इस धर्म को पावें।।
उत्तम सु आकिंचन्य धर्म मोह मिटाता।
इस धर्म से त्रैलोक्यपती शीघ्र हो जाता।।6।।

उत्तम सुधर्म ब्रह्मचर्य स्वात्मलीन हो।
पाते हैं परम ब्रह्मरूप, निजाधीन हो।।
जो आपके हैं भक्त वे ही धर्म धरे हैं।
संसार विषम सिंधु से भी शीघ्र तरे हैं।।7।।

हे नाथ! आज प्रार्थना को पूर्ण कीजिये।
फल धर्म कल्पवृक्ष से परिपूर्ण दीजिये।।
भक्ती प्रभो! चिंतामणी, सुकामधेनु है।
मुझ ''ज्ञानमती'' के लिए सर्वार्थ देन है।।8।।

–दोहा–

नाथ! तुम्हारी भक्ति ही, सब कुछ देन समर्थ।
इसीलिये दश धर्म मुझ, पूर्ण करो परमार्थ।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.45)

कुण्डलगिरि पश्चिमदिक् जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–चौबोल छन्द–

(चाल–मेरी भावना)

द्वीप ग्यारवें मध्य कनकमय, कुंडल पर्वत शोभ रहा ।
तुंग शिखर पर पश्चिम दिश में , जिनमंदिर मन मोह रहा।।
पंच परावर्तन से विरहित, श्रीजिन की प्रतिमा नित हैं।
आह्वानन स्थापन सन्निधकरण विधी से पूजत हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह!अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–(चाल-नन्दीश्वर पूजा)–

जल वासित कमल पराग, सुरभित स्वच्छ लिया।
भव भव की तृषा निवार, प्रभुपद धार किया।।
कुण्डलगिरि पर जिनगेह, पश्चिम दिश भारी।
निश्चय सम्यक् निधि हेतु पूजूँ गुणकारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हिमरश्मि सदृश अतिशीत, चन्दन को कहिए।
जिनपद पूजें धर प्रीत, शीतलगुण लहिये।।

कुण्डलगिरि पर जिनगेह, पश्चिम दिश भारी।
निश्चय सम्यक् निधि हेतु पूजूँ गुणकारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हिमकण सम उज्ज्वल शालि, पुंज रचा दीना।
अव्यय अक्षत सुख हेतु, प्रभु अर्चा कीना।।कुंडल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

नीलोत्पल[1] कमल गुलाब, सुमनों की माला।
भवशरविजयी जिनराज, पूजत भव टाला।।कुंडल.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नानाविध घृत पकवान, पायस गुणकारी।
तुम पूजत पुण्य पियूष, मिलता भवहारी।।कुंडल.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिदीप कपूर प्रजाल, ज्योती तिमिर हरे।
दीपक की पूजा पूर्ण, ज्ञान प्रभात करे।।कुंडल.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध सुगंधित धूप, अग्नी पात्र जले।
जिन सन्मुख अघरिपु सैन्य भय से दूर टले।।कुंडल.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता किसमिस अखरोट, सेब अनार लिये।
फल से पदपंकज पूज, सिद्धी सर्व लिये।।

1. नील कमल।

कुण्डलगिरि पर जिनगेह, पश्चिम दिश भारी।
निश्चय सम्यक् निधि हेतु, पूजूँ गुणकारी।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु द्रव्य सुरत्न मिलाय, अर्घ्यं चढ़ाऊँ मैं।
अति हरष भाव उर लाय, आप रिझाऊँ मैं।।
कुण्डलगिरि पर जिनगेह, पश्चिम दिश भारी।
निश्चय सम्यक् निधि हेतु पूजूँ गुणकारी।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

शाश्वत श्री जिनबिम्ब, जलधारा से पूजते।
शांति करो जिनराज, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते सर्वदिक्।
पुष्पांजलि तुम अर्घ्य, भव भव के दुख को हरूं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्यं

–दोहा–

पश्चिम आशा[1] जिनभवन, कुंडलनग विलसंत।
पुष्पांजलि कर पूजहूं, हरो जगत परपंच।।1।।

इति श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्स्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–कुसुमलता छन्द–

अकृत्रिम कुंडल भूधर पर, पश्चिमदिश जिनगेह प्रधान।
पांच कूट में सिद्धकूट इक, अभ्यंतर में अतिशयवान।।

1. दिशा।

मणिमय रतनमयी जिनप्रतिमा, इक सौ आठ प्रतिम गुणखान।
जल फल अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ, निज आतम होवे अमलान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

जय जय त्रिभुवनगुरु प्रभो! जय जय सिद्धस्वरूप।
जय जयमाला तुम कहूँ, हरो अमंगल रूप।।1।।

रोला छंद–(चाल–अहो जगत गुरूदेव.....)

कुंडल पर्वत अग्र, पश्चिम दिश में जानो।
जिनमंदिर अभिराम, अद्भुत रम्य बखानो।।
गर्भालय के माहिं, जिनप्रतिमा अतिभासे।
इक सौ आठ प्रमाण, भवि मनकमल विकासें।।1।।

सब प्रतिमा के पास, मंगल द्रव्य कहे हैं।
इक सौ आठ प्रमाण, सबके पृथक् रहे हैं।।
सुर किन्नरगण आय, भक्ति भरे गुण गाते।
कर्मकुलाचल चूर, करने को नित आते।।2।।

प्रभु तुम नाम पवित्र, मन का मैल हरे है।
क्रोध कषाय विकार, मद मायादि हरे है।।
प्रभु तुम गुणमणिमाल, कंठ धरे जो कोई।
ताका सुयश पवित्र, त्रिभुवन व्यापत होई।।3।।

चार ज्ञानधर साधु, गणधर मुनिगण सारे।
नितप्रति तुम गुणगान, करत करत भी हारे।।

फणपति[1] जीभ सहस्र, करके काल असंख्ये।
फिर भी थक थक जांय, तुम गुण कीर्ति भणंते।।4।।
लवणोदधि को लाय, स्याही पात्र बनावें।
तीनभुवन को पूर्ण, कागज कर सुख पावें।।
स्वर्णलेखनी लेय, प्रभु तुम गुण जु लिखावें।
शारद[2] मां भी आय, फिर भी पार न पावें।।5।।
तुम अनंतगुण राशि, मेरी शक्ति नहीं है।
फिर भी हूँ वाचाल, प्रेरे भक्ति सही है।।
तुम हो परम कृपालु, मुझ पर करुणा कीजे।
''ज्ञानमती'' कर पूर्ण, जिनगुणसंपद दीजे।।6।।

–घत्ता–

जय जय भगवंता, सिद्ध महंता, कलिमल हंता, सुकृत करें।
जय ''ज्ञानमती'' कर शिवलक्ष्मी धर, भविजन निजसुख तुरत भरें।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक् सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. धरणेन्द्र। 2. सरस्वती।

(पूजा नं.46)

कुण्डलगिरि उत्तरदिक् जिनालय पूजा

–अथस्थापना–अडिल्ल छन्द–

कुंडलगिरि पर, उत्तर दिश जिन सद्म है।
पांच कूट के अभ्यंतर, अति रम्य है।।
कनक रतनमय जिनप्रतिमा को नित जजूँ।
कर्म कुलाचल चूर्ण हेतु पूजन रचूं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–सोरठा–

रेवानदि को नीर, धार देत कलिमल हरे।
कुंडलनग कनकाभ[1], उत्तरदिश जिनगृह जजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन केशर पीत, पूजत मन शीतल करे।
कुंडलनग कनकाभ, उत्तरदिश जिनगृह जजूँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. स्वर्णमयी।

अक्षत उज्ज्वल धोय, पूजत भव पीड़ा हरे।।
कुंडलनग कनकाभ, उत्तरदिश जिनगृह जजूँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला कुंद सरोज पूजत भव पीड़ा हरे।
कुंडलनग कनकाभ, उत्तरदिश जिनगृह जजूँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लाडू बरफी मिष्ट, क्षुधाव्याधि हर पूजते।
कुंडलनग कनकाभ, उत्तरदिश जिनगृह जजूँ।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक ज्योति अमंद, पूजत भ्रम तम को हरे।
कुंडलनग कनकाभ, उत्तरदिश जिनगृह जजूँ।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप खेऊँ रुचि धार, कर्म भस्म कर शिव करे।
कुंडलनग कनकाभ, उत्तरदिश जिनगृह जजूँ।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल अंगूर अनार, जजत रिद्धि सिद्धी करे।
कुंडलनग कनकाभ, उत्तरदिश जिनगृह जजूँ।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु विधि अर्घ्य सजाय, पूजत अनुपम फल मिले।
कुंडलनग कनकाभ, उत्तरदिश जिनगृह जजूँ।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

शाश्वत श्री जिनबिंब, जलधारा से पूजते।
शांति करो जिनराज, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते सर्वदिक्।
पुष्पांजलि तुम अर्प्य, भव भव के दुख को हरूं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथप्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

चिन्मय चिंतामणि प्रभू, वांछित फलदातार।
पुष्पांजलि कर पूजते, छुटे सकल संसार।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–कुसुमलता छन्द–

महिमावंत अचल कुंडल है, उत्तरदिश जिनमंदिर सिद्ध।
स्वयंसिद्ध जिनप्रतिमा अनुपम, करती सकल मनोरथ सिद्ध।।
जल गंधादिक द्रव्य सजाकर, पूजन करुं हरष उर धार।
नव निधि ऋद्धि समृद्धी देतीं, करतीं नितप्रति मंगलसार।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

त्रिभुवन के स्वामी तुम्हीं, परमज्योति भगवान।
गाऊँ तुम जयमालिका, करो विघ्न की हान।।1।।

–नरेन्द्र छन्द–

शुद्ध बुद्ध सर्वज्ञ निरंजन सिद्ध प्रसिद्ध महात्मा।
चिच्चैतन्य चमत्कारी प्रभु, स्वयंसिद्ध परमात्मा।।
वीतराग विज्ञान पुंज हो, चिन्मय ज्योति स्वरूपी।
अमल विमल निर्मल तुम ही हो, कर्म शून्य चिद्रूपी।।1।।

मिथ्यात्वोदय के वश जग में, काल अनादि गमायो।
मिथ्या देव शास्त्र गुरुओं में, श्रद्धा कर दुख पायो।।
जैसे तैसे अति दुर्लभ ये, मिथ्या कर्म छुटा है।
काललब्धि वश सम्यक् पाकर, ज्ञान सूर्य प्रकटा है।।2।।

अब प्रभु ऐसी करुणा करिये, समकित निधिहिं खोऊँ।
स्वपर भेदविज्ञान ज्योति से, मिथ्यामल को धोऊं।।
कर्म अनंतानूबंधी जो, क्रोध लोभ मद माया।
इनका उदय हुए समकित में, आसादन[1] है गाया।।3।।

तुम प्रसाद से सासादन, गुणथान कभी ना पाऊँ।
मिश्र भाव से प्रभु तीजा, गुणथान न हो यह भाऊँ।।
समकित निधि मुझ कभी न छूटे, यही भावना भाऊँ।
भगवन अन्तिम क्षायिक सम्यक्, पाकर कर्म नशाऊँ।।4।।

अणुव्रत गुणव्रत शिक्षाव्रत धर, देशव्रती बन जाऊँ।
ग्यारह प्रतिमा के व्रत निर्मल, धर मलदोष हटाऊँ।।
कब ऐसा दिन आवे हे जिन! संयम पूर्ण करूँ मैं।
पंचमहाव्रत गुप्ति समिति धर, चारित पूर्ण करूँ मैं।।5।।

पुत्र मित्र पत्नी धन परिजन, ये प्रत्यक्ष पृथक् हैं।
तन आतम मिल एक दीखते, वे भी पृथक् पृथक् हैं।।
तन से निर्मल होकर धन जन, त्याग बनूं वैरागी।
निज आतम से ममता करके, होऊँ निज अनुरागी।।6।।

1. विराधना।

सब संकल्प विकल्पों से हट, परम समाधि लगाऊँ।
परमानंद पियूष पान कर, सब भव व्यथा मिटाऊँ।।
प्रभु ऐसी अब शक्ती दीजे, मन संक्लेश न होवे।
केवल ''ज्ञानमती'' भास्कर कर, मोह महातम खोवे।।7।।

–दोहा-

कुंडलगिरि के जिनभवन, अनुपम शाश्वत सिद्ध।
पुनः पुनः वंदन करुँ, पाऊं सौख्य समृद्ध।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीकुण्डलपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.47)

रुचकगिरि पूर्वदिक् जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छन्द–

वर द्वीप तेरहवां रुचकवर, बहुरुचिक विख्यात है।
इस मध्य वलयाकार सुंदर, रुचकवर नग ख्यात है।।
योजन चुरासी[1] सहस विस्तृत, तुंग भी इतना कहा।
पूरब दिशा के जिनभवन को, भक्तिवश पूजूँ यहां।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं–(मोहि राखो हो शरना.....)

सुरसरिता का मधुर सलिल ले, कनक कलश में भरना।
रुचकवराचल पूरबदिश में, जिनगृह पूजन करना।।
मैं आयो तुम शरणा, श्री स्वयंसिद्ध जिनराजजी..।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज केशर गंध सुगंधित, कनक कटोरी भरना।
रुचकवराचल पूरबदिश में, जिनगृह पूजन करना।।
मैं आयो तुम शरणा, श्री स्वयंसिद्ध जिनराजजी..।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. तिलोयपण्णत्ति।

उज्ज्वल तंदुल धोय अखंडित, पुंज चरण ढिग धरना।
रुचक वराचल पूरबदिश में, जिनगृह पूजन करना।।
मैं आयो तुम शरणा, श्री स्वयंसिद्ध जिनराजजी..।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंद कमल मचकुंद चमेली, ले आयो तुम चरणा।
रुचक वराचल पूरबदिश में, जिनगृह पूजन करना।।
मैं आयो तुम शरणा, श्री स्वयंसिद्ध जिनराजजी..।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोदक फेनी घेवर आदिक, कनक थाल में भरना।
रुचक वराचल पूरब दिश में, जिनगृह पूजन करना।।
मैं आयो तुम शरणा, श्री स्वयंसिद्ध जिनराजजी..।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक में कर्पूर जलाकर, अंतरंग तम हरना।
रुचक वराचल पूरब दिश में, जिनगृह पूजन करना।।
मैं आयो तुम शरणा, श्री स्वयंसिद्ध जिनराजजी..।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप सुगंधित अग्निपात्र में, खेवत ही अघ हरना।
रुचक वराचल पूरब दिश में, जिनगृह पूजन करना।।
मैं आयो तुम शरणा, श्री स्वयंसिद्ध जिनराजजी..।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल सेव कपित्थ[1] सुपारी, पूर्णथाल फल भरना।
रुचक वराचल पूरबदिश में, जिनगृह पूजन करना।।

1.कैथा ।

मैं आयो तुम शरणा, श्री स्वयंसिद्ध जिनराजजी..।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सलिल गंध अक्षत आदिक ले, अर्घ्य करूं जिन चरणा।
रुचक वराचल पूरबदिश में, जिनगृह पूजन करना।।
मैं आयो तुम शरणा, श्री स्वयंसिद्ध जिनराजजी..।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

जिनपद सरसिज माहिं, मैं जल से धारा करूँ।
भव जल को जल देय, परम शांति पाऊं सदा।।10।।शांतये शांतिधारा।

बेला जुही गुलाब, कुसुमांजलि अर्पण करूं।
आतम गुण की गंध, फैले चारों दिश विषे।।11।।दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथप्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

चिच्चेतन चिंतामणी, अनुपम सुख दातार।
पुष्पांजलि कर पूजहूं, मिले सर्वसुखसार।।1।।

इतिरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्स्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–गीता छन्द–

जो मुक्तिकन्या परिणयनहित[1] अतुल मंडप सम दिखे।
जिनवर जिनालय सासता, सुरगण जहां निज रस चखें।।
जल गंध आदिक अर्घ्य लेकर पूजते सब सुख मिले।
मनकामना सब पूर्ण हों, भविजन हृदय सरसिज खिले।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–ॐ ह्रीं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।

1. वरण करने के लिये।

जयमाला

–दोहा–

रुचकवराद्री[1], स्वर्णमय[2], महातीर्थ महनीय[3]।
गाऊँ जयमाला सुखद, महाताप हरणीय।।1।।

शम्भु छंद–(चाल-श्रीपति जिनवर.....)

वर द्वीप तेरवें के मधि में, स्वर्णाभ रुचकवर अद्री है।
योजन चौरासी सहस तुंग, इतना ही विस्तृत अद्री है।।
इस पे सु चवालिस दिव्य कूट, जिनका वर्णन है मन भाता।
पूरब दिश आठ सुकूट जहां, दिक्कन्याओं का नित वासा।।1।।

विजया विजयंत जयंता अरू, अपराजित नंदा नंदवती।
नंदोत्तर नंदीषेणा जिन, जन्मोत्सव में झारी धरती।।
दक्षिण दिश आठ कूट ऊपर, इच्छा रु समाहारा देवी।
सुप्रकीर्णा यशोधरा लक्ष्मी, अर शेषवती चित्रगुप्ता भी।।2।।

अष्टम है वसुन्धरा देवी, ये दिक्कन्यायें रहती हैं।
जिन जन्मकल्याणक में आकर, दर्पण को धारण करती हैं।।
पश्चिम के आठ कूट ऊपर, हैं इला सुरादेवी पृथिवी।
पद्मा अर इकनासा नवमी, सीता भद्रा आठों देवी।।3।।

जिनजन्मोत्सव में जिनमाता, के ऊपर छत्र लगाती हैं।
उत्तरदिश आठों कूटों की, दिक्कन्या चंवर ढुराती हैं।।
इन नाम अलंभूषा दूजी, मिश्रकेशि तथा पुंडरीकिणि हैं।
वारणी रु आशा सत्या ह्री, श्री देवी ये अतिरूपिणि हैं।।4।।

इन कूट वेदि के अभ्यंतर, उत्तर दिश के क्रम से जानो।
वर चार महाकूटों पे भी, दिक्कन्याओं को पहचानो।।
सौदामिनि कनका शत्तपदा, और कनकसुचित्रा रहती हैं।
जिन जन्मकल्याणक में ये सब, दशदिश को निर्मल करती हैं।।5।।

1. रुचकवर पर्वत। 2. सोने का। 3. पूज्य।

इन कूटों अभ्यंतर आगे, पूर्वादि दिशाओं के क्रम से।
चारों कूटों पे दिक्कन्या, रहती हैं अगणित वैभव से।।
रुचका औ रुचककीर्ति देवी, सुरुचककांता अरु रुचकप्रभा।
जिन भगवन् का ये जातकर्म, करती हैं भक्ती भरित शुभा।।6।।

इन चालिस कूटों की चालिस, देवी जिन जन्म कल्याणक में।
निजनिज परिवार विभव संयुत, बहु पुण्य कमाती हैं सच में।।
इन कूटों के अभ्यंतर में, श्री सिद्धकूट हैं चार कहे।
जो पूरब दक्षिण अपरोत्तर, चारों दिश मणिमय भास रहे।।7।।

इनपे शाश्वत जिनचैत्यालय, अकृत्रिम जिनवर प्रतिमायें।
जो पूजें ध्यावें भक्ति करें, उनको शिव मारग दर्शायें।।
मैं भी श्रद्धा से आकर के, जिनवर की पूजन करता हूं।
निज केवल ''ज्ञानमती'' हेतू, सब विघन करम को हरता हूँ।।8।।

–दोहा–

अचल रुचकवर पूर्वदिश, जिनवर भवन विशाल।
विघ्नहरण मंगलकरन, नमूं नमूं नत भाल।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.48)

रुचकगिरि दक्षिणदिक् जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–अडिल्ल छन्द–

अचल रुचकवर, शाश्वत अनुपम जानिये।
संसाराम्बुधितरण[1], जिहाज बखानिये।।
तापे दक्षिण दिश, जिनमंदिर सोहना।
आह्वानन कर जजूँ, भविक मन मोहना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–गीता छंद–

(चाल–सम्मेदगढ़ गिरनार.....)

चिरकाल से बहु प्यास लागी, नाथ अब तक ना बुझी।
इस हेतु जल से तुम चरण युग, जजन की मनसा जगी।।
पर्वत रुचकवर पर जिनालय, दक्षिणी दिश जानिये।
सब विघ्नहर जिनपद जजत, सर्वार्थसिद्धी मानिये।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवताप शीतल हेतु भगवन्! बहुत का शरणा लिया।
फिर भी न शीतलता मिली, अब गंध से पद पूजिया।।

1. संसार समुद्र से उतरने के लिए।

पर्वत रुचकवर पर जिनालय, दक्षिणी दिश जानिये।
सब विघ्नहर जिनपद जजत, सर्वार्थसिद्धी मानिये।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु बार मैं जन्मा मरा, अब तक न पाया पार है।
अक्षय सुपद के हेतु अक्षत, से जजूँ तुम सार है।।पर्वत. ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चंपा चमेली वकुल आदिक, पुष्प ले पूजा करूं।
कामारिविजयी[1] तुम जजत, निज आत्मगुण परिचय करूं।।पर्वत.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

यह भूख व्याधी पिंड लागी, किस विधी मैं छूटहूँ।
पकवान नानाविध लिये, इस हेतु ही तुम पूजहूँ।।पर्वत.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञानतम दृष्टी हरे निज ज्ञान होने दे नहीं।
इस हेतु दीपक से जजूँ, मन में उजेला हो सही।।पर्वत.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ये कर्मवैरी संग लागे, एक क्षण ना छोड़ते।
वर धूप अग्नी संग खेते, दूर से मुख मोड़ते।।पर्वत.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल मोक्ष की अभिलाष लागी, किस तरह अब पूर्ण हो।
इस हेतु फल से तुम जजूँ, सब विघ्न वैरी चूर्ण हों।।

1. कामदेव के विजेता।

पर्वतरुचकवर पर जिनालय, दक्षिणी दिश जानिये।
सब विघ्नहर जिनपद जजत, सर्वार्थसिद्धी मानिये।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अनमोल रत्नत्रय निधी की, मैं करूँ अब याचना।
तुम अर्घ्य लेकर पूजते ही, पूर्ण होगी कामना।।पर्वत.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

जिनपद सरसिज माहिं, मैं जल से धारा करूँ।
भव जल को जल देय, परम शांति पाऊं सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला जुही गुलाब, कुसुमांजलि अर्पण करूं।
आतम गुण की गंध, फैले चारों दिश विषै।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

ईप्सित फलदाता सदा, कल्पवृक्ष जिनधाम।
पुष्पांजलि कर पूजते, होय सफल सब काम।।1।।

इति श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्स्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

–गीता छंद–

मणिरत्न कंचन से जड़ित, शाश्वत जिनालय सोहता।
पर्वत रुचकवर के उपरि, दक्षिण दिशी मन मोहता।।
जल गंध आदिक अर्घ्य लेकर, पूजते निधियां मिलें।
मनकामना सब पूर्ण होकर, हृदय की कलियां खिलें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

इन्द्र चन्द्र धरणेन्द्र सुर, चक्रवर्ति से पूज्य।
त्रिभुवनतिलक जिनेन्द्र की, जयमाला जग पूज्य।।1।।

–रोलाछन्द–

जय जय श्री जिनदेव, त्रिभुवन शिखर विराजें।
जय जय तुम पद सेव, करत विघन अरि भाजें।।
जय जय मुनिगण नित्य, तुम पद ध्यान करे हैं।
जय जय भविजन नित्य, तुम गुणगान करे हैं।।1।।

मन से संचित पाप, करत उपद्रव भारी।
वचन जनित अघराशि, भव भव में दुखकारी।।
कायिक पाप विपाक, नाना त्रास करे हैं।
प्रभु तुम भक्ती एक, सब सन्ताप हरे हैं।।2।।

निर्धन हों धनवान, तुम पद आश्रय पाके।
निर्जन जन परिवार, पाते पुण्य कमाके।।
इष्ट वियोगज दुःख, उनको नाहिं सतावे।
ना अनिष्ट संयोग, सपने में भी आवे।।3।।

भीम भगंदर कुष्ट, कफ पित्तादिक व्याधी।
तुम भक्ती से नाथ! मिटती सर्व उपाधी।।
सिंह सरप गज व्याघ्र, हिंसक जंतु अपारे।
तुम पद आश्रय लेत, तजत क्रूरता सारे।।4।।

और अनेकों विघ्न, संकट दूर टरे हैं।
जिनवर चरण सरोज, इच्छित पूर्ण करे हैं।।
सुनकर प्रभु तुम कीर्ति, मैं शरणागत आयो।
''ज्ञानमती'', की पूर्ति, हेतू आश लगायो।।5।।

–दोहा–

ज्ञानभानु चिन्मूर्ति को, वंदन बारम्बार।
रोग शोक बाधा टले, भरे सौख्य भण्डार।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि दक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.49)

रुचकगिरि पश्चिमदिक् जिनालय पूजा

–अथस्थापना–दोहा–

रुचकवराद्री अपरदिश, जिनगृह मंगलरूप।
आह्वानन कर मैं जजूँ, स्वयंसिद्ध जिनरूप।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं–(चाल–नंदीश्वर पूजा)

सुरगंगा को जल लाय, जिनपद कंज[1] जजूँ।
भव भव की तृषा मिटाय, स्वातम स्वाद चखूँ।।
पश्चिमदिश में जिनधाम, रुचकवराद्री[2] पे।
पूजत होवे निजधाम, आतमज्योति दिपे।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंकुम कर्पूर मिलाय, जिनपद कंज जजूँ।
सब मन का क्लेश मिटाय, समरस भाव भजूँ।।पश्चिम.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. कमल। 2. रुचकवर पर्वत।

वर शुक्ल ध्यान सम श्वेत, अक्षत पुंज धरूँ।
उज्ज्वल आतम गुण हेत, तुम पद अर्च करूँ।।
पश्चिमदिश में जिनधाम, रुचकवराद्री पे।
पूजत होवे निजधाम, आतमज्योति दिपे।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

शतपत्र कमल कल्हार, सुमनों से पूजूं।
मदनारिजयी जगपूज्य, चरणों को पूजूं।।पश्चिम.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत शर्करयुत पकवान, तुम पद अर्प्य करूँ।
परमानंदामृत पान, करके मोक्ष वरूँ।।पश्चिम.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत दीपक की लौ पीत, जगमग ज्योति करे।
अंतर का भ्रम तम नाश, केवलज्योति करे।।पश्चिम.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सितचंदन अगरु कपूर, धूप जलाय दिया।
दुरितांजन करके दूर, निजसुख पाय लिया।।पश्चिमदिश. ।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम चिरौंजी पूग, फल से नित्य जजूँ।
सब कार्य सुफलकर नित्य, शिवपथ पूर्ण भजूँ।।पश्चिम.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सलिलादिक द्रव्य मिलाय, अर्घ्य बनाय लिया।
अनमोल दिव्य फल हेतु, नाथ चढ़ाय दिया।।
पश्चिमदिश में जिनधाम, रुचकवराद्री पे।
पूजत होवे निजधाम, आतमज्योति दिपे।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

जिनपद सरसिज माहिं, मैं जल से धारा करूँ।
भव जल को जल देय, परम शांति पाऊँ सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला जुही गुलाब, कुसुमांजलि अर्पण करूं।
आतम गुण की गंध, फैले चारों दिश विषे।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–दोहा–

जिनपूजा बस एकली, मुक्ती देन समर्थ।
पुष्पांजलि कर पूजते, क्यों न होय इष्टार्थ।।

इति श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्स्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

रुचकवराचल शाश्वत तापर, उत्तर दिश में जानो।
सिद्धकूट जिनमंदिर अनुपम, जिनवच से सरधानो।।
इक सौ आठ जिनेश्वर प्रतिमा, गर्भालय में राजें।
जो नित पूजें भक्ति भाव से, विघ्न कुलाचल भाजें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

अकृत्रिम जिनरूप को, वंदूँ प्रणमूं आज।
अकृत्रिम निजरूप को, लहूँ पूर्ण कर काज।।1।।

गीता छन्द–(सम्मेदगढ़ गिरनार.....)

जय जय जिनेश्वर धाम जग में, सर्व सुख कर्ता कहा।
जय जय स्वयंवर थान सच में, मुक्तिकन्या का कहा।।
जय जय वहां जिनभक्त को, नित सिद्धि कन्या चाहती।
जय जय वहां पर स्वर्गलक्ष्मी, भक्त के पग दाबती।।1।।

भगवन् तुम्हारी अर्चना, जब कर्म पर्वत चूरती।
फिर क्यों अनेकों विघ्न संकट, को न पल में चूरती।।
पूजा तुम्हारी हे प्रभो, जब मुक्तिलक्ष्मी दे सके।
फिर क्यों न भक्तों को तुरत, धन धान्य लक्ष्मी दे सके।।2।।

जब नाथ! तेरी भक्ति है, त्रैलोक्य संपतिदायिनी।
फिर क्यों न लौकिक संपदा, को दे सके वरदायिनी।।
जिन भक्ति भूचर नीरचर[1], के सब उपद्रव टालती।
आकाशचर के क्रूर ग्रह के, सर्व दोष निवारती।।3।।

यह भूत प्रेत पिशाच व्यंतर, के भयों को झट हरे।
यह शाकिनी औ डाकिनी, व्यंतरनियों के भय हरे।।
वन मेदिनी[2] के भीतिकर, उपसर्ग को संहारती।
संग्राम में अरिजीत से, जयश्री गले स्रज[3] डालती।।4।।

निन्दक पिशुन[4] जन दुष्ट मूर्खों, के उपद्रव टालती।
उपसर्ग निरवारे अनेकों, कष्ट को भी टालती।।
इस भक्ति के वश में हुआ, प्रभु तुम गुणों को गा रहा।
सब राग द्वेष निवारने, को तुम चरण अब ध्या रहा।।5।।

1. जलचर । 2. भूमि। 3. माला। 4. चुगलखोर।

करके कृपा निज भक्त पर, सब कामना को पूरिये।
भगवन्! अनादी मोह की, सब वासना को चूरिये।।
होवे निरंतर स्वात्म चिन्तन, भावना यह पूरिये।
बस अब मुझे इस लोक में, नहिं आवना हो पूरिये।।6।।

–दोहा–

रुचकवराचल अपरदिश, जिनगृह गुणमणिखान।
''ज्ञानमती'' लक्ष्मी भरो, करो सकल कल्याण।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.50)

रुचकगिरि उत्तरदिक् जिनालय पूजा

–अथस्थापना–गीता छंद–

सब इंद्रगण इंद्राणियों के, साथ जहं पे आवते।
परिवार वैभव भी असंख्यों, साथ में ही लावते।।
ऐसे रुचकवर अद्रि पे, उत्तरदिशी जिनधाम को।
जिनबिम्ब को भी पूजते, नहिं विघ्न आते नाम को।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–नरेन्द्र छंद–

सुरगंगा सम निर्मल जल ले, श्रीजिन पूज रचाऊँ।
स्वर्णखचित भृंगार नाल से, धारा तीन कराऊँ।।
रुचकवराचल उत्तरदिश में, जिनगृह नित्य जजूँ मैं।
शिवपथ के सब विघ्न टाल के, जिनपद शीघ्र भजूं मैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी केशर चंदन घिस, जिनपद पूज रचाऊँ।
कर्म कालिमा दूर भगाकर, चित्त प्रसन्न बनाऊँ।।रुचक.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चंद्रकिरण सम तंदुल उज्ज्वल, जिनपद पूजन आऊँ।
निज आतमगुण उज्ज्वल हेतू, सुंदर पुंज चढ़ाऊँ।।

रुचकवराचल उत्तरदिश में, जिनगृह नित्य जजूँ मैं।
शिवपथ के सब विघ्न टाल के, जिनपद शीघ्र भजूं मैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

विविध पुष्प मंदार मालिका, दशदिश गंध भरे हैं।
मदनजयी जिनपूजन करते, दशदिश सुयश भरे हैं।।रुचक.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अमृतपिंड सदृश उत्तम चरु, घ्राणनयन मनहारी।
क्षुधावेदनी दूर करन को, जिनपूजा विस्तारी।।रुचक.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नदीप सम ज्योति जलाकर, तुम पद पूज रचाऊँ।
मोहमहातम अंतर का हर, ज्योति अकंपित पाऊँ।।रुचक.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निपात्र में धूप खेवते, कर्म जले दुखकारी।
निजआतम निर्मल होते जन, पूर्ण सौख्य अधिकारी।।रुचक.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल सेब अनार फलों से, पूजत पुण्य भरे हैं।
अतिशय सहित पुण्य प्रकृति का, क्षण में बंध करे हैं।।रुचक.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उदक गंध अक्षत माला चरु, दीप धूप फल लाऊँ।
ताल मृदंग बजावत गावत, तुम पद अर्घ्य चढ़ाऊँ।।

रुचकवराचल उत्तरदिश में, जिनगृह नित्य जजूँ मैं।
शिवपथ के सब विघ्न टाल के, जिनपद शीघ्र भजूं मैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

जिनपद सरसिज माहिं, मैं जल से धारा करूँ।
भव जल को जल देय, परम शांति पाऊं सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला जुही गुलाब, कुसुमांजलि अर्पण करूं।
आतम गुण की गंध, फैले चारों दिश विषे।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथप्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

धर्मराज्य अधिपति प्रभो, धर्मचक्र करतार।
विघ्न अद्रि को वज्रसम, तुम पूजा हितकार।।1।।

इति श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्स्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–गीता छंद–

नित शचीपति[1] पूजित चरण, पंकज जिनेश्वर देव हैं।
ईप्सित[2] पदारथ हेतु भविजन, करें तुम पद सेव हैं।।
नग रुचकवर उत्तरदिशी, जिनगेह शाश्वत सोहना।
पूजूँ सदा कर अर्घ्य लेकर, मिले जिनपद मोहना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–*ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।

1. इन्द्र। 2. इच्छित।

जयमाला

–दोहा–

प्रभु अनंतमहिमा जलधि, लक्ष्मीपति जिनदेव।
तुम गुणमाला को कहूँ, करो अमंगल छेव।।1।।

(चाल–हे दीनबन्धु.....)

जै जै जिनेन्द्रबिंब सकल सिद्धि को करें।
जै जै जिनेन्द्रबिम्ब अतुल ऋद्धि को भरें।।
जै जै जिनेन्द्रबिम्ब परम सौख्य को करें।
जै जै जिनेन्द्रबिम्ब निखिल दोष को हरें।।1।।

चैतन्य चमत्काररूप चैत्य[1] कहाये।
चिंतित पदार्थ दान में चिंतामणी गाये।।
बिन याचते अनल्प फलों को सदा देवें।
वर कल्पवृक्ष के समान जन मुदा सेवें।।2।।

इस लोक के भरपूर सौख्य आप फले हैं।
परलोक में स्वर्गापवर्ग[2] शीघ्र मिले हैं।।
धन धान्य विपुल भोग भी मनवांछिते मिलें।
सुपुत्र मित्र अंगना संयोग हों भले।।3।।

राज्यादि संपदायें सभी आन मिले हैं।
सम्राट चक्रवर्ति का भी चक्र चले हैं।।
ये अभ्युदय समस्त स्वयं आ गले पड़े।
मैं पूर्व में मैं पूर्व में, कह कर के आ पड़े।।4।।

हे नाथ! आप पूजते ही कर्म सब टरें।
लौकिक अनंत संपदायें फिर न क्यों वरें।।
परमार्थ संपदायें जो अपूर्व कही हैं।
वे भी तुम्हारे भक्त पे आसक्त हुई हैं।।5।।

1. जिनबिम्ब। 2.अपवर्ग-मोक्ष।

सम्पूर्ण अमंगल विपत्ति व्याधि नशे हैं।
सम्पूर्ण विघ्न कर्म एक क्षण में नशे हैं।।
जो धर्म कार्य में ही, विघ्न आन के पड़े।
हे नाथ! कहो क्यों न वो तुम भक्ति से झड़े।।6।।

दर्शन विशुद्धि भावनादि संपदा मिलें।
जिनके प्रसाद से समस्त आपदा हिलें।।
निजचित्त में सद्ज्ञान की कलियाँ तुरत खिलें।
चारित्र पूर्ण देख शिवललना तुरत मिलें।।7।।

इस विध सुकीर्ति आपकी सुन पास में आया।
मैं द्रव्यहीन भक्ति सुमन साथ में लाया।।
करके कृपा जिनेन्द्र लाज राख लीजिये।
कैवल्य ''ज्ञानमती'' सिद्धि आज कीजिये।।8।।

–घत्ता–

जय जय जिनमूर्ती, गुणगणमूर्ती, शिवसुखपूर्ती तुरत करो।
जय सुखरत्नाकर, धर्म सुधाकर, ज्ञान दिवाकर उदित करो।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीरुचकवरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

बड़ी जयमाला

(चाल-हे दीनबन्धु.....)

जैवंत मूर्तिमंत जिनालय महान हैं।
जैवंत आदि अंत[1] शून्य गुण निधान हैं।।
जैवंत तेज में अपूर्व सूर्यकान्त हैं।
जैवंत शांतिसिंधु रूप चंद्रकान्त हैं।।1।।

जैवंत पंचमेरु के अस्सी जिनालया।
जैवंत नागदंत बीस जैन आलया।।
जैवंत जंबू आदि वृक्ष दश के जिनगृहा।
जैवंत हों वक्षारगिरि के अस्सि जिनगृहा।।2।।

जै रूप्यगिरी एक सौ सत्तर के जिनगृहा।
जै कुलगिरी हैं तीस के शुभ्भीस जिनगृहा।।
जै चार इष्वाकार के जिनगेह चार हैं।
जै मानुषोत्तराद्रि के जिनवेश्म चार हैं।।3।।

जै ढाई द्वीप के ये जिनालय सुशासते।
जै आठवें सुद्वीप नंदीश्वर के भासते।।
जै चार अंजनाद्रि सोल[2] दधिमुखाद्रि हैं।
जै रतिकरे बत्तीस भी जिनगेह अद्रि हैं।।4।।

जैवंत ये बावन जिनेन्द्रगेह गिरी पे।
जै ग्यारवें सुद्वीप में कुंडलगिरी दिपे।।
जै तेरवें सुद्वीप में रुचकाद्रि सुराजे।
जै दोनों पे सुचार चार भवन विराजे।।5।।

जैवंत चार शतक अठावन जिनालया।
जैवंत मुक्तिवल्लभा के कंत आलया।।

1. अनादि अनंत। 2. सोलह

जैवंत जैनधाम की महिमा अपार है।
जै इनको वंदना हमारी बारबार है।।6।।

उत्तम प्रमाण जिनगृहों का क्रम से बताया।
सौ योजनों लंबाई का प्रमाण है गाया।।
योजन पचास चौड़े हैं ये शास्त्र में कहा।
ऊँचे पचीस न्यून शतक योजनों रहा।।7।।

मेरू के भद्रसाल औ नंदन वनों के जो।
वर द्वीप नंदीश्वर के हैं बावन्न भवन जो।।
उत्कृष्ट ये इनका प्रमाण जानिये सदा।
इन जैनगृहों को हमारी वंदना मुदा।।8।।

मध्यम प्रमाण योजनों लंबे पचास के।
ऊँचे हैं साढ़े सैंतिस चौड़े पचीस के।।
वन सौमनस रुचकाद्रि औ कुंडलगिरी पे जो।
वक्षार इष्वाकार तथा कुलगिरी पे जो।।9।।

मनुजोत्तराद्रि पर भी कहे जैनधाम हैं।
मध्यम प्रमाण मान्य को मेरा प्रणाम है।।
मंदिर जघन्य मान हैं पांडुक उद्यान के।
मध्यम से अर्ध मानिये योजन सुजान के।।10।।

रूपाद्रि जंबू शाल्मली धातकी[2] आदी।
आयाम एक कोस है योजन ये अनादी।।
चौड़ाई अर्ध कोस पौन कोश ऊंचाई।
जिन आलयों को नित्य नमूँ शीश नमाई।।11।।

प्रत्येक जिनालय को बेढ़[3] तीन शाल हैं।
प्रत्येक कोट चार दिश में चार द्वार हैं।।

1. त्रिलोकसार के आधार से जिनालयों का वर्णन यहाँ किया गया है।
2. धातकी वृक्ष। 3.वेष्टित करके।

बीथी प्रतेक मानस्तंभ एक एक हैं।
प्रत्येक बीथियों में भी नव नव स्तूप हैं।।12।।

मणिकोट प्रथम अंतराल में वनी कही।
द्वितीय कोट अंतराल में ध्वजायें ही।।
तृतीय कोट बीच चैत्यभूमि कही हैं।
सिद्धार्थवृक्ष चैत्यवृक्ष युक्त मही हैं।।13।।

प्रतिसद्म[1] गर्भगेह कहे इक सौ आठ हैं।
प्रत्येक भवन मध्य तो मंडप सनाथ हैं।।
इन गर्भगेह मध्य सिंह पीठ सुराजें।
तिनमें जिनेन्द्रबिंब एक एक विराजें।।14।।

जिनमूर्तियों की वर्णना अद्भुत अपूर्व है।
वैडूर्य केश वज्रमयीदंत पूर्ण हैं।।
मूंगे समान ओष्ठ जैनबिंब के कहे।
कोंपल समान हाथ पैर तल विशेष हैं।।15।।

दशताल प्रमित लक्षणों से पूर्ण कहे हैं।
प्रत्यक्ष मानों देख रहे बोल रहे हैं।।
ये बिंब पांचशतक धनुष तुंग कहे हैं।
पद्मासनों से आसनों पे राज रहे हैं।।16।।

बत्तीसयुगल यक्ष चंवर ढोर रहे हैं।
एकेक गर्भगृह में सभी यक्ष कहे हैं।।
जिनपास में श्रीदेवी औ श्रुतदेवी कही हैं।
सर्वाण्ह औ सानत्कुमार यक्ष सही हैं।।17।।

इन देवि और यक्ष की हैं मूर्ति शासती[2]।
जिनमूर्तियों के पार्श्वभाग में हैं राजती।।
हैं आठ महामंगलीक द्रव्य बताये।
प्रत्येक वसू द्रव्य इक सौ आठ हैं गाये।।18।।

1. प्रत्येक जिनमंदिर। 2.अनादिनिधन।

भृंगार कलश वीजना दर्पण ध्वजा चंवर।
ठोना सुछत्र ये हैं आठ मंगलीक वर।।
स्वर्णादि पुष्पयुक्त देवछंद के आगे।
बत्तिस हजार स्वर्णमयी कलश सुराजें।।19।।

प्रधान द्वार दोनों पार्श्व भाग में गाये।
चौबिस हजार ज्वलित धूपघट हैं बताये।।
मालायें आठ सहस कहीं श्रेष्ठ मणिमयी।
चौबिस हजार मध्य में माला कनकमयी।।20।।

मुखमंडपों में हेमघट सोलह हजार हैं।
मालायें धूपघट भी तो सोलह हजार हैं।।
मणियों की मोतियों की बनीं क्षुद्र किंकणी।
इन किंकणी से युक्त मधुर घंटिका ध्वनी।।21।।

मंदिर के पूर्व द्वार की यह वर्णना कही।
दक्षिण तथा उत्तर में छोटे द्वार हैं सही।।
मालादि का प्रमाण अर्ध जानिये वहाँ।
मंदिर के पृष्ठ भाग में भी आइये तहाँ।।22।।

मालायें आठ सहस जो मणिमय लटक रहीं।
चौबिस हजार स्वर्ण की मालायें भी कहीं।।
मुखमंडपों के अग्र प्रेक्षामंडपादि हैं।
औ वन्दना अभिषेक के मंडप अनादि हैं।।23।।

क्रीड़ाभवन संगीतभवन गुणन[1] गृहादी।
नर्तनभवन विशाल चित्रभवन अनादी।।
मणिपीठ पे स्तूप वहां पद्मवेदियाँ।
प्रत्येक चार द्वार युक्त बार[2] वेदियाँ।।24।।

1. शास्त्राभ्यासगृह। 2.बारह।

इन रत्न के स्तूप में जिनबिम्ब विराजें।
अब और भी रचना सुनो स्तूप के आगे।।
मणिपीठ के मणिमय त्रिकोटयुक्त बताये।
सिद्धार्थ वृक्ष चैत्यवृक्ष नाम हैं गाये।।25।।

इन वृक्ष के स्कंध चार योजनों लंबे।
योजन सु एक चौड़े, मानों रत्न के खंभे।।
योजन द्विदश[1] की लंबि चार महाशाख हैं।
बहुतेक शाखायें लघू भूकाय सार्थ हैं।।26।।

योजन द्विदश विस्तार उपरि भाग वृक्ष का ।
फल फूल पत्र कोंपलादि रत्न निर्मिता।।
परिवार वृक्ष इनके बार वेदियों में हैं।
चालिस हजार इक सौ बीस एक लाख हैं।।27।।

सिद्धार्थतरु की पीठ पे हैं सिद्ध मूर्तियां।
सुचैत्यवृक्ष पीठ पे अरिहंत मूर्तियां।।
चउ दिश में चार चार ये विराजमान हैं।
प्रतिमा के अग्र भाग में बहुध्वज महान हैं।।28।।

प्रत्येक जिनभवन की चउ दिशाओं में कहीं।
जिनमें हैं चिन्ह दश प्रकार के कहे सही।।
मृगेन्द्र हस्ति वृषभ गरुड़ मोर शशि रवी।
वह हंस कमल चक्र चिन्ह भाषते कवी।।29।।

प्रत्येक चिन्ह की ध्वजायें इक सौ आठ हैं।
ध्वज मुख्य इन प्रत्येक की फिर इक सौ आठ हैं।।
सब मुख्य और क्षुद्र ध्वजा चार लाख हैं।
सत्तर हजार आठ सौ अस्सी प्रमाण हैं।।30।।

1. द्वादश ।

इन ध्वज के स्वर्ण खंभ सोल योजनों ऊंचे।
इक कोस चौड़े इनके अग्र रत्न के दीखें।।
नानावरण के रत्न ध्वजा रूप परिणमें।
वायू से हिलें मृदुल वस्त्ररूप परिणमें।।31।।

ध्वजपीठ के आगे भवन में चार द्रह[1] कहे।
इनके उभय में मणिमयी प्रासाद दो रहें।।
प्रासाद के आगे कहे तोरण सुमणिमयी।
स्रज[2] घंटिका सहित जिनेन्द्रबिंब मणिमयी।।32।।

पहले सुकोट अंतराल चार वन कहे।
अशोक सप्तपत्र चंप आम्र के रहें।।
उन वन में दश प्रकार कल्पवृक्ष हैं गाये।
प्रत्येक वन के मध्य चैत्यवृक्ष बताये।।33।।

वन भूमि निकट चौथि बीथि मध्य भाग में।
जिनबिंब मानथंभ के हैं अग्रभाग में।।
ये मानथंभ धर्म विभव युक्त कहे हैं।
भव्यों के मान हानने में ख्यात रहे हैं।।34।।

इत्यादि अतुल वर्णना को कौन कह सके।
शाश्वत जिनालयों का विभव कौन कह सके।।
गणधर भी आपको सदा असमर्थ मानते।
हैं चार ज्ञानधारी फिर भी हार मानते।।35।।

माँ भारती असंख्य जिह्वा धार यदि कहे।
तो भी विभूति जिनगृहों की पार ना लहे।।
मैं अज्ञमती फिर भला क्या वर्णना करूँ।
तुम भक्ति के वश बार बार वंदना करूँ।।36।।

1. सरोवर । 2. माला ।

हे नाथ! दीन जान दया दान दीजिये।
संपूर्ण भव व्यथा को शीघ्र हान कीजिये।।
निज पास में ही नाथ! अब स्थान दीजिये।
कैवल्य ''ज्ञानमती'' का ही दान दीजिये।।37।।

–दोहा–

तुम गुण गणमणिमालिका, धरे कंठ जो नित्य।
सो जन मनवांछित लहे, वरे अंगना सिद्ध।।38।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसम्बन्धि चतुःशताष्टपंचाशत् जिनचैत्यालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यो नमः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भक्ति श्रद्धा भाव से यह 'इन्द्रध्वज' पूजा करें।
नव निद्धि रिद्धि समृद्धि पा देवेन्द्र सुख पावें खरे।।
नित भोग मंगल सौख्य जग में, फेर शिवललना वरें।
जहं अंत नाहीं ''ज्ञानमति'' आनंद सुख झरना झरें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

अथ प्रशस्ति

–शम्भु छंद–

त्रिभुवन जनवंदित सिद्ध प्रभू, त्रिभुवन मस्तक पर राज रहे।
त्रिभुवन चूड़ामणि श्री जिनवर, वंदन करते सब पाप दहें।।
श्री पंचपरम गुरु वंदन कर, माँ सरस्वती का ध्यान करूँ।
श्रद्धा भक्ती से त्रिकरण युत, नत शीश सदैव प्रणाम करूँ।।1।।

श्री मूलसंघ में कुंदकुंद, आम्नाय सरस्वति गच्छ कहा।
विख्यात बलात्कार गण से, गुरु आम्नायों में मुख्य रहा।।
इसमें बहुते आचार्य हुए, उन सबको वंदन करती हूँ।
सब परम्परा आचार्यों का, नितप्रति अभिनंदन करती हूँ।।2।।

श्री देशभूषणाचार्य वर्य, बस आदी गुरू हमारे हैं।
गृहवासकूप से स्वयं हस्त अवलम्बन देकर तारे हैं।।
व्रत ग्यारह प्रतिमा के देकर क्षुल्लिका 'वीरमति' नाम दिया।
मैं बनी आर्यिका 'ज्ञानमती' जब वीरसिंधु की शरण लिया।।3।।

कलिकाल प्रभाव दलन पटुतम, आचार्य शांतिसागर माने।
उन पट्टसूरि संघाधिपती, गुरुवर्य वीरसागर माने।।
गुरु देव आर्यिकाव्रतदाता, है वंदन उनको बारबार।
वे तारण तरण भवोदधि से, मुझको भी करिये शीघ्र पार।।4।।

जिनकृपा प्रसाद हुई बुद्धी, जिनवच का किंचित् ज्ञान हुआ।
मिथ्यात्व अंधेरा भाग गया, प्रगटित रवि सम्यग्ज्ञान हुआ।।
वर अष्टसहस्री ग्रन्थराज, अनुवाद किया निज भाषा में।
अध्यात्म ग्रन्थ श्री नियमसार, जो कुंदकुंद की भाषा में।।5।।

तर्काब्धि लघीयस्त्रय उत्तम, जिसमें प्रमाणनय वरणा है।
अकलंकदेव की रचना है, गागर में सागर भरना है।।
कातंत्ररूपमाला सु सरल, व्याकरण अपूरब रचना है।
आस्रवत्रिभंगी भाव त्रिभंगिम, भाव संग्रह वर रचना है।।6।।

इन ग्रन्थों का अनुवाद किया, मैं अल्पबुद्धि निज भाषा में।
आगम आधार रचे मैंने, कुछ ग्रन्थ सु हिन्दी भाषा में।।
त्रिलोकभास्कर, न्यायसार, भगवन महावीर बने कैसे?।
चौबिस तीर्थंकर, बाहुबली, अर जैनभारती भी वैसे।।7।।

बाहूबलि, चन्द्रप्रभु स्तुति, वीरादि स्तुतियां रची सही।
सम्मेदशिखर वंदन त्रिलोक, औ उषा वंदना आदि कहीं।
श्री जम्बूद्वीप विधान आदि, रचनायें कई बनाई हैं।
आर्यिका रु बालविकास चार, ये रचना सब जन भायी हैं।।8।।

इन रचना में बस एकमात्र, जिनवर भक्ती ही कारण है।
अकृत्रिम जिनवर बिम्बों की भक्ती ही भवदधि तारण है।।
अतएव इन्द्रध्वज का विधान, अति चमत्कारि मन भाया है।
यह कहां इन्द्रध्वज पूजन विधि, फिर भी कुछ काव्य बनाया है।।9।।

कुरुजांगल, ग्राम खतौली में, श्री वीरप्रभू चैत्यालय में।
पच्चीस शतक दो वीर अब्द, कार्तिक वदि आमावस्या में।।
श्री वीरप्रभू निर्वाण समय, सुखदायी ऊषा बेला में।
अतिशायी ''इन्द्रध्वज विधान'' परिपूर्ण हुआ शुभ बेला में।।10।।

व्याकरण छन्द अरु अलंकार, कोषादि विषय का ज्ञान नहीं।
मंत्रादि विधान विधी शास्त्रों का, मुझको किंचित ज्ञान नहीं।।
फिर भी मैंने अतिसाहस कर, यह महाकार्य कर डाला है।
केवल भक्तीवश ही मैंने, यह महाकाव्य रच डाला है।।11।।

श्री विश्वभूषण योगी विरचित, संस्कृत विधान को मान्य किया।
उसको आधार बना करके, मैंने ''मौलिककृति'' काव्य किया।।
पुनरपि तिलोयपण्णत्ति आदि, ग्रंथों का बहु आधार लिया।
अल्पज्ञमती होकर के भी, यह अनुपम ग्रन्थ तैयार किया।।12।।

इसमें कुछ त्रुटी रही हो तो, विद्वज्जन अवलोकन कीजे।
श्रुतज्ञानी मुझसे अधिक मान्य, होवें तो संशोधन कीजे।।
सब पक्षपात, अरु राग द्वेष, ईर्ष्या मत्सर को तज करके।
श्रीमान् पाठ को करो पढ़ो, और सुनो महा श्रद्धा धरके।।13।।

–दोहा–

श्री इन्द्रध्वज पाठ को, करो करावो भव्य।
इन्द्रादिक सुख भोग के, पावो निज पद नव्य।।14।।

यावत् मेरू अचल का, जग में पुण्य निवास।
तावत् ''ज्ञानमती'' रचित, कृति यह लहे विकास।।15।।

सब जग में मंगल करे, हरे अमंगल दोष।
ऋद्धि सिद्धि सुख पूर्ण कर, करे भव्य मन तोष।।16।।

इन्द्रध्वज विधान की आरती

ॐ जय श्री सिद्ध प्रभो, स्वामी जय श्री सिद्ध प्रभो।
शत इन्द्रों से वंदित, त्रिभुवन पूज्य विभो।।ॐ जय...।।1।।

भूत भविष्यत् संप्रति, त्रैकालीक कहे।स्वामी.....
नरलोकोद्भव सिद्धा, नंतानंत रहें।।ॐ जय...।।2।।

मध्यलोक के शाश्वत, मणिमय अभिरामा।स्वामी.....
चार शतक अट्ठावन, अविचल जिन धामा।।ॐ जय...।।3।।

सब में जिनवर प्रतिमा, इक सौ आठ कही।स्वामी.....
सिद्धन की है उपमा, अनुपम रत्नमयी।।ॐ जय...।।4।।

कनकमयी सिंहासन, अद्भुत कांति भरें।स्वामी.....
जिन मूरति पद्मासन, राजे शांति धरें।।ॐ जय...।।5।।

तीन छत्र हैं शिर पर, चौंसठ चंवर ढुरें।स्वामी.....
भामंडल द्युति अद्भुत, सूरज कांति हरे।।ॐ जय...।।6।।

इन्द्र सभी मिल करके, पूजा भक्ति करें।स्वामी.....
जिनमंदिर के ऊपर, ध्वज आरोप करें।।ॐ जय...।।7।।

इसी हेतु इन्द्रध्वज, पूजन है सार्थक। स्वामी.....
जो करते श्रद्धा से, पाते शिवमारग।।ॐ जय...।।8।

हम सब भी मिल करके, आरति नित्य करें।स्वामी....
''ज्ञानमती'' ज्योती से, तम अज्ञान हरें।।ॐ जय...।।9।।

इन्द्रध्वज विधान (भजन)

श्री इन्द्रध्वज का पाठ, इन्द्रशत ठाठ, करें मन लाके
अरहंत सिद्ध आराधें।

तेरह द्वीपों में जा करके,
जिन चैत्यों का वंदन करके।
चउशत अट्ठावन चैत्यालय वहाँ राजे,
अरहंत सिद्ध आराधें।

द्वीपों की अनुपम छवि लखके,
आकाशगमन ऋद्धी वर के।
जाते खेचर ऋषिगण भी हर्ष मनाके,
अरहंत सिद्ध आराधें।

शत इन्द्र वन्दना करते हैं,
नित जय जयकार उचरते हैं।
जिनभवनों पर सौधर्म ध्वजा फहराते,
अरहंत सिद्ध आराधें।

जो पाठ करें श्रद्धा रुचि से,
मनवांछित फल सिद्धी करते।
इक दिन पावें निर्वाण बसें शिव जाके,
अरहंत सिद्ध आराधें।

अरहंत सिद्ध की शरण गहें,
मम कंठ अकुन्ठित बना रहे।
''चंदना'' आश चरणों में शीश नवा के,
अरहंत सिद्ध आराधें।

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की पूजन

रचयित्री - आर्यिका चंदनामती

–स्थापना –

पूजन करो जी-

श्री गणिनी ज्ञानमती माताजी की, पूजन करो जी।
जिनकी पूजन करने से, अज्ञान तिमिर नश जाता है।
जिनकी दिव्य देशना से, शुभ ज्ञान हृदय बस जाता है।।
उनके श्री चरणों में, आह्वानन स्थापन करते हैं।
सन्निधीकरण विधीपूर्वक, पुष्पांजलि अर्पित करते हैं।।
पुष्पांजलि अर्पित करते हैं।.....

पूजन करो जी,

श्री गणिनी ज्ञानमती माताजी की पूजन करो जी।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मातः ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मातः ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मातः! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अष्टक –

ज्ञानमती जी नाम तुम्हारा, ज्ञान सरित अवगाहन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।
मुझ अज्ञानी ने माँ जबसे, तेरी छाया पाई है।
तब से दुनिया की कोई छवि, मुझको लुभा न पाई है।।
ज्ञानामृत जल पीने हेतू, तव पद में मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।1।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन और सुगंधित गंधों, की वसुधा पर कमी नहीं।
लेकिन तेरी ज्ञान सुगन्धी, से सुरभित है आज मही।।
उसी ज्ञान की सौरभ लेने, को आतुर मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।2।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के नश्वर वैभव से, मैंने शाश्वत सुख था चाहा।
पर तेरे उपदेशों से, वैराग्य हृदय मेरे भाया।।
अक्षय सुख के लिए मुझे, तेरा प्रवचन ही साधन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।3।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कामदेव ने निज बाणों से, जब युग को था ग्रसित किया।
तुमने अपनी कोमल काया, लघुवय में ही तपा दिया।।
इसीलिए तव पद में आकर, शान्त हुआ मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।4।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मानव सुन्दर पकवानों से, अपनी क्षुधा मिटाते हैं।
लेकिन उनके द्वारा भी नहिं, भूख मिटा वे पाते हैं।।
आत्मा की संतृप्ति हेतु, तव वाणी मेरा भोजन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।5।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युत के दीपों से जग ने, गृह अंधेर मिटाया है।
ज्ञान का दीपक लेकर तुमने, अन्तरंग चमकाया है।।

घृत का दीपक लेकर माता, हम करते तव प्रणमन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।6।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने ही अब तक मुझको, यह भव भ्रमण कराया है।
तुमने उन कर्मों से लड़कर, त्याग मार्ग अपनाया है।।
धूप जलाकर तेरे सम्मुख, हम करते तव पूजन हैं।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।7।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कितने खट्टे मीठे फल को, मैंने अब तक खाया है।
तुमने माँ जिनवाणी का, अनमोल ज्ञानफल खाया है।।
तव पूजनफल ज्ञाननिधी, मिल जावे यह मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।8।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा

पिच्छि कमण्डलुधारी माता, नमन तुम्हें हम करते हैं।
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर, अर्घ्य समर्पण करते हैं।।
युग की पहली ज्ञानमती के, चरणों में अभिवन्दन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेर मन भी पावन है।।9।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

शेरछंद – **हे माँ तू ज्ञान गंग की पवित्र धार है।**
तेरे समक्ष गंगा की लहरें बेकार हैं।।
उस धार की कुछ बूँदों से जलधार मैं करूँ।
वह ज्ञान नीर मैं हृदय के पात्र में भरूँ।।

शांतये शांतिधारा।

स्याद्वाद अनेकान्त के उद्यान में माता।
बहुविध के पुष्प खिले तेरे ज्ञान में माता।।

कतिपय उन्हीं पुष्पों से मैं पुष्पांजलि करूँ।
उस ज्ञानवाटिका में ज्ञान की कली बनूँ।।

दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

जयमाला

–दोहा –

ज्ञानमती को नित नमूँ, ज्ञान कली खिल जाय।
ज्ञानज्योति की चमक में, जीवन मम मिल जाय।।

धुन –नागिन-मेरा मन डोले.....।

हे बालसती, माँ ज्ञानमती, हम आए तेरे द्वार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।
शरद पूर्णिमा दिन था सुन्दर, तुम धरती पर आईं।
सन् उन्निस सौ चौंतिस में माँ, मोहिनि जी हर्षाईं।।माता...।।
थे पिता धन्य, नगरी भी धन्य, मैना के इस अवतार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।।
बाल्यकाल से ही मैना के, मन वैराग्य समाया।
तोड़ जगत के बंधन सारे,छोड़ी ममता माया।।माता....।।
गुरु संग मिला, अवलम्ब मिला, पग बढ़े मुक्ति के द्वार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।2।।
शान्तिसिन्धु की प्रथम शिष्यता, वीरसिन्धु ने पाई।
उनकी शिष्या ज्ञानमती जी ने ,ज्ञान की ज्योति जलाई।।माता....।।
शिवरागी की, वैरागी की, ले दीप सुमन का थाल रे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।3।।
माता तुम आशीर्वाद से, जम्बूद्वीप बना है।
हस्तिनापुर की पुण्यधरा पर, कैसा अलख जगा है।।माता....।।
ज्ञान ज्योति चली, जग भ्रमण करी, तेरे ही ज्ञान आधार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।4।।
तीर्थ अयोध्या, मांगीतुंगी का विकास करवाया।
फिर प्रयाग में तपस्थली का, नूतन तीर्थ बनाया।।माता.....।।

प्रभु समवसरण, रथ हुआ भ्रमण, श्री ऋषभदेव के नाम का,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।5।।
कुण्डलपुर तीरथ विकास की, नई प्रेरणा आई।
महावीर की जन्मभूमि में, अगणित खुशियाँ छाईं।।माता...।।
महावीर ज्योति, रथ से उद्योत, कर दिया पुनः संसार को,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।6।।
तीर्थंकर की जन्मभूमियों, का विकास करवाया।
पार्श्वनाथ के उत्सव का फिर, तुमने बिगुल बजाया।।माता.....।।
संदेश दिया, उपदेश दिया, भावना हुई साकार है,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।7।।
यथा नाम गुण भी हैं वैसे, तुम हो ज्ञान की दाता।
तुम चरणों में आकर के हर, जनमानस हर्षाता।।माता....।।
साहित्य सृजन, श्रुत में ही रमण, कर चलीं स्वात्म विश्राम पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।8।।
गणिनी माता के चरणों में, यही याचना करते ।
कहे ''चन्दनामती'' ज्ञान की , सरिता मुझमें भर दे।।माता.....।।
ज्ञानदाता की, जगमाता की, वन्दना करूँ शतबार मैं,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।9।।

दोहा – लोहे को सोना करे, पारस जग विख्यात।
तुम जग को पारस करो, स्वयं ज्ञानमती मात।।10।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

– शंभुछंद –

जो गणिनी ज्ञानमती माता की, करें सदापूजा रुचि से।
वे ज्ञानामृत से निज मन को, पावन कर अभिसिंचित करते।।
इस शरदपूर्णिमा के चन्दा की, ज्ञानरश्मियाँ बढ़ें सदा।
''चन्दनामती'' युग युग तक यह, आलोक जगत को मिले सदा।।

।। इत्याशीर्वादः, पुष्पांजलिः ।।